
निधि प्रकाशन
1590 मदरसा रोड
कश्मीरी गेट दिल्ली-110006

शेष दृश्य

आशापूर्णा देवी



निधि प्रकाशन

मूल्य 35 00
संस्करण प्रथम, 1986
मूल लेखिका आशापूर्णा देवी
अनुवादक डॉ० माहेश्वर
प्रकाशक निधि प्रकाशन
1590 मदरसा रोड
कश्मीरी गेट
दिल्ली 110006
मुद्रक ए० पी० प्रिंटस द्वारा सविता प्रिंटस
शाहदरा दिल्ली 32

SHESH DRISHYA (Novel) Written by Asha Purna Devi
Rs 35 00

शेष दृश्य

कई दिनो से हाथ पर हाथ धरे बैठे हैं कौशिक राय। कुछ भी सूझ नही रहा है। दिमाग मे कोई प्लाट नही उभर रहा है।

उधर टेलीफोन द्वारा, चिट्ठी द्वारा, आदमी के हाथ चिट्ठी भेज कर प्रकाशक तगादे पर तगादे कर रहे है। क्या हुआ अब कितनी देर है?

प्रसिद्ध लेखक कौशिक राय के दिमाग म एक जो धुधला सा कथानक झूल रहा है। उसी के भरोसे वह प्रकाशको को बहलाते फुसलाते जा रहे हैं —"बस भाई, दो चार दिन की मोहलत दो। बस, घसीट कर दे दूगा।"

मगर दिमाग है कि कालापर्दा डाल कर बैठा?

आखिरकार खाली घडे से ही पानी ढालने का निणय किया कौशिक राय ने। कलम का हाथ लगाया ही था कि उनका दोस्त वेदात दनदनाता हुआ कमरे मे घुस आया। जिस तरह दनदनाता हुआ वह आया था उसी तरह धम्म स बैठकर वह बाल उठा, ओह! वही असह्य दृश्य! तली के बैल की तरह सिर नीचा किये कलम के कोल्हू म खामखा क्या क्या फेरते जा रहे हो। तेरी यह सनक कब जायेगी बता तो? अरे भाई, तू क्या भूखो मर रहा है? बाप दादा की सपत्ति पडी है। थोडा आराम कर।'

वेदात की इन बातो से कौशिक राय चौंके नही, न ही नाराज हुए। वे इन बातो के आदी थे। इसी तरह दनदनाते हुए आना, अकारण जोर से बैठना, फिर, उनके लेखन को लेकर उनका उपहास करना—यह वेदात की आदत है।

और कौशिक राय के बाप दादे उसके लिए कोई बडी सम्पत्ति छोड

गये हैं यह भी वेदात की अपनी मौलिक कल्पना है। बल्कि यह बात कौशिक के बदले वेदात पर ही लागू होती है।

कौशिक राय ने कलम को परे रख दिया। और कोई रास्ता न था। अब वह कुछ लिख नही सकेगा यह तय था।

उन्होंने कुर्सी का मुह वेदात की तरफ कर लिया।

'मेरी यह सनक चली जाय तो तुझे क्या फायदा होगा?"

सेंट—परसेंट फायदा है। कमरे मे घुसते ही दिमाग खराब करने वाला दृश्य तो नहीं देखना पडेगा।"

"इसमे तेरा दिमाग खराब होने वाली क्या चीज है"

'है क्यो नही? मित्र के पास मित्र क्यो आता है? बोल, क्यो आता है? दो चार सुख दुख की बातें करने के लिए। दुख—विपत्ति मे परामर्श लेने के लिए। है कि नही?"

कौशिक राय की भौह थोडा ऊपर चढ गयी, बोले, "दुख विपत्ति वाली क्या बात हुई?"

वेदात का चेहरा नयी बहू की तरह शर्म से गुलाबी हो उठा। फिर बोला "विपत्ति न कह कर परेशानी भी कह सकते हो। मैं फिर झमेले म पड गया हू।"

"आह। फिर कृष्णलीला शुरू हो गयी है। अभागे, रास्कल, तूने तो कहा था कि उस नाटक का अंतिम दृश्य तू देख चुका है। अब इस जीवन मे क्या कुछ नही करेगा।'

"हा, कहा तो था। वेदात का चेहरा थोडा और गुलाबी हुआ। फिर वह बोला, "क्या करू भाई फिर फस गया। बुरी तरह फस गया।"

'और उसी बारे मे परामर्श लेने आया है। क्या? निकल यहा से।"

'ठीक है निकल जाऊगा दोपहर को भाभी के हाथ का मजेदार खाना खा कर थोडा आराम करने के बाद शाम की चाय लेकर चला जाऊगा, बस।"

"असह्य। इसे लेकर कितनी बार कर चुका तू यह तमाशा?'

"मैं क्या इसका हिसाब रखता हू ? हर बार तुझे बताया तो है।"

'तो क्या तू समझता है मैं तेरे सब कारनामो का हिसाब रखता हू ?"

"रख तो सकता है दिन रात कलम दावात लेकर गणेश जी की तरह बैठा रहता हैं।"

"कलम-दावात क्या इसीलिए होती है ? इतनी बार यह काड करके भी तेरा क्या बिगडा है ? अच्छा—खासा फिट-फाट बैठा है । ओह ! पिछली बार इतनी परेशानी उठाने के बाद फिर तू ? पिछली बार तूने कान पकडे थे, याद है न।"

"हा याद तो है। पता नही कब से कान मलता आ रहा हू।"

कौशिक राय ने सिगरेट सुलगायी।

वेदात सिगरेट नही पीता।

"तेरी उमर कितनी है ?" कश खीचकर कौशिक राय ने पूछा।

'तू तो जानता ही है। तेर से एक डेढ़ महीने छोटा या बडा जो समझ ले। बाकी बातें याद रखने की जिम्मेवारी मैंने तुझपर छोड दी है।'

'तेरे जैसे बेहया की कोई जिम्मेवारी मैं नही ले सकता' सिगरेट के कई कश लेकर कौशिक राय ने कहा। उसकी आवाज बहुत सख्त थी।

वदात पर कोइ असर नहीं हुआ।

उसका स्वरआईस क्रीम की तरह मीठा और ठडा था। चेहरे पर कातरता "तेरी कसम कौशिक ! तू साला मेरा उस वक्त का दोस्त है जब हम दोनो नगे घूमते थे। तू अब ऐसा करेगा मेरे साथ ?"

"हर चीज की एक हद होनी है।'

'क्या करू यार। मेरी किस्मत ही ऐसी है। तू साला सब मजे मे घर खा रहा है। तू ता लेखक है मगर किसी जमाने म मा—बाप न जिस लडकी का हाथ तुझे थमा दिया उमी के साथ बैठा आज तक जुगाली कर रहा है। पर क्या पता था कि मधु क घडे की तरफ जैस मधुमक्खी भागती है वसे ही सुदर से सुदर लडकिया उस वेदात बागची की तरफ भागेंगी।"

"अपनी सुन्दरता का घमण्ड दिखा रहा है।' कौशिक राय ने एक

और सिगरेट घराते हुए। कहा फिर चुपचाप थोडी देर धुआ उडाता रहा।

"क्या रे कौशिक, साला तू पैसे खच करके कैंसर खरीदना चाहता है ?"

"मतलब ? ओहो हो ? तू सिगरेट की बात कर रहा है। अब तो तेरी भाभी की चख चख के कारण बहुत कमकर दिया। कहती है इससे अच्छा है तुम ड्रिंक करो। और लेखक भी तो करते हैं। इसमे कैंसर का डर नही है। मैंने कोशिश भी की थी, मगर चली नहीं अपने से ? गले के नीचे उतारते ही लगा, कलेजा जल गया। सिर घूमने लगा। डाक्टर ने कहा—शराब से तुम्हे एलर्जी है।"

"क्या तुझे शौकिया शराब पीने को कहती हैं ?"

"शौकिया नहीं। उनकी सखिया के पति लोग जैसे थोडी थोडी शौकिया लेते हैं वैसे ही वह भी चाहती हैं मगर वह मुझे सूट ही नही करता, क्या करूं ?"

"इसलिए तू लगातार सिगरेट फूकता जायेगा यह भी तो कोई बात नही हुई ?'

कौशिक राय हँसे, "क्या करूं ! एक को खत्म करते ही दूसरी के लिए मन करने लगता है। खैर छोड ! कसर ता एक बार ही होगा, बार-बार नहीं।'

"हू, मेरा मज़ाक उडा रहा है।'

' अच्छा बोल, इस बार का क्या केस है ?

वदात अपनी कुर्सी म हिल डुल कर थोडी देर कुछ सोचता रहा। फिर बोला, ' इस बार का मामला थोडा ज्यादा ही पचीदा है।'

किस बार तेरा मामला पेंचीदा नही था यह ता अभी तक समझ ही नही पाया मैं। नौ-दस बरस की उमर से ही ता तुम एक के बाद एक जटिलताए पैदा करते जा रहे हो। तभी से हीरो बने हुए हो।"

कौशिक की बात म कोई अतिशयोक्ति न थी। वदात सचमुच नौ बरस की उमर से ही स्त्रियो के फेर म पड गया था।

बहुत बडे घर का लडका है वदात। बहुत बड़ी आलीशान कोठी है इसके पूवजा की बनवायी हुई कोठी म हमेशा ही भीड भाड रहता है। बाल बच्चा मे से कौन, कहा क्या कर रहा है—इसकी भी खबर रखन वाला कोई न था। इस बारे मे भी किसी को खबर न हुई कि बडी जेठानी के जिस लडके की नई नई शादी हुई थी उसकी वहू को वह नौ साल का बच्चा प्रेम करन लगा था।

शायद वशाख—जेठ मे व्याह हुआ था। लडके का मानिग स्कूल चल रहा था। फिर गर्मियो की छुट्टिया हो गयी। अवसर अनन्त था। पढने-बढने की बात खत्म। हो वक की कापी बापी पता नही कहा फेंकी गयी। वेदात नाम का वह कामदेव जसा सुदर नौ बरस का छोकरा रात दिन नई बहू से सटा बैठा रहता।

बहू जो भी करती— चाहे वह बैठी होती, बिना वजह हिलती डुलती होती, गीले बाल सुखा रही होती या सिर्फ जम्हाई ले रही होती—उस बालक का सभी कुछ अच्छा लगता, सभी बाता पर वह मुग्ध होता। नयी बहू के शब्दा और पाव की उगलिया भी जैसे उसे परम आश्चर्य की चीज लगती।

"तुम्हारी उगलिया कितनी सुन्दर हैं! तुम नाखन काटती हो? तुम्हारे नाखून कौन काटता है? तुम खुद काट लेती हो? मैं नही काट पाता तुम्हारे बाल जरा छुकर देखू? तुम्ह अमिया अच्छी लगती है। लाऊँ तुम्हारे लिए?"

कहते-कहत ही वह दौड पडता और कच्चे आम लेकर हाजिर होता। उसके चेहर पर विजय गव हाता।

"छोटी दीदी काट काट कर खा रही थी समभी। मैंने कहा मुझे दो ज्यादा सा दो, नही तो मैं छोटे चाचा को बता दूगा कि तुम्ह खासी आ रही है फिर भी तुम कच्चा आम खा रही हो बस वह डर गई और ढेर सारी अमिया मुझे दे दो। लो, खाओ।"

चेहरे पर सफलता की मुस्कान और अपनी चालाकी पर थोडा सा गर्व

थी। जितनी बातें कर रहा था उससे ज्यादा हाफ रहा था।

देवदूत की तरह सुन्दर चेहरे वाले और मोतियों की माला की तरह चमकते दांतों वाले उस अपरूप बालक की इन आदाओं से नहीं बहू भी कम मुग्ध नहीं थी। अतएव मुट्ठी भर अमिया के कारण कितनी वास्तविक खुशी उसे हो सकती थी उससे दस गुणा ज्यादा का नाट्य करती हुई कहती, 'ओ इतनी अमिया ! चलो बैठकर खाते हैं।"

"मैं नहीं, मैं नहीं सब तुम्ही खाओ।'

"नहीं यह नहीं हो सकता कितनी मेहनत से तुम लाये हो।

'तो क्या ! तुम्ही खाओ, तुम्हें अच्छा लगता है।'

'अच्छा लगता है फिर भी इतना ज्यादा तो नहीं खा सकती, मुझे भी खांसी हो गई तो ?"

सिर्फ कच्ची अमिया ही नहीं, उस बालक के प्रेम निवेदन के और भी कई माध्यम थे जैसे पीले अमरूद काली काली जामुनें और भुने हुए भुट्टे। और भी कितनी ही तरह की अल्लम गल्लम चीजें।

नयी बहू उससे कहती, "तुम यह सब क्या लाते हो ? इतनी चीजें भला मैं कैसे खा सकती हूँ ?"

क्या नहीं खा सकती ? तुम्ही तो कहती थी कि ब्याह के पहले अपने बाप के घर तुम दिन भर अपनी छोटी बहन के साथ ये ही सब खाती रहती थी ?"

इसी तरह की बातें उन दोनों के बीच होती थी। उस प्रेमी बालक से और कौन-सा प्रेमालाप सम्भव ही था। हर क्षण वह छाया की तरह नयी बहू के पीछे घूमता और इसी तरह के अनगल प्रश्न करता। नयी बहू के प्रति उसके मन में अनन्त कौतूहल था। ब्याह के पहले नयी बहू का जीवन कैसे बीता था यह जान लेना उस बालक के लिए क्यों इतना जरूरी था यह तो वही जाने।

और भी कितने ही प्रश्न वह नयी बहू से करता रहता। पूछता, 'तुम से ब्याह करने के बाद ही बड़े भाई साहब बंगलोर चले गये। बहुत दिनों

के बाद आयेंगे तो क्या तुम पहचान लोगी ? बड़े भाई साहब के साथ इतने कम दिनों की जान-पहचान है तुम्हारी, फिर भी इतनी मोटी मोटी चिट्ठिया जो तुम्हें लिखते हैं उनमें क्या लिखते हैं ? अपने दफ्तर के काम के बारे में ?"

नयी बहू का चेहरा धूमिल देखकर पूछता, "आज तुम इतनी उदास क्या हो ? तुम्हें अपने बाप का घर याद आ रहा है न ? बुआजी ने तुम्हें धमकाया तो नहीं ? बुढ़िया बड़ी शैतान है हमेशा किसी न किसी को डांटती धमकाती रहती है।'

'कोई बात नहीं, बड़ों को जवाब नहीं देते। बुआजी बड़ी हैं, बड़ी हैं न।" बहू कहती तो वह बोल पड़ता, "बड़ी है तो क्या हुआ ? शैतान को शैतान न कहूँ ? लो, अब तुम अपने बाप के घर जा रही हो ? कब आओगी परसों ? बाप रे ! मैं दो दिन तक क्या करूँगा ? हां, खेलूंगा तो सही, पर दो दिनों तक तुम्हें देख नहीं पाऊंगा न।"

"अरे बाप रे ! तुम अकेली इतना पान लगाओगी ? तीन चार थाल भर कर अकेली कराओगी ? तो पागल हो जाओगी। पहले तो छोटी दीदी, मँझली दीदी और छोटी मौसी सभी मिलकर पान लगाती थीं। और तुम अकेली यह सब कर पाओगी।"

(बात ठीक ही है। उस परिवार में पान लगाने के काम में तीन चार लोगों को हाथ लगाना पड़ता था। मगर अब की बात और है। नईबहू को पान लगाने, बिस्तर बिछाने और सूखे कपड़े तहाने के अलावा और क्या काम दिया जा सकता है ? अगर ज्यादा दुलार दिखा कर उसे खाली बिठा दिया जाय तो, वह दिन भर बैठी-बैठी पति को चिट्ठियां ही लिखती रह जायेगी।)

"ए मैं तुम्हारी मदद करूं ? वाह, क्यों नहीं कर सकता ? कितनी ही बार मैं छोटी दीदी की मदद करता रहा हूं। छोटी दीदी कहती थी, तू इन पानों में इलायची डालता जा। सभी में डालना, नहीं तो डांट पड़ेगी, समझा ? मैं सुपारी और इलायची डालूं ? बुआ जी कितनी दुष्ट हैं

देखा तुमने? रोज कहता हूँ मैं बच्चों के साथ पढ़ने नहीं जाऊँगा। नई भाभी के साथ बाद में जाऊँगा पर मानती ही नहीं, पाले, या ले करती रहती है। फिर कहती है, 'तेरा स्कूल खुल जायगा तो क्या करेगा?' बहुत बुरा लगता है मुझे। अच्छा बताओ तो, तुम्हारी मां आती हैं तो सिर्फ मां, बड़ी मां और दादी के साथ ही क्या खुसर-पुसर करती रहती हैं? तुमको उनके साथ गप करने का मन नहीं करता। इस कमरे में लाकर सिटकनी लगाकर खूब खूब बातें करने का मन नहीं करता?"

बातें बातें और बातें। बातों का एक अपार समुद्र लहराता हुआ। नई बहू को भी उसके साथ बहुत बालना पड़ता।

एक दिन बहुत उदास होकर बालक ने कहा, "मेरे पास पैसे नहीं हैं नहीं तो फुचके छोले, मटर लाकर तुम्हें खिलाता। मुझे कोई पैसे ही नहीं देता।'

नई बहू मन ही मन जवाब देती, 'मेरी किस्मत अच्छी है, तुम्हारे हाथ में पैसे नहीं हैं नहीं तो मेरी जिन्दगी अजीब न कर देते तुम। जितनी चीजें तुम लाते हो उसी का पता चल जाय तो मेरी मुश्किल हो जाय। इससे ज्यादा करने पर कहीं पता चल जाय तो मुंह दिखाना भी मुश्किल होगा।'

ऊपर से कहती, "ब्याह के पहले अपनी छोटी बहिन के साथ खूब खायी हैं ये सब चीजें। अब खाने को मन ही नहीं करता।'

'मन नहीं करता।"

"हां, जरा भी नहीं।'

"ओह! तुम लोगों की कितनी मुश्किल है मतलब औरतों की बात कर रहा हूं। अपना घर छोड़ कर दूसरे के घर आना वहां पर बस काम ही करना और डांट खाना।'

नई बहू सिहर उठती। दबे गले से कहती, 'धत ऐसी बातें नहीं करते लोग सुनेंगे तो मेरी बदनामी करेंगे।"

"लोगों की बात छोड़ो। लोग तो कुछ भी करो बदनामी ही करते हैं।'

हर वक्त बातें ही बातें और इसी तरह की बातें।

नई बहू का दिल कांपता रहता। अगर यह लडका छोटे [illegible] की तरह नाक से मेरा बहाता, मैला—कुचैला, बदसूरत होता तो नई बहू रिस्क लेकर भी उसे अपने पास फटकने देती इसमे सन्देह था। शायद कोई बहाना बनाकर उसे भगा देती। मगर देवदूत की तरह सुदर इस बालक के स्नेह का एक एक बात मे प्रमाण पाकर उसे भगाने का न तो मन ही कर रहा था और न कोई बहाना ही ढूढे मिल रहा था वरन वह बालक बहाने बहाने से उसके और निकट ही आता जा रहा था।

"पोस्ट बाक्स म चिट्ठी डाल आओगे ?"

"जरूर। दो—चिट्ठी दो।"

"आज तो सुखेन को दे दिया डालने को। कल दूगी तुम्हे डालने को।"

नई बहू के पत्र दो जगह जाते है—बाप के घर और बगलोर। दोनो का मोटा करीब-करीब भापा हुआ है ? भला इतनी जल्दी जल्दी बाप के घर चिट्ठी डालने का क्या मतलब ? इससे ससुराल मे मन नही जमता। और पति को इतनी चिट्ठिया लिखने की ही क्या जरूरत है ? आफिस का करेगा या बहू की चिट्ठियो का जवाब लिखता रहेगा।

इन्ही आलोचनाओ से बचने के लिए नई बहू ने रास्ता निकाला है। वह सुखेन से चोरी चोरी चिट्ठिया पोस्ट करती है। इस काम के लिए एक और सोम निकल आये तो बुरा क्या है ?

"तुम चिट्ठिया डालोगे कैसे ? इतने छोटे जो हो ?"

"क्यो, पजो के बल खड़ा होकर डालूगा।"

"पजो पर खड़े होकर ? कही गिर गये तो ? लोग मुझे डाटेंगे।"

"कोई जानेगा ही कैसे ? मैं तो छिप कर डालने जाऊगा।"

"अरे ! अरे ! छिप कर क्यो ? तुम तो ।"

नई बहू सिहर कर सोचती बच्चे के मन मे यह कैसा दुर्भाव मैं भर रही हू।

देवदूत की तरह निर्दोष को कोमल चेहरे पर प्रौढ मुसकान लाकर बालक कहता, "मैं क्या समझता नही। सुमेन भाजी चिट्ठी डालने जाता है तो बुआजी के कमरे म पहले झाककर छुप कर जाता है। मैं क्या नही जानता ?

तो ठीक है ! देवदूत को ही षडयन्त्र मे शामिल कर लिया जाय।

घर की दीवार से सटे मकान के पडासी लडके कूशे ने एक दिन देवदूत को रोका, "क्या रे बेन्ना, खेलने क्या नही आता ? गरमी की छुट्टिया तो अब खत्म होने वाली है।'

वेदा ने अपने चेहरे को करुण बना कर कहा, ' क्या करू बोल। घर मे नई भाभी अकेली हैं। उनके साथ रहना पडता है।"

अकली ? तेरे घर म इतने सारे लोग है।"

"इतने सारे लोग हैं तो क्या हुआ ? कोई उससे प्यार थोडा ही करता है अकेले म रोती है। मैं पकड लेता हू तो झूठमूठ कहती है भाई बहनो की याद आ रही है।'

' झूठमूठ क्यो ? इनकी याद आ भी तो सकती है ?"

"हा आ तो सकती है। मगर वह रुलाई और तरह की होती है। वह तो घर वालो की डाट खाकर रोती है।'

"तुझे कैसे पता ?"

"मैं सब समझता हू।" और देवदूत की मोतियो की लडी चमक उठती है।

"मगर क्या हर समय औरतो के बाच रहना अच्छा लगता है ?" कूशे पूछता है।'

"इसमे औरतो के बीच रहने की क्या बात है ? तुझे पता नही नई भाभी कितनी अच्छी है इन बुढियो की तरह थाडा ही हैं।'

नौ वष का प्रेमी और अठारह वष की प्रिया।

यह भी दुनिया मे कोई विश्वास कर सकता है, यह बात नौ वरसवाले

की तो क्या अठ्ठारह बरस वाली की भी कल्पना के बाहर थी। अतएव वे निश्चित थे। समझ नही पाये थे कि यह दुनिया मामूली चीज नही है। उन्हे पता ही न चला कि इस निश्चिन्तता के नेपथ्य मे तिल-तिल करके कौन सी जहरीली गैस जमा हो रही थी। उन्हे सिर्फ इतना ही पता था कि बुआ जी 'शैतान, हैं।

यह क्या गजब है? घर मे इतने लडके लडकिया है, सिर्फ एक के साथ यह हरदम गुन गुन' 'फुस फुस' किस बात की? उस छोकरे के अलावा सूडा का और कोई पाटनर ही नही मिलता इसे? छोकरा भी एकदम शैतान की आत है। इसी उमर मे पक्का हो गया है। बहिनो के साथ तो कभी उसका इतना प्रेम नही देखने म आया। कुछ गडबड है।

साफ माफ तो कोई नही कहता कि इसमे क्या बुराई या गडबड है पर बर्दाश्त नही हो रहा था उनसे। और घर की दण्ड नायक के बुआजी, जिनके लिए वैसे तो वेदा के ताऊ भी नाबालिग थे, की सहनशक्ति तो एकदम शून्य थी। इसलिए एक दिन बुआ जी का विस्फोट हुआ जस किसी ने उस जहरीली गैस मे दियासलाई की जलती सीली छुआ दी हो।

बस बुआजी न जो देखा था वह एक सुन्दर पवित्र दृश्य ही था।

नई बहून एक दिन वेदा से कहा था, ' दिन रात इतनी गप बाजी भी ठीक नही है। तुम्हे कुछ लिखना पढना नही है।'

खिले हुए फूल पर जसे धूप की आच पडी हो।

' अभी तो छुट्टिया हैं।"

' तीन दिन बाद ही तो स्कूल खुलने वाला है। थोडी पढाइ लिखाई शुरू करो अब।'

' अच्छा बाबा, जाता हू पढने। बस?"

कह कर वेदा न दौड लगाई और दूसरे ही पल एक फटी जिल्द वाली किताब लेकर हाजिर हुआ और जोर जोर से पढने लगा।

'छोटे छोटे तारे उगते आसमान की छत पर,
सिर के उपर आँखे झपकाते है।
अधकार रजनी म।।"

'यह क्या तुम्हारी अपनी किताब है?"

"नहीं, यह... मतलब यह तो पुटकी की किताब है। मेरी एक भी किताब मिल नहीं रही है। इसीलिए...।"

कि अचानक पीछे से विस्फोट हुआ।

बुआ जी की कांसकी फटी थाली जैसी आवाज आयी, 'किताब मिलगी कसे? दुनिया में और कुछ भी है इसका सुने टाइम भी है? किताब मापी तो गयी जहन्नुम में। बाप रे! बलिश्त भर का लौंडा और पेट में दाढ़ी।'

"लौंडा बोल रही है मुझे।"

लौंडा नहीं तो क्या दूधमुंहा बच्चा कहूं? अभागा। मुंह नोंचा कहीं का। सब समय इस धींगरी की वह में खिसनी की तरह क्यों चिपका रहता है तू? और यह तुम्हें भी तो कुछ लाज हया सीख कर अपने आप के यहां से आना चाहिए था। इस डांटे से बच्चे को खा क्या 'आं... आं... आं... आं...।

भयंकर शोरगुल, चीख पुकार, रोना—धाना थमने पर वेदा के लँगोटिया यार कूशे ने उससे पूछा, "अरे! सुना है तूने अपनी बुआ का गला दबा दिया था?"

वेदा का मुस्कराता देवदूत जैसा चेहरा विकराल हो उठा पलक झँपकते, 'दबाऊँगा नहीं। ठीक ही किया मैंने। बुढ़िया क्या भाभी के बारे में बुरी बात कह रही थी?'

इस उग्रमूर्ति की तरह अवाक होकर देखते हुए कूशे ने फिर कहा, "अगर मर जाती?

तो क्या होता? मुझे फांसी होती न? मैं मरने से नहीं डरता।

कूशे का मुंह और भी खुल गया। अभी तक वह वेदा को बोदा ही समझता था। कौन सा महामन्त्र पढ़ कर यह इतना निर्भय वीर हो उठा।

ऊपर वाले भी अवाक हुए थे। मगर उनका पटन अलग था। उनके

पैटन के अनुसार बागची कोठी के वेदान्त नामक देवदूत जैसे अपरूप बालक को सावेकी कोठी की दालान में माप कर सात हाथ जमीन पर नाक रगड़नी पड़ी थी और अपने दोनों कान पकड़ कर आधा घंटा तक घुड़दौड़ करनी पड़ी थी।

किसी के मन में उसके लिए एक-कण भी सहानुभूति का नहीं उपजा था, वरन् छोटी दीदी ऐंड कम्पनी खिक खिक हँस पड़ी थी।

यह पहला अटैक था।

उसको दूसरा अटैक हुआ तेरह साल की आयु में।

इस बार की प्रेमिका उससे उमर में ज्यादा बड़ी नहीं थी। सिर्फ साल भर बड़ी थी। वेदा के मामा के किरायदारों की लड़की थी। मा-बाप मर चुके थे। चाचा चाची पाल रहे थे। इस तरह की एक लावारिस लड़की के पालने पोसने को बाध्य होने पर कौन उसका दाम वसूल नहीं करना चाहेगा? दुनिया अभी स्वर्गोपम नहीं हुई है।

लेकिन बागची कोठी के उस देवदूत (अभी मूछें नहीं आई थी, इसलिए देवदूत बना हुआ था।) के मन में वह स्वर्गीय चेतना थी। इसीलिए उस लड़की का कष्ट देखकर, उसे बरतन माजते, पोछा लगाते, कपड़े धोते देखकर गुस्से और दुख से वह कातर हो उठा।

फिर भी उसे यह सब देखना पड़ रहा था। वह मामा के यहा दो दिन घूमने फिरने नहीं आया था। वार्षिक परीक्षा के पहले उसके घर चेचक निकल आयी किसी को। उस संक्रामक रोग से बचने के लिए वह मामा के घर आया हुआ था। समय सीमा पार होने पर ही वह घर वापिस जा सकता था।

मगर उसकी किस्मत ऐसी खराब थी कि रोग समाप्त होने के बजाय परिवार के एक दो और बच्चों को हो गया। इसलिए जो उसकी पकड़ के बाहर था उसे बाहर ही रहने दिया गया और मामा का घर उसी शहर में था—जिससे परीक्षा देने में कोई बाधा न थी। सीधा हिसाब था, पर

कौन यह जानता था कि एक देवी माता की कृपा से बचकर वह दूसरी देवी के खप्पर मे पड जायेगा।

परीक्षा की पढाई करते हुए वेदा देवी के खप्पर म पढने खुद गया। उस लडकी का देखकर पूछना, "एइ, एइ, तेरा नाम क्या है? बोलती क्या नही? बहरी है क्या? या गूगी है? सुनाई नही दे रहा है? क्या नाम है तेरा?"

'कूटी'

'कूटी कैसा नाम है? कूटी का क्या मतलब हुआ?'

मतलब नही मालुम। मा कूटू कहती थी, ये लाग कूटी कहते है।"

अच्छा। तुमे नीचा दिखाने के लिए तेरा नाम विगाड दिया। ये लोग तेरे क्या लगते हैं?"

'चाचा—चाची।"

"सगे?"

"हा।'

'ये लोग इतने कजूस क्यो हैं? तू इतनी छोटी है फिर भी तेरे से सब काम करवाते है? माई नही रख सकत?'

'पहले थी। छोड गयी है।"

"छोड गयी है नही छुडा दिया है इन्होने। तेरे से करवाने के लिए।"

'तुमको इन बाता से क्या मतलब?"

'वाह! मतलब क्यो नही है? देखता हू दिन-रात तू गधी की तरह खपती रहती है और व आराम फरमाते है। ऊपर से तुझे डाटते डपटते भी रहते हैं।

तो क्या हुआ? तुम यह सब मत बोला करा। सुन लेंग तो मरी शामत आ जायगी।

कह कर कूटी उसका मुह ताकन लगी। शायद सोचने लगी थी कि यह देवदूत किस स्वगलोक से उतरा है उसकी रक्षा के लिए।

'कल स इतना नही खटेगी, समझी?

"नही खटूगी । कमाल है ।"

"क्या ? कमाल क्या है इसम ? कहना "मैं क्या आदमी नहीं ? तुम लोगो को भगवान ने हाथ-पाव नही दिये हैं क्यो ?'

परिचय की सीढिया लाघ कर वेदा धीरे धीरे आगे बढता गया ।

"अरे ! इतनी बडी लडकी स्कूल भी नही जाती ? अरे ! अरे ! तू तो रोने ही लगी । आखिर मैंने ऐसा क्या कह दिया तुझे । यही तो कहा कि इतनी बडी लडकी स्कूल भी नही जाती । ठीक है, बाबा, अब नही कहूगा । तू चुप कर ।"

"तुमने तो मेरा भला सोचकर ही कहा है ।"

"तो फिर जाती क्यो नही पढने ? तेरी बहिन तो जाती है ?"

मैं स्कूल जाऊ गी तो यह सब काम कौन करेगा ?"

"इसीलिए तू स्कूल नही जायेगी, अनपढ होकर रहेगी ? क्या तेरी चाची कुछ काम धाम नही कर सकती ? तू खाना भी पकायगी, बतन-बासन, कपडे लत्ते भी धोयगी, बाजार भी जायगी—सब समय सिफ काम काम और कुछ भी नही ? खटते खटते मर जाना चाहती है ?"

"मर जाती तो छुट्टी मिलती । तुम मेरे साथ क्यों आ रहे हो ?"

वेदा उसके साथ साथ जाता है ।

बाजार भेजते हैं यह तो अच्छी बात है । तभी तो बाहर की दुनिया का मुह देखने को मिलता है । और वेदान्त जैसे अच्छे दिल के लडके से अपने दिल की बातें कह पाती है ।

"तुम जाओ तो । मेरे साथ साथ क्यो आ रहे हो ?"

'मेरी मरजी । क्या सडक तेरी खरीदी हुई है ?'

"ठीक है । तुम फुटपाथ पर से जाओ ।

'तेरा हुकुमी गुलाम हू क्या ? मेरी जिधर से मरजी होगी, उधर से जाऊगा समझी ?"

"ठीक है । फिर से बात मत करना ।"

"तेरे से बात न करू । ओह ! मैं बात करता हू तो तेरे मा बुरा लगता है, गुस्सा लगता है । ठीक है । पहले ही बता देती ।"

"बुद्ध की तरह बात मत करो । मैंने कहा कहा कि मुझे गुस्सा लगता है ? इसलिए कह रही हू कि कोई देखेगा तो निन्दा करेगा ।"

वेदान्त एक पल को ठिठक जाता है । चार साल पहले मापकर सात हाथ तक नाक रगडने की घटना याद आ जाती है ।

हा ठीक ही तो कहती है । दुनिया है ही ऐसी । खुद निष्ठुर रहेगी और कोई दया माया करे ता उसे ।

फिर बोला, "पता है । लोग ऐसे ही पाजी है । ठीक है, होने दो । मैं कहे दे रहा हू—घर जाकर तू बोल 'स्कूल जाऊ गी ।' तूने कहा था न एक दिन कि पाचवी तक पढ़ी है तू ?'

'पढ तो रही थी, पर यहा आने पर फीस जमा नही हुई, इसलिए नाम कट गया ।"

"फीस जमा क्या नही हुई ?" अत्यत उत्तेजित होकर पूछा वेदान्त बागची ने ।

'कल से तू हगर स्ट्राइक करेगी ? समझी ? भूख हडताल ?"

कुटी के सावले हड्डियाये चेहरे पर एक निद्रूप हास्य फल गया, "इस मे उनका क्या नुकसान है ? तुम क्या समझते हो मेरे भूख हडताल से वे दुखी होगे ! बरन वे तो खुश होगे कि चलो खाना बचा ।'

'ओह ! इतने पिचास क्यो है रे य लोग ?"

'भगवान जान । ओह । तुम बहुत देर करा देत हो बाता ही बाता मे । चाची न हल्दी और चीनी तुरत मगवायी थी ।"

'एइ खबरदार ! अभी घर मत जाना । कहना सिनमा म बहुत भीड थी । टिक खरीदने म वक्त लगा । वह मा ब्टी मजे म सिनेमा देखेंगी और टिक्ट तू लन जायगी ? वाह ! आ, चल ।'

'कहा जाना है ?'

"चल उधर फुचकावाला है?"

"तो क्या करूँ?"

"चल, फुचके खायेंगे, मेरे पास पैसे हैं।"

"है तो है। रास्ते मे कितने ही लोग जा रहे हैं जिनके पास पैसे हैं। तो इससे मुझे क्या?"

"अच्छा, तो मैं राह चलतो के बराबर हो गया? ठीक है। समझ गया तू शुरू से ही ।"

और वेदान्त तेजी स एक ओर चल पडा।

मजबूर होकर कूटी को लोकलज्जा त्याग कर उसके पीछे दौडना पडा, "अरे! सुनो तो? क्या, कर क्या रहे हो? बात तो सुनो। ओह! क्या गुस्सा है लाट साहब को हँसी मजाक भी नही समझते। रुको न? तुमसे एक बात करनी है। रुक जाओ, तुम्हारे हाथ जोडती हू।"

सडक मे खडे होकर फुचके खाना ठीक नही है। कोई देख ले और कूटी की चचेरी बहिन को बोल दे तो मुश्किल। और सारे मोहल्ले की लडकिया उसकी सहेली हैं। एक ही स्कूल मे सारी पढती हैं।

इसलिए पार्क मे बेंचपर बैठकर फुचका के साथ इमली का पानी पीते हुए देवदूत अपना प्रसन्न मुँह पोछकर बोला, "रोज यही आया कर। तुझे खूब खिलाऊगा। मै रोज ही आता हू, जो मरजी खरीदकर खाता हू। मामा के घर रहता हू इसलिए पिताजी पसे दे जाते हैं। दोनो मिलकर खायेंगे।"

अचानक कूटी अपने क्षीण चेहरे पर व्यग्यपूर्ण हँसी लाकर बोली, तू तो मुझसे छोटा है। तेरे पसो से खाना ठीक होगा क्या?'

"अच्छा। मैं छोटा हूँ। तो तू अपने को बहुत बडी समझती है?'

"और नही तो क्या? मैं तेरे से पूरा एक साल बडी हूँ। समझा?"

उम्र और स्वभाव की दीनता के कारण कूटी अभी तक अपने स एक चप छोटे (पूरे एक बालिश्त ऊचे) लडके को तुम कहकर ही बात कर रही

थी (हालाकि लडके ने सबोधन म ही उसे तू कहना शुरू कर दिया था।) आज अचानक कूटी ने उसे तू कहा और खुलकर हसती रही।

इस प्रकार वेदात नामक उस नरम दिल वाले लडके का दिल थोडा और नरम हुआ।

'ओह एक बरस की बडी नही हो गयी तो जाने कौन सी महारानी हो गयी ? देख बताये देता हू तुझे रोज यहा आना है घर म तुझे कितना खाने को देते हैं यह मैं खूब जानता हूँ। मैं अपनी छत से देख रहा था उस दिन तेरा चाचा एक लिफाफे म भरकर कचौडिया ले आया तुझे एक थमा कर बाकी सब वे हडप गये तुम मु ह ताकती रह गयी।"

"मुझ से ज्यादा खाया ही नही जाता अरे तेरी परीक्षा है न ? इतना समय क्यो बबाद कर रहा है ?'

"अरे धत्त। परीक्षा है तो क्या दिन भर पढता ही रहू ? देखना मेरा रिजल्ट खराब नही होगा, फस्ट नही तो सेकेंड जरूर आऊ गा। मेरा दोस्त हरेन है न वह क्लास मे फस्ट आता हैं और मैं सेकेंड। कभी कभी इसका उल्टा भी हो जाता है।

'अरे सुन, तू हमेशा फटी फ्राक क्या पहनी रहती है ? तुझे बाहर निकलने मे शम नही आती ? लो ये तो रोने हो लग गयी, तेरी, तरी जैसी रोनी लडकी मैंने नही देखी। इसमे रोने की क्या बात है ? समझ गया कि म लोग तेरे लिए नया फ्रॉक नहीं खरीदते। मैं एक दिन तेरी मा बोलूगा।'

"क्या बोलोगे ?'

"बोलूगा—अपने घर की लडकी को इस तरह फटे हाल घर से बाहर जाने देने म आप लोगो को शरम नही आती ? देखकर लगता है कि कोई मजदूरिनी है।'

'खबरदार ! तुम यह सब कुछ नही कहोगे तुम क्या मेरा खून सुखाना चाहत हो ?'

"क्या कहा ? इतनी सी बात के लिए व तेरा खून कर देंगे ?"

'व भले न करें, मुझे खुद ही करना होगा।"

इसके बाद थोडी देर दोनों चुप रहे, फिर अचानक वेदा बोला—"तुझे बड़ा दुःख है जब तक तेरी शादी नहीं हो जाती तब तक तुझे सुख शांति नहीं मिलेगी।"

"शादी ! ही ही ही। मेरी शादी हा हो-हा।"

"क्या ? यही हाल पर तेरी शादी नहीं होगी क्या ?'

'मेरी जैसी काली कलूटी से कौन शादी करने आयगा ? मेरे माँ बाप भी नहीं हैं, पैसे भी नहीं है।

'तेरी चाची की लड़की तो तुझ से भी गयी गुजरी है। तू क्या समझती है, उसकी शादी नहीं होगी ?'

"उसकी बात और है। चाचा ढेर सारा रुपया खर्च करके उसके लिए वर ढूंढ लेंगे।'

वेदा फिर थोडी देर चुप रहा। फिर एकाएक बोला—"काश ! मैं जल्दी से बड़ा हो जाता तो ढेर सारे रुपये कमाकर तेरी शादी कर देता।"

सामाजिक जीवन में बुआओं की जो पोजीशन होती है वह मामियों की तो नहीं होती। हां, अगर कोई अनाथ असहाय गले पड़ा भांजा हो तो बात और है। मगर वेदा तो संपत्तिशाली बहनोई का राजा जैसा लाडला बेटा था। किसी बहाने वह मामा-मामी के यहाँ रह रहा था इसी को वे अपना अहो भाग्य समझ रहे थे। मगर कुछ बातें ऐसी होती है जो कोई भी सह नहीं पाता इसलिए एक दिन मामी ने भी मुंह खोला। निश्चय ही उनकी स्टाइल बुआ की स्टाइल से अलग थी मगर चीज दोनों की एक ही थी।

'बेटा, अगर कोई अपनी चाकरी को जो भी करे तो तुम उसमें क्या कर सकते हो ? किरायेदार लोग अपनी बेटी की मांग काटें जितना चाहे काम लें उनकी अपनी बात है, तुम्हें इससे क्या ? जरा से बच्चे हो अभी

से हीरो बनोगे तो कैसे काम चलेगा ? दूसरे की लडकी को लेकर तुम पार्क मे जाते हो उसे चीजे खिलाते हो, उसे घर वालो के खिलाफ भडकाते हो ये कोई अच्छी बात है ?"

"वेदा के चेहरे पर अभी भी बालको जैसी कोमलता है मगर कद काठी बागची कोठी के अनुरूप मर्दों जैसा हो रहा है इसलिए अब उसे गुस्सा आता है तब वह बच्चो जैसा नही लगता। और बातें तो उसकी राम राम।

वेदा बोला—"और ये लोग बडे अच्छे हैं ? क्या ? मामी, तुम्हे पता है उन लोगों ने उस लडकी के स्कूल की फ़ीस तक नही भरी। इसीलिए उसका नाम कट गया।"

"ये वो जाने।"

"कमाल है। वह लडकी लिखेगी पढेगी नही तो बाद मे उसकी कितनी दुदशा होगी तुम्हे पता है ? जानती हो उस छोटी सी लडकी से वे कितना कितना काम कराते है ? ऊपर से दिन-रात गालियाँ देते हैं। उनकी अपनी लडकी भी उसी की उमर की है जानती हो वह क्या करती है ! सिर्फ नाचते नाचते स्कूल जायेगी और घर मे आकर बस्ता पटक देगी। तुम्हे पता है कि कुटी अगर उसके कपडा पर प्रेस न करे और उसके जूते पोलिश करके न रखे तो वह हगामा कर देती है। कोई उससे पूछे कि तू सारा दिन घूमती रहती है खुद अपने कपडे प्रेस नही कर सकती, अपने जूते म पोलिश नही लगा सकती ? तुम्ही बताओ मामी, ये बातें सुनकर क्या दुख नही होता।"

मामी न उदास स्वर मे कहा "दुख हो भी तो हम क्या कर सकते हैं। हमें बालने का हक क्या है ?"

वेदा त इस पर खूब उत्तेजित हो गया। ऊची आवाज मे बोला "अगर कोई किसी पर अत्याचार करे तो उसका विरोध करना हर आदमी का हक है। हमारे हेडमास्टर साहब ने कहा है कि अगर कोई पशु पर भी अत्याचार कर तो कानूनन उसे सजा हो सकती है।"

मामी ने मुसकुरा कर कहा "अच्छा ! ऐसी बात है क्या ? मुझे तो

यह सब मालूम ही न था, मगर एक बात जानती हूँ औरतो पर अत्याचार करने पर कोई सजा नही मिलती है।"

"अरे ! तुम हँस रही हो ? देखता हू सभी एक जैसे हैं ! किसी के मन म दया माया नही है।"

मायी ने बडी मुश्किल से अपनी हँसी को रोक कर कहा, "शायद तुम ठीक कहते हो मगर तुम जबसे उस लडकी पर दया माया दिखाने लगे हो, तबसे उसकी दुदशा और बढ गयी है ?" इतना जानती हूँ।

"क्या मतलब ?"

"मतलब यह कि घर से निकल कर बाहर देर तक रुकने और मुहल्ले के भाजे के साथ इधर-उधर फिरने और गप करने की बात जान कर उस के चाचा ने उस पर खूब गुस्सा किया। कहा अगर मुहल्ले का भांजा न होकर कोई लडका होता तो दिखा देता।"

"वाह रे ! क्या दिखा देते ? उसकी तो कोई गलती नही है। मैं ही जोर देकर उसे बिठा रखता हू। जानता हू घर मे दुबारा घुसते ही वहीं गधो की तरह खटती और ऊपर से सबकी गालियाँ।"

'बेटा तुमने तो अपना महत्व दिखाया, उसे रोक रखा। मगर लडकी के साथ बाद म क्या बीतता है पता है ? उसे तो उन्ही के हाथो जीना-मरना है। सुना है एक दिन उसके चाचा ने उसकी पिटाई की है।"

"ऐं ! पिटाई की ?"

"हाँ, ऐसा ही तो सुनती हू। उसे धमकाया है कि अगर फिर कभी तूने उस लक्का कबूतर छोकरे से बातचीत की तो ।"

"मुझे लक्का कबूतर कहा ? छोकरा कहा ?"

'हाँ कहा है देख न कितना असभ्य है वह आदमी। जानता है और क्या कहा उसने ? कहा कि उसकी उमर अठारह साल है। नीचे के क्लास मे पढता है, इसीलिए उमर कम बताता है।"

'ये सब बातें कही उसने।"

"हाँ, कहा है। हम लोगो को सुना कर ही कहा है, कितना असभ्य है

वह आदमी !" मामी ने करुण स्वर में कहा।

'अच्छा अभी ठीक करता हूं उसे। सारी अकड़ बाहर निकाल दूंगा।'

उसका बालसुलभ चेहरा कठोर हो उठा।

"यह लो! तू भला क्या करेगा? तू जरा सा लड़का है वह पूरा ऊंचा आदमी है। बड़ा खूंखार लगता है।"

'जरा सा लड़का हूं तो क्या अपमान सह लूं? खूंखार है तो मैं कम खूंखार नहीं हूं। निकलने दो बाहर, देखता हूं।'

मामी ने डर कर मामा को बताया।

मगर मामा भांजे को बुलाकर कोई उपदेश देते इसके पहले ही वह खूंखार सज्जन बाजार से वापसी के समय गली में केले के छिलके पर पांव पड़ जाने से चारों खाना चित् हो कर हस्पताल पहुंच गये।

एक हाथ में उनके बैंगन, मूली आलू, साग का ऊपर तक ठूंसा थैला था, दूसरे हाथ में मछली का थैला और रबर की चप्पल के नीचे केले का छिलका इन तीनों के संयोग से वह घटना या दुर्घटना घटी, जिसमें उनके दोनों घुटने बेकार हो गये।

आकस्मिक सड़क दुर्घटना कोई नई चीज नहीं है। दुर्घटना का उपकरण तो निमित्त मात्र होता है। ऐसा तो हरदम होता रहता है। फिर भी इस अत्यन्त स्वाभाविक घटना के पीछे छिपी दुर्घटना के नायक का लोगों ने पता लगा लिया।

फलस्वरूप बागची कोठी में चेचक का प्रकोप पूरी तरह शांत होने के पहले ही बेदांत को मामा के घर से वापिस जाना पड़ा। इस बार की सजा सुनाई उसके ताऊ ने "इस लड़के को खंबे से बांधकर चाबुक लगानी चाहिए।" पिता ने कहा, "अब कभी तुमने मामा के घर की तरफ कदम रखा तो देखना क्या करता हूं।" मां ने रोकर कहा, "पता नहीं पिछले जनम में क्या पाप किया था कि मेरी कोख से ऐसा कुलच्छनी लड़का पैदा हुआ।"

"तुम लोगों ने जान पहचाना इसे। मैं तो कब की जान गयी थी।"

बुआ ने कहा।

जिसके जो भी मन मे आया, कहा। तेरह साल के लडके ने प्रम के लिए आदमी का खून करने से भी परहेज न करे ऐसी बात तो कभी सुनी नही गयी। इसलिए इस मामले म तरह-तरह की मौलिक उद्भावनाएँ सुनन को मिली।

यह पूरी कहानी बचपन के दोस्त कूशे को मालुम है। खुद वेदा ने ही बताई है। शुरू से मां के डायलॉग तक यानी पूरी कहानी।

मगर कूशे इस मामले म दोस्त का समथन नही कर सका।

कूशे की राय थी, "दुनिया म कितना सब अत्याचार हो रहा है, तू क्या कर सकेगा? सिफ एक आदमी को लगडा बना देने से क्या होगा?"

क्रोधित होकर वेदा ने कहा "तू भी ऐसी बात करता है, कूशे?"

"नही मेरा मतलब है ।"

"अपना मतलब अपने पास रख। जानता है तू कुटी को हमेशा अपने चाचा की लडकी के फटे फ्रॉक पहनने पडते हैं। ओह! अगर मेरे पास पैसे होते ।"

एकाएक कूशे ने चौंककर पूछा, "वेदा!"

'क्या रे?'

"तुझे कोई वसी बात तो नही हुई मतलब प्रेम-प्रेम ?"

वेदान्त ने विचलित स्वर मे कहा, 'तू ही बता न? मैं तो कुछ भी समझ नही पा रहा हू। तू कविता कविता लिख रहा है। तू ही समझ सकता है।'

यह सही है कि कुछ दिना से कूशे की कापियाँ होम-वक की जगह कविताओ से भरी जाने लगी थी। मामा के घर आने के पहले वेदान्त ने उसकी कपिया के कुछ पन्ने पढकर अवाक होकर कहा था, 'तूने लिखा है यह सब? अपने आप? मगर किस चीज के बारे मे लिखा है? जरा समझा दे न।"

कूशे ने थाडा शरमा कर कहा था, "देख वेदा, मैं खुद भी नही

समझता मैंने यह सब क्या लिखा है। पता नहीं कैसे ये सब बातें मन में आती है और मैं लिख डालता हूँ।"

इसी बीच चेचक लीला शुरू हुई। वेदा मामा के घर गया और कूशे बुआ के। दोनों की परीक्षा सामने थी।

परीक्षा ठीक हो हुई दोनों की। मगर उसी बीच इनमें से एक महाभारत के एक अध्याय की रचना करके वापिस आया था मामा के घर से यानी दुर्योधन का उरुभग।

इधर दूसरे बन्धु ने एक मोटी कापी भर रखी थी छन्द विहीन कविता से जिसे देखकर मित्र ने अवाक होकर पूछा था, "हा रे, यह भी तो प्रेम वेम के ही बारे में लगता है?"

जिसने लिखा था उसने कहा, धत्।"

"तो फिर किस चीज के बारे में लिखा है तूने? यह जो लिखा है—'मैं जब भी अकेला होता हूँ तुम कौन चुपचाप आकर मेरे पास खड़ी हो जाती है? मुझे अपने बालों पर तुम्हारी उंगलियों की छुअन महसूस होती है। तब मेरे कलेजे में आनन्द की लहर उठती है नहीं, आनंद की नहीं, यन्त्रणा की। एक भयानक यन्त्रणा। यन्त्रणा और आनन्द, आनन्द और यन्त्रणा आश्चर्य! तुम कौन हो? तो यह 'तुम' कौन है?'

"मैं क्या जानूं?"

वाह? खुद ही लिखा है और कहता है नहीं जानता?"

'देख, यह बात मैं ठीक-ठीक तुझे समझा नहीं सकता। सच, मुझे लगता है कोई मेरे पास आकर खड़ा हो जाता है।"

वेदान्त अपने मित्र की सपनीली आँखों को देखता रह जाता है।

मगर क्या आग को आँचल में छिपाया जा सकता है?

कूशे की इस अकाल परिपक्वता की बात जाने कैसे बागची कोठी तक पहुँच गयी और लोगों के ज्ञानचक्षु खुल गये। अच्छा! यह बात है? तभी 'तो? पवित्र बागची वंश में इस कुल भूषण का यह अधोपतन उसी अलका

परिपक्व बुद्धि के कारण हुआ है। उस तरह के लड़के के साथ मिलने जुलने का तो यह नतीजा होना ही था।

"वे तो जनम के दोस्त हैं।"

'तो क्या ? एकदम छोटी उमर से ही तो इनका प्रेम का चक्कर चल रहा है।'

मगर इनका यह नशा छुड़ाया कैसे जाय ?"

दोनों के मकान सटे हुए हैं, दोनों एक ही स्कूल में, एक ही क्लास में पढ़ते हैं, एक ही साथ अच्छे नम्बरों से हाईस्कूल पास करके एक साथ ही कालेज में दाखिल हुए हैं।

साथ छुड़ाना कोई आसान काम तो नहीं है और फिर अपने संरक्षकों का मुंह तो उन्होंने अपनी पढ़ाई से ही बन्द करने का रास्ता ढूंढ लिया है।

जिन लड़कों को बाहर के लोग 'हीरे का टुकड़ा' कहते हैं उन्हें कैसे कहा जाय कि ये लड़के चौपट हो रहे हैं। फिर भी इस कच्ची उमर में प्रेम करना तो चौपट होना ही है।

वैसे प्रेम करना एक बात है, मगर कलम कागज का इस्तेमाल करके लिखित प्रेम तो कलंक के ही रास्ते पर जायेगा ले। जिस लड़के के दादा का नाम उपनिषद बागची है, जिसके ताऊ का नाम पतंजलि बागची, बाप का नाम सांख्य बागची और जिसका अपना नाम वेदांत बागची है वह बचपन से ही ऐसे कलंककारी कामों में लिप्त होगा यह कौन जानता था।

वेदांत बागची पर प्रेम का तीसरा अटैक हुआ उन्नीस वर्ष की उमर में। वेदांत बी० ए० के सेकेंड इयर का छात्र है, इसलिए सहपाठिनियों में से किसी एक के साथ प्रेम करने लगना स्वाभाविक ही है।

इसके अलावा उसकी सहपाठिनियां भी तो जैसे प्रेम नदी में छलांग लगाने को उद्यत नदी करार पर खड़ी मालूम होती हैं। एक तो नाम ही आकर्षक है, एक बार सुनकर भूल पाना मुश्किल। दूसरे बागची परिवार

की एक ऊँची बद काठी में साथ माँ के मुग्धकारी न मिलकर देवदूत जसा रूप दिया है। उस श्यामल चेहरे पर अभी भी एक निश्छल हँसी चाँदनी की तरह बिखरती है।

मगर लड़के की कुण्डली म ही कोई दुष्ट ग्रह बैठा हुआ है। इसीलिए ता सहपाठिनी सुन्दरियों के एक झुंड का मुग्ध दृष्टि को अनदेखा करके वह एक सहपाठिनी की विधवा भाभी के प्रेम म जा पड़ा। वह भाभी भी लगड़ी। शादी के बाद हनीमून मनाने के सिलसिले म रेल यात्रा करते हुए दुघटना म पति और एक टाँग खोकर आयी थी पिता का घर इतना गरीब था कि ससुर के घर पड़ी हुई थी।

एक पाँव उसका लकड़ी का है। उस लकड़ी के पाँव को घसीटते हुए वह नेशनल लाइब्रेरी जाती है और शोध के लिए एक ढेर पुस्तकें लेकर बैठी रहती है। ब्याह के पहले ही शोध शुरू किया था पर बीच में तमाम व्यवधान आ पड़े। अब फिर वह नये सिरे से वही अधूरा शोधकाय पूरा करने चली है। कहा जा सकता है कि यह शोध काय अब उसके जीवन का आखिरी सहारा है। उसी लड़की के प्रेम में जा फँसा वेदात।

अपनी सहपाठिनी के विशेष आग्रह पर ही वेदात का उस घर में आना जाना शुरू हुआ था। वेदात को देखकर सहपाठिनी की माँ—यहाँ तक कि दादी भी उस पर मुग्ध हुई थी।

दादी ने कहा था, "वाह! जसे देवता का अवतार है लड़का! किस जाति का है! बहू रानी अभी से बात चलाकर ।'

बहू यानी सहपाठिनी की माँ का मतव्य, "जाति तो हमारी ही यानी ब्राह्मण ही है। मगर हमारे लिए तो वह आसमान का चाँद छूने जसी बात होगी। बहुत बड़े घर का लड़का है। कार स कालेज आता है और रूप तो देख ही रही हैं आप। हमारी मधुमती तो उसके सामने ।'

एक भरोसा था तो लड़की के आग्रह और उसकी माँ के हाथों स बनी अद्भुत चाय और खाने का। बेटी की भावी जामाता की निगाहों म उठाना का माँ और द दी दोनो ही लगातार उपक्रम करती रहती थी।

अचानक एक दिन चाय पार्टी में बैठे-बैठे वदात की नजर सामने के गलियारे में आकर अटक गयी।

'ये कौन हैं ?' उसने पूछा।

'मेरी भाभी।" सहपाठिनी का संक्षिप्त नीरस उत्तर था।

"भाभी ! यहीं रहती है ?"

'और कहाँ जायेंगी ?"

"नहीं मेरा मतलब यह था कि कभी देखा नहीं और तुम्हारे कोई बड़े भाई हैं यह भी नहीं मालुम था।

"देखकर क्या लगता है कि भैया हैं ?"

वदात थोडा अप्रतिभ हुआ। देखकर भला क्या समझे वह ? उसके भैया हैं या नहीं इसका क्या प्रमाण ढूंढे वह ? वह तो विधवाओं की सफेद थान की धोती के दृश्य का आदी है, मगर यहाँ तो वैसा परिधान नहीं था।

अब सहपाठिनी की माँ ने और भी रूखे स्वर में संक्षिप्ततम भाषण द्वारा उस महिला का इतिहास कह सुनाया और आखिर में टिप्पणी की "यही एक दुर्भाग्य है इस घर का। लड़का तो चला ही गया, हमारे सिर पर यह बोझ रह गया। बेहद जिद्दी है। कितना मना किया बस ट्राम से आने-जाने लायक तुम्हारी हालत नहीं है। जो कर सको घर का काम करो, नहीं तो न सही। मगर अपनी भलाई की बात सुनती ही नहीं। सिर्फ दुनिया के सामने हमारी बेइज्जती कराती फिरती है।"

"मगर देखता हूँ इन्हें चलने में बहुत कठिनाई हो रही है। शहर के भीड़ भाड़ में इनके लिए अकेली चलना तो बड़ी मुश्किल बात है। किसी दिन दुर्घटना हो सकती है।'

"तो बेटा, तुम्ही बताओ कौन जाय उसके साथ ? मधु के पिता को तो दम मारने की फुरसत नहीं है। हमारा छोटा बेटा खड़गपुर में पढ़ता है। "

"सच, बड़ी प्राबलम है।'

दूसरे ही दिन से वदात बागची की गाडी मे एक दुबली पतली, लम्बे चेहरे वाली, सफेद साडी वाली युवती को देखा जाने लगा। इतनी दुबली न होती तो तस्वीर जैसा चेहरा लुभावना लगता, मगर अभी तो वह एक दम सीक सी औरत एकदम लुभावनी नही लगती थी। ऊपर से एक पाँव घसीट कर मुश्किल से चलना।

"कहा जाती है?"

नशनल लाइब्रेरी।"

वदात के दोस्त सब कुछ देख रहे थे। उन्होंने यह भी लक्ष्य किया कि वेदात अक्सर कालेज नही आता। इसे एक दिन पकडना होगा।

'अरे! और कुछ नही है, सिर्फ जीव दया।" एक सहपाठी ने कहा। बाकी सब हँस पडे।

'दया करने के लिए और कोई जीव नही मिला इसे। मिली तो यह तरुणी विधवा।"

मगर इसमे दया की भी क्या बात है? मनुष्यता नाम की भी तो कोई चीज होती है। एक असहाय औरत घर मे पडी पडी सड रही हो। रात दिन 'अपया' कह कर जिसका तिरस्कार हो रहा हो, वह अपने सब दुख भुलाकर अपने पावो पर खडा होना चाहती हो तो उसके लिए सह योग का हाथ बढाना क्या कोई बुरी बात है?

'क्या उसके लिए वेदात की अलग से पेट्रोल फूकना पडता है? वह खुद भी तो उसके बहाने नेशनल लाइब्रेरी जाकर अच्छी पुस्तकें पढकर लाभान्वित हो रहा है।'

मगर इन बातो से दोस्तो की आखें नही खुलती। वे मुस्कराते हैं। मगर बात यही खत्म नही होती।

यह दुनिया इतनी उदार नही है कि तुम्हारे अन्दर दया की भावना पैदा होते ही तुम दया दिखाने पाओगे। जिसके ऊपर दया दिखाना चाहते हो वह दुखिनी, अभागिनी तुम्हारी दया की पात्रा है या नही यह देखना समाज का काम है। उससे बिना पूछे अगर तुम सहायता का हाथ बढा दो

तो क्या वह बर्दाश्त करेगा ?

तुम्हारे पास गाडी है, धन है, रूप है, तो हो। क्या इसीलिए तुम हमारे घर की विधवा बहू को जोर-जबदस्ती अपनी गाडी मे लिपट दोगे ?

दीदी कहते हो तो क्या। हमे ऐसी कितनी ही दीदियो का रहस्य मालुम है। तुमसे उमर मे पाच सात साल बडी है ? हुह ! ताई की उमर वाली औरतो का भी खेल हमने देखा है। गाडी का घमड दिखा रहे हो। बिना बुलाये घर पर आकर हमारी बहू को "चलिए, चलिए" करने का मतलब ?

हाँ, घर की कुवारी लडकी को इस तरह बुलाते तो बात और थी। उस उम्मीद पर अगर खाक पडी है तो तुम्हारी रिहाई नही है। जो इतना आगे बढी सकती है वह अपनी इसी आशा की कुछ धुक धुक सुनकर आगे बढ़ी है। अब साफ दिखाई दे रहा है कि धुक धुक की वह आवाज रुक रही है। अब तो रुक भी गई। तो ? तुम्हारी धमाचौकडी को वह कैसे चलने देगी ?

इधर कालेज मे बीच-बीच मे इकट्ठा होकर लोग चर्चा कर रह हैं, भुनभुना रहे हैं, लडकियाँ मु ह पर रूमाल रखकर हँस रही हैं' फिर यह फुस फुसाहट जोरदार होती है। होते होते एक आन्दोलन चलता है। इस दुश्चरित्र लडके को कालेज से निकाल दो आन्दोलन कारियो की माँग है।

प्रतिहिंसा से पागल होकर इस कहानी की नायिका मधुमिता ही इस आन्दोलन की नायिका थी। माग पत्र की भाषा भी उसी की थी। प्रिंसिपल के पास जाकर उसी ने माँग की थी कि उसके पावित्रवश के नाम पर कीचड उछाला जा रहा है।

उसने निमल सरल चित्त से अपने सहपाठी को अपने घर इसलिए बुलाया था कि उसके एकमात्र भाई की मृत्यु के शोक मे पगलायी मा को सांत्वना मिलेगी सांत्वना उन्ह मिल भी रही थी, मगर किस्मत ने पासा

पलट दिया। दया दिखाने का बहाना बनाकर नहीं, नहीं इस तरह के चरित्रहीन लड़के के संग वे लोग नहीं पढ़ेंगे। अगर कालेज का मैनेजमेंट उनकी मांगें नहीं मानता तो वे हड़ताल करेंगे, वे देखेंगे कि कैसे मैनेजमेंट अपने चम्मचों को स्कूल में रखता है।

पवित्र बागची परिवार पर फिर एक बार वज्रपात हुआ।

पिता ने कहा 'लिखने पढ़ने में तुम अच्छे हो तो इसका मतलब ये तो नहीं तुमने हम खरीद लिया है। बार बार परिवार का सिर नीचा करते हो तुमने हमें समझ क्या रखा है एक अपरिचित दो कौड़ी का आदमी आकर मुझे कैसी कैसी बातें सुना गया है पता है?"

मां ने कहा "इस लड़के के कारण एक दिन गले में फांसी लगानी होगी।"

बुआ जी ने कहा, ' बाबा रे क्या कलेजा है लड़के का। इसी उमर से इतना दुस्साहस। चले घर की बहू का घर से निकालकर किराये के मकान में रखना। हे मां दुर्गा, अब मैं कहा जाऊंगी।

वदात ने लाल-लाल आंखों से बुआ को ताकते हुए कहा— क्या मतलब? जो मुंह में आ रहा है वही बोले जा रही हो?"

बुआ जी हाथ प्रहार लगाती हुई बोलने लगी— 'अरे सुनो हो भैया इस बित्तामर छोकरे के बातें अभी उमर बीस की भी नहीं हुई अभी से इतने चक्कर। अरे अभागे! तेरी जो मर्जी होगी करता रहेगा और हम बोलने से भी गये। तू उन लोगों की बहू को घर से निकाल कर नहीं लाया है?

ओह! बेमतलब की बातें बोलती जा रही हैं आप? जो बात समझती नहीं उसके बारे में बोलने का मतलब?"

अरे वाह रे छोकरे! मैं कुछ समझती ही नहीं। जो समझते हैं उन्होंने ही क्या कहा तुझे गया ही तो कहा। फिर वही तमाशा! जैसे मलेरिया का रोगी होता है वैसे ही तू है। बार बार बुखार बार बार मैं'रूखी बार-बार परेम-प्यार का चक्कर।

"देख काशिक, अगर तू भी बेवकूफों की तरह बात करेगा तो मैं तुझ से भी कुछ नहीं कहूँगा।"

कालेज में पूरे और वेदा नाम नहीं चल सकता था इसलिए अब दोनों मित्र एक दूसरे को पूरे नाम से अर्थात कौशिक और वेदांत कहकर पुकारने लगे थे।

कौशिक बोला—"कमाल कर रहा है तू भी, बेवकूफी की हद कर रहा है तू। जानता है तेरे नाम से कालेज में क्या कहानी चल रही है? हर दीवार पर कोयले से तेरे बारे में बुरी बातें लिखी जा रही हैं। वही मधुमिता ।"

"जानता हूँ इसीलिए तो कॉलेज जाना छोड़ दिया है।"

"कॉलेज जाना छोड़ दिया है मतलब ?"

"क्या करता, ऐसे छोटे दिमाग वालों के बीच रहने का कोई मतलब नहीं होता।"

"तेरे हिसाब से तो समूची पृथ्वी ही छोटे लोगों से भरी हुई है।"

"करेक्ट।"

"पर, इस अभागी दुनिया में अगर जीना है तो इसके कुछ नियम कानून तो मानकर चलना ही होगा।"

"अच्छा, तू ही बता क्या मानकर चलूं ?"

"और कुछ नहीं तो इतना मानकर जरूर चलना होगा कि दूसरों के मामले में नाक न घुसायी जाय।"

"ओह! तू कवि है फिर भी तू ऐसी बात कह रहा है।"

वेदांत बहुत आहत हुआ था।

"तू तो कल्पना कर सकता है। बेचारी जवान औरत ब्याह के तुरंत बाद हनीमून मनाते समय ।"

"जानता हूं। मधुमिता ने कालेज में सब हिस्ट्री बता दी थी।"

"तो फिर ?"

"तो फिर क्या ?"

फिर भी क्या तुम्हारे मन पर कोई चोट नहीं लगती ? तू जानता है कि वह बेचारी इतने शारीरिक और मानसिक कष्टों के बीच भी "बौद्धकालीन भारतीय समाज व्यवस्था"—पर रिसर्च कर रही है। क्या मन लगाकर पढ़ती है, देखकर श्रद्धा होती है।"

"श्रद्धा, भक्ति, व ममता, करुणा, दया माया सभी एक ही मूड की है। इनमें से किसी एक को पकड़ कर पूरे जीवन में मुश्किल आ सकती है।"

"आती तो क्या करूँ।'

"उन्हें अपने घर से लाकर रखा कहाँ है ? उनके ससुर तेरे घर आकर पुलिस बुलाने की धमकी दे गये हैं।"

"तो बुलाये पुलिस। वे बालिग हैं। छब्बीस साल उम्र है, घर मे रहना असभव हो गया तो वे एक लेडीज हॉस्टल म चली आयी है।"

"पसा कौन दे रहा है, तू ?'

'मेरे पास जैसे बहुत पसे रखे हैं। घर मे पैसा है तो क्या हुआ ? मुझे अच्छा खाना-कपडा मिल जाता है। कालेज जाने के लिए गाडी मिल जाती है इसके अलावा और क्या है ? मेरी पॉकिट मनी ही कितनी है ?'

"तो फिर उनका खर्चा कसे चल रहा है ?"

'वे दो तीन ट्यूशनें करती हैं। उनके हैसबैंड के ऑफिस से उन्हें अच्छे पैसे मिलने वाले हैं। मगर उनका वह पाजी ससुर सब हडप जाना चाहता है। मैं एक दिन इस बारे मे उनके घर बात करने गया तो ससुर मुझे अब मारे की तब। इतना कुछ दूसरे कमरे से सुनने के बाद उसकी बीवी आकर बोली वेटा वेदांत, तुम कल नही आये, कल मैंने तुम्हारे लिए मीट के पकौडे बनाये थे सारा दिन अगोरती रही। छि इतनी जघन्य बात है !"

"तू भी तो नम्बरी गधा है। वहाँ तो उनकी सुन्दरी बेटी के साथ मजे से प्रेम का नाटक करता, मीट पकौडा अडे का हलुआ, मछली की कचौडी खाता और वहाँ तू गया उनकी लगडी विधवा बहू के प्रेमपाश म फसने।

"कृशे!"

"क्या हुआ ?'

"तू भी इसे प्रेमपाश म फसना मानता है ?

"जो सच है वही मान रहा हूँ।"

"तुम सब लोगो की धारणा गलत है।"

"तेरी ही धारणा गलत है।"

"तुम्हे क्या ऐसा ही लगता है ?"

"हाँ, तू इस मामले मे फस गया है।"

"तू कवि है, तू शायद ठीक ही कहता है। तू न बचपन मे एक कविता लिखी थी न ? जिसम लिखा था आनन्द और मंत्रणा, मंत्रणा और आनन्द एक साथ महसूस होते हैं। आजकल कुछ ऐसा ही मुझे भी फील होता है। अच्छा बेटा एक बात बता बिना प्रेम-प्रेम किये इस तरह की कविता है कैसे लिखता है ?"

अपने इस भोले मित्र के इस प्रश्न पर कौशिक राय मन ही मन हसा था। वेदात के बारे मे 'फस जाना' शब्द का आविष्कार उसी ने किया था।

एक कविता मे उसने लिखा था—'इस पृथ्वी पर हम सब रात दिन दिन रात, केवल फसते जा रहे हैं। इधर-उधर, जिधर भी देखता हूँ वही एक ही इतिहास दोहराये जाते हुए पाता हूँ, फिर भी हम सोचते हैं हम मुक्त हो रहे हैं।'

मित्र के इस तरह फस जाने का, प्रत्यक्षदर्शी होने का कौशिक के लिए यह अंतिम अवसर था क्योंकि एक कॉलेज म पढना तो खत्म ही हो गया था, पडोस म रहना भी खत्म हो गया।

महान बागची कोठी म दरार पड गयी थी। फिर वह दो टुकडो मे हो गयी और अन्त मे टुकडे-टुकडे हो गयी।

इस विशाल परिवार का आहार जुटाने वाला तीन पीढ़ी पुराना एक प्रेस था जिसका नाम था 'बागची प्रेस'। वेदात के परदादा ने एक समय

'अभियान' 'जासूसी कहानियाँ' नाटक आदि छापकर इसकी शुरुआत की थी, जो तीन पीढ़ियों में एक तल्ले से बढकर तीन-तल्ले हो गया था। मगर जो टूटन शुरू हुई थी, उसके कारण यह तीन पीढ़ी पुराना प्रेस एक दिन बिक गया, साथ म मकान भी कौन कहाँ छिटक गया पता न चला।

इस बीच कौशिक भी बगला साहित्य मे एम ए करके एक प्राइवेट कालेज मे पढान चला गया।

वेदात के पिता ने अपने हिस्से के पैसो से जोधपुर पाक मे एक छोटा सा खूबसूरत मकान बनवाया और एक आट प्रिंटिंग प्रेस खोला। तभी से उनकी खब तरक्की हुई, जो वेदात के पिता के मरने के बाद वेदात के हाथ में कारोबार आने के बाद से भी कम न हुई।

पुराने घर के लिए कभी-कभी मन बहुत व्याकुल होता था वदात के पिता का, मगर वेदात जानता था कि उनके भीतर बठा एक रुचिसम्पन्न, सौंदय प्रिय व्यक्ति शायद वहा पडा पडा एक नये सुरुचिपूर्ण घर के लिए प्रतीक्षारत था। इस नये घर के रूप मे उस प्रतीक्षा का अन्त हुआ था।

पिता की मत्यु के बाद वेदात ने मन ही मन कहा था, "हम एक दूसरे को नही पहचानते। हम सभी दूसरा को गलत समझत हैं।

इस दाशनिक शक्ति के साथ उसने पिता के व्यवसाय म मन लगाया था। उसका उसे अच्छा फल मिला था। व्यवसाय बढता गया था।

दूसरे की गुलामी नही कोई बँधा बधाया काम नही। वेदात के दिन अच्छे ही कट रहे थे। अच्छा खाता था अच्छा पहनता था, गाडी लेकर जहा मर्जी घूमता फिरता था। छोटी बहिन की अच्छे घर मे शादी कर दी थी। एक तरह से सुखी जीवन बिता रहा था वेदात।

अतएव स्वास्थ्य, सौन्दय और मानसिक प्रसन्नता अटूट थी। मगर ऐसा रूपवान, स्वास्थ्यवान और धनवान युवक शादी क्यो नही कर रहा था? जो भी देखता उसे यह बात हजम नही होती। वह व्याकुल होता, हाय हाय करता, मगर कर कुछ नही पाता। वह वेदात नामक आदमी सारे अनुनय विनय और अनुरोध धूल की तरह झाड कर चल देता।

मां ने कह कह कर हार मान ली थी। कभी-कभी उसके मन में घृणा भी उमड़ती है उसने धिक्कारा भी है बेटे को। क्योंकि उनका यह अभागा, कुलछनी लड़का बीच-बीच में किसी न किसी स्त्री के मामले में गर्दन फंसा ही बैठता है।

कौशिक के अध्यापन काल में वेदांत की उन फंसानों की कोई खबर न मिलती हो, ऐसा भी न था। कभी किसी परिचित के मुंह से अथवा कभी खुद उसके मुंह से कौशिक को सारे समाचार मिलते रहते थे। अचानक बिना किसी सूचना के वह हाजिर हो जाता। कहता, "छोटी बहिन मां के पास आ गयी थी। सोचा दो दिन तुम्हारे साथ बिता आऊं।" या ऐसी ही कोई बात।

कौशिक जब फिर अपने शहर लौट कर आया तो उसे पता चला वेदांत किसी कमीशन एजेंट तरुणी के चक्कर में फंसा हुआ था। एक दिन स्थानीय सौंदर्य—प्रसाधन कंपनी के साबुन शैंपू तेल वगैरह लेकर आयी और वेदांत की मां और बहिन से विनती करके कुछ चीजें खरीदने का आग्रह करती रही। उसने बताया कि रोज बेच कर जो पैसे वह पाती है उसी में से बहुत सामान्य कमीशन उसे मिलता है जिससे उसके घर की रोटी चलती है घर में विधवा मां के अलावा कई छोटे छोटे भाई बहिन हैं।

अपने कमरे में बैठकर पुस्तक पढ़ते-पढ़ते यह निवेदन वेदांत ने भी सुना। और सुनकर उसकी आत्मा दुख और धिक्कार से जल उठी। जिस विनती से पत्थर भी पसीज जाता उससे उसकी मां और बहिन नहीं पसीजीं। उनका कहना था कि वे किसी अनजान कम्पनी द्वारा बनायी हुई चीजों का व्यवहार नहीं कर पायेंगी।

युवती प्राय टूटती सी आवाज में बोली, 'दो एक चीज तो ले ही लीजिए मां जी, वर्ना मेरा आज का दिन बेकार हो जायेगा।'

बहिन बोल उठी, "क्यों? क्या अकेला मेरा ही घर है इस शहर में? और घरों में जाकर बेचिये। आपका तेल लगाकर हमारे सिर के बाल

झड जायें आपका साबुन लगा कर हमारी देह मे फुन्सिया निकल आये तो आपका क्या बिगडेगा ?"

यह कथोपकथन दांत पर दांत दबाये सुन रहा था वेदात। उससे बर्दाश्त न हुआ तो कमरे से निकल आया। मां और बहिन को पूरी तरह अनदेखा करते हुए उसने युवती से पूछा, "क्या है आपके पास ?"

तरुणी थोडा चौकी और मा बहिन अवाक्‌ हुई।

तरुणी के पास जो भी चीजें थी सारी खरीद कर उसने गम्भीर स्वर मे कहा, 'इन सब चीजो का व्यवहार करने से अगर तुम्हारे बाल झडते हो, दात गिरते हो, शरीर पर छाले पडते हो तो मबल की मां (नौकरानी) को दे देना।'

'भया, क्या मबल की मा के लिए तुमने इतनी सारी चीजें खरीदी है ?" बहिन ने पूछा।

वेदात इस प्रश्न से जरा भी मर्माहत नही हुआ, बोला, "मबल की मां के लिए नही तुम्हारी हृदय हीनता के कारण य चीज खरीदी हैं मैंने। एक भद्र घर मे एसा अमानवीय व्यवहार देखकर मेरा सिर लज्जा से झुका जा रहा था।

बहिन और मां इसके बाद सयुक्त रूप से वाग्युद्ध के मदान मे उतर आयी। कौन औरत एक परायी औरत के लिए इतना अपमान सहती।

"वाह रे लज्जा ! अगर इस तमी लडकी की चिरोटी पर पिघलने लगे आदमी तो बाजार के कौन पर जो लडके धूपबत्ती बेचते है उनकी थैलाभर धूपबत्ती रोज खरीदनी पडेंगी। वे भी तो भोकार छोडकर रोत है इस व्यवसाय के लिए ऐसा नाटक करना ही पडता है। इनकी सारी बातें विश्वास कर ली जायें तो जीना मुश्किल हो जाय। इन सभी के घरो म बूढे बाप और रोगी मां होती हैं इत्यादि इ यादि बाते उन्होने कही।

सब सुनकर वदात ने उसी तरह गम्भीर स्वर मे निणय दिया, आदमी के बारे मे ऐसी बातें साचना एक तरह का पाप है। कौन कह सकता है कि किसी दिन तुम लोगो की भी ऐसी ही हालत नही हो सकती ?'

और उन दोनों को पत्थर की मूरत बनाकर वेदांत घर से बाहर हो गया।

मगर यह बात यहीं खत्म नहीं हुई ?

युवती की करूण क्या सच है या झूठ इसका पता करने की गरज से वेदांत ने उसको खोज निकाला और उसके घर गया।

वेदांत की ही जीत हुई।

सचमुच उनकी स्थिति खराब थी। युवती ने जैसा बताया था उससे ज्यादा नहीं तो कम भी नहीं।

अतएव उस दिन के बाद से उस झोपड़पट्टी के सामने अक्सर एक मोटर-बाइक आ खड़ी होती और समूचे परिवेश की आँखें टेढ़ी करके सिनेमा के हीरो अथवा पुरानी भाषा में राज कुमार जैसा एक आदमी मालती या भारती नामक युवती की झोपड़ी में फल-फूल, दवा-दारू और कपड़े लत्ते ले कर घुसता।

जैसा पहले कहा जा चुका है आग को आंचल में नहीं छुपाया जा सकता।

पिता अभी जीवित थे। एक दिन उन्होंने पूछा, "यह सब फिर शुरू कर दिया तुमने ?"

वेदांत तब शिशु, बालक या किशोर नहीं था, पूर्ण युवक हो चुका था बाप का कारोबार चला रहा था। इसलिए स्पष्ट आवाज में उसने उत्तर दिया, "दुनिया में सभी चोर नहीं हैं यही साबित किया जा रहा है।"

"तुम्हारी बदनामी हो रही है, इसका भी पता है।'

"झूठी बदनामी से क्या आता-जाता है।"

'आता-जाता क्यों नहीं ? झूठी बदनामी के कारण ही सीता माता को अग्निपरीक्षा देनी पड़ी थी, वनवास करना पड़ा था। इतिहास में और भी कई उदाहरण हैं।"

"राम बेवकूफ थे, इसलिए ऐसा किया।"

पिता चौंक उठे। बेटे के उज्ज्वल चेहरे की ओर पलभर देखा, फिर

बोले, साबित करने के और भी तरीके हैं। लड़की अगर सुन्दरी और जवान न होती तो भी क्या तुम इतना ही उत्साह दिखाते ?"

लगता है वदात को बाप के मुंह से ऐसी बात सुनने की उम्मीद न थी। इसीलिए एक पल अवाक् हारकर वह बाप का मुंह ताकता रहा फिर बोला, 'ठीक है। किसी दिन आप खुद जाकर देख आइए ?'

'क्या देख आऊं ?'

"उनकी स्थिति।"

"वेदात, गरीब परिवारों की कोई कमी नहीं। जिधर भी निगाह डालो, मिल जायेंगे। तुम कहते हो तो चला जाऊंगा। कुछ रुपये दे आऊंगा।'

"रुपये ?'

"बेटा सिहर उठा।

"इससे वे लोग अपमानित महसूस कर सकते हैं।"

"ताज्जुब की बात है! तुम तो कहते हो तुम उनकी मदद करने जाते हो।"

"वह बात अलग है। मैं तो चीजें ले जाता हूं। वे तो उपहार मान जा सकते हैं।"

'अच्छा, कुछ उपहार लेता जाऊंगा। पता दे देना।',

बाप ने वहां से लौटकर बेटे से पूछा, "तू उस परिचित घर में रोज जाता है।"

'परिचित होने से अवज्ञा तो नहीं की जा सकती।'

यह तो है।'

साब्य बागची भीगे गमछे से माथे का पसीना पोंछते हुए बोले "भद्र महिला ने लड़की को खूब सजा धजा कर मुझसे मिलवाया। मिठाई खाने की भी जिद करती रहीं।'

बेटा आसमान से गिरा।

"इसका क्या मतलब है ?"

पिता ने और भी निरासक्त स्वर मे कहा, "मतलब और क्या ? उन्हो ने समझा मैं लडके के लिए लडकी देखने गया । उनका ऐसा समझना स्वाभाविक ही है।"

ऐसा समझना ही स्वाभाविक है ?

बेटा नाराज होकर बोला, "क्या बेकार की बातें कर रहे हैं ?"

"इसमे बेकार की बात क्या है ? भद्र महिला ने सोचा होगा, तुमने फाइनल बात चीत करने के लिए मुझे भेजा है।" कहकर पिता थोडा हँसे फिर कहा, ' निश्चय ही तुम सामने हो इसलिए उस महिला कह रहा हूँ वर्ना ।"

पिता का वाक्य पूरा होने के पहले ही पुत्र बाहर निकल गया और मोटरबाइक स्टार्ट कर दी।

बाद की घटना का वृत्तान्त खुद वेदांत ने बताया था कौशिक राय को। वेदांत ने कहा था, "बाद म उनकी बात चीत से मुझे भी उन्हे भद्र महिला कहने मे सकोच हुआ था । इतनी बडी शैतान की खाल थी वह औरत कि उसने चीख चीखकर पूरी बस्ती को बताया कि ब्याह का लालच देकर मैंने उसकी लडकी की जिन्दगी बर्बाद की है।

"और लडकी ?"

"उसने जरा भी इनकार नहीं किया। चुप चाप आराम से खडी माँ की शैतानी की की बातें सुनती रही। ऐसा लग रहा था कि सचमुच मैंने उसके साथ बुरा कम किया हो।"

अन्त म इस मामले का फसला पिता श्री को ही करना पडा था। कैसे किया, पैसे देकर या पुलिस का डर दिखाकर—कहा नही जा सकता। काफी दिनो तक फिर वेदांत औरतो पर दया माया करने के रास्ते की ओर रुख नही किया।

इसके कुछ दिनो बाद पिता ने पुत्र से कहा, "तुम्हारे इस रोग का निदान है एक अच्छी-सी, पर तुम्हारी नकेल थामने वाली बहू । तुम्हारी मा की भी इच्छा है कि मरने के पहले तुम्हारे योग्य लडकी घर मे ले

आये। वह चाहती हैं कोमल, शात, सीधी सादी लडकी। मगर मैं उनसे सहमत नही हूँ। मैं चाहता हूँ तुम्हारे लिए ऐसी लडकी चाहिए जिसका स्वभाव तुम्हारी बुआ जैसा हो।'

वेदात का सौभाग्य कह या दुर्भाग्य समय म नही आ रहा है क्योकि वेदात की बुआ—टाइप वहू की खोजकर पाने से पहले ही पता नही क्या खोजने वह किसी अनात लोक को पधार गये।

इसके बाद वेदात ने पिता के करोबार मे पूरा मन लगाया। मा की सेवा और छोटी बहिन के लिए योग्यवर को तलाश करने लगा। मा की छाती ठडी हो गयी।

मा ने सोचा, 'आह! बेटे का यह परिवतन व देख पाते तो कितने खुश होते। पर यह तो हमेशा का ही ऐसा है। मा कहते उसके मुह की तरफ देखकर मेरा प्राण बाहर आ जाता है। बहिन का कितना प्यार करता है। पता नहीं बीच-बीच म उसके सिर कौन सा भूत सवार हो जाता है। उन्होने ठीक ही कहा था कि इसके सिर पर दुगा जसी एक बहू बिठा देने से ही सीधे रास्ते चलेगा। मगर इस मामले मे तो हाथ ही नहीं धरने देता। उसका बचपन का मित्र कूशो भी इस बीच)"

हो, कौशिक राय ने इस बीच शादी कर ली थी, और अपनी सवगुण सम्पन्न पत्नी के साथ कालेज प्रागण म स्थित छोट से क्वाटर म सुख से रह रहा था। बहू के सहयोग स उसका कम जीवन और साहित्य—जीवन तजी से आगे बढ रहा था। उसी की सलाह पर कौशिक ने कविता छोड कर कथा साहित्य म दखल दिया था और यश तथा धन दोनो को कमा रहा था।

वदात इस समाचार से थोडा दुखी हुआ था कहा था, 'तूने कविता लिखनी छोड दी। अच्छा नही किया। कविता और ही चीज है।"

'अरे! एकदम छाड दिया है, एसा भी नही है। बीच-बीच म लिखता हू।

'बेकार की बात है। गद्य लिखो से छुट्टी मिलेगी तब ता। और

कविता ऐसी चीज तो नही है कि सुविधानुसार लिखी जा सके। कवि शब्द मे एक भारीपन है, एक ऊंचाई है। तू कविता लिखता था इसीलिए मैं तुझे हमेशा अपने से बहुत ऊंचा मानता आया हूँ। वैसे कविता मेरी समझ म आती नही है। धुधली धुधली रहस्यमय सी लगती है। लगता है जो शब्द आखो के सामने है उसकी आड मे भी बहुत कुछ है। और गद्य ? दिन की रोशनी की तरह रहस्यहीन है। कविता मे गद्य मे आना ऐसा ही है जैसे किसी फुलवाडी म से धान के खेत म आ जाना। पथच्युत हो गया तू।

कौशिक हमेशा से ही अपने मित्र की बात चीत को बाल-सुलभ बक-बक मानता रहा है इसीलिए कभी उससे तर्क वितर्क नही करता रहा। हँसकर बोला— 'क्या करूँ, मेरी पत्नी कहानी उपन्यास की बडी भक्त है कहती है पक्की इट जसी मोटी मोटी किताबें हर साल न लिख लें तो वह लेखक क्या ?'

'ये ही तो बात है। जीवन का सब कुछ गडबड कर देने के लिए एक पत्नी काफी है। चित्र की तरह सुन्दर मकान और हवा म झूमते हुए फूलो के बीच बैठकर भी तू कविता के बदले पक्की ईंट लिख रहा है वह भी पत्नी के आग्रह पर। समझ गया भाभी जी काफी बुद्धिमती हैं। जानती हैं कि कविता लिखने से भूजी भाग भी नही मिलेगी और पक्की ईंट लिखने से बैंक बलॅंस बढ़ेगा।"

'तो तू समझता है मैं पैसे के लिए लिख रहा हू ?'

'मैं तो यही समझता हूं। तू यह सब मोटी मोटी किताबें लिखना छोड कर कविता लिखना शुरू कर। समय बीत जायेगा तो पछतायेगा।"

वेकात के चले जाने पर कौशिक की पत्नी ने टिप्पणी की थी "तुम्हारे दोस्त का चेहरा तो ऐसा है कि उससे प्रेम करने को जी चाहता है मगर बात चीत एकदम पागलो जसी ? क्या बात की उन्होने, कहानी, उपन्यास मत लिखना ही ही ही, फिर कविता लिखो ही ही ही।"

'प्रेम करने को जी चाहता है। कौशिक ने गम्भीर चेहरे से कहा।

"हा चाहता तो है। क्या फीगर है क्या रंग है क्या चेहरे की गठन है जो भी लडकी देखेगी उसी का मन करेगा। किन्तु हो, हो, हो।'

'किन्तु हो, हो क्या ?' वह पागलों जैसी बातें करता है यही न ? असल म तुम जो समझ रहे हो बात एकदम वैसी नहीं है। तुम्हारा यह सुन्दर, दिव्य प्रेमास्पद जवान लडको दखते ही उनस प्रेम करने को दौड पडता है भले ही उसम कोई रूप-गुण न हो। एक दम विवेकहीन है इस मामले म।'

हटो। मेरा मन टटोल रहे हो क्यो ? सोच रहे हो कि शायद मैं सच मुच किसी दिन उसके साथ म भाग जाऊँ।

'जो भागना चाहे उसे मैं रोकना भी नही चाहता।

'आ हा हा हा ! जरा दिल पर हाथ रखकर कहना तो।

"दिल क्या पेट पीठ,सिर जहाँ कहो वहाँ हाथ रखकर कह सकता हूँ। वह साला तो बचपन का ही प्रेम रोगी है।"

'अच्छा।'

"हाँ, किसी दिन उसके प्रेम रोग का धारावाहिक इतिहास तुम्हें सुनाऊँगा।

'किसी दिन क्या आज ही सुनाओ न, बल्कि अभी ?"

कौशिक न हसते हुए जितने सक्षेप मे समत्र या वदात बागची की प्रेम कहानी, कह सुनायी। और अन्त म कहा—'बेचारे को इस प्रम इत्यादि के लिए बडा कलक सहना पडा है।'

कौशिक की पत्नी ने कहा— मुझे तो उनके चरण छून का मन कर रहा है। बहुत ग्रेट आदमी है यह तो।'

इसके बाद दोनो मित्रा का मिलन धीरे धीरे कम होता गया। कौशिक उत्तरी बगाल का कालेज छोडकर वदमान जिले के एक कालज म पढाने लगा। वहाँ से भी छोडकर कुछ दिन वदमान कालेज मे विभागाध्यक्ष का पद सुशोभित करता रहा। क्रमश अध्यापिकी छोडकर उसन साहित्य को पूरा समय देना शुरू किया। इसी सदभ म एक साप्ताहिक पत्रिका

मे नौकरी मिली। नयी नौकरी मे बैठे बैठे कागज के थोक रगना होता था। घर म भी लिखना और पढ़ना छोडकर और कोई काम न था। धडाधड मोटी मोटी किताबे छप रही थी। कलकत्ता के एक अभिजात मुहल्ले मे फ्लैट खरीद लिया था, टेलीफोन मिल गया था, गाडी खरीदने ही वाला था अर्थात जीवन का ढग बदल रहा था। शरीर पर सुख का बोझ बढ रहा था।

वेदात भी उसी जोधपुर पार्क मे रहता था। फिर भी दोनो के निवास दो छोरो पर थे। वेदात का भी बाह्य स्वरूप बदल रहा था, पर उसका आतरिक स्वरूप वैसा ही था। उसमे कोई परिवतन नही घटित हुआ था।

"होपलेस केस" कहता कौशिक।

एक दिन टेलिफोन पर वेदात को बुलाकर उसने कहा, "क्या रे होप-लेस। तुझे कभी अक्ल नहीं आयेगी क्या? सुना है कुछ लोग अस्सी साल मे बालिग होते हैं, तू क्या उन्ही मे दल म है सुना है फिर कोई तमाशा किया है?'

उधर से टेलीफोन पर उत्तर आया, "मिल गयी खबर तुझे भी? तू अगर उस परिस्थिति मे पडता तो वही करता जो मैंने किया। शायद कुछ भी न होता, अगर दस आदमी मिलकर इस बात को लेकर हगामा न करते। समझा? और वह महिला भी तो ।'

"तो वह परिस्थिति क्या थी जान सकता हू।'

वेदात न इसके उत्तर मे जो कहा वह इम प्रकार था।

वदात की गाडी गरियाहाट के मोड पर घूम रही थी कि वेदात ने देखा कि एक "हाकस कानर' म एक महिला को घेर कर खडे हैं। और उनके बीच से एक शिशु का चीत्कार सुनाई पड रहा था।

ऐसी परिस्थिति मे गाडी भगाकर चले जाना कठिन था।

मामला यह था कि एक मध्य वित्त सी दिखती महिला अपने शिशु को लेकर दुर्गापूजा की खरीदारी करने गयी थी। एक दुकान से पसद करके

ढेर सारे कपड़े चुन लिये थे, मगर दाम देने चली तो देखा मध से थलते हुए पर्स का मुंह खुला हुआ है और उसके भीतर कुछ नहीं हैं। एकदम खाली भी नहीं था पर्स, कुछ पुराने कशमिमो वाला म सगान के लिए रोलर आंख के डाक्टर का प्रेसक्रिप्शन और घर की चाबियों का गुच्छा मौजूद था। शायद या सिर्फ एक पुलिफाफा रखा जिसमें नोटों की एक गड्डी रखी हुई थी। चोरों को ठगने के लिए चतुर महिला ने पुराने लिफाफे में नोट रखे थे। मगर चोर तो उस महिला से ज्यादा ही चतुर निकला। जिस समय वह महिला अपने बच्चों के शरीर की माप के अनुरूप कपड़े चुनने में मगन थी उसी समय पास खड़े चोर ने हाथ साफ कर लिया था। हो सकता है वह तब भी थोड़ी दूर पर खड़ा हो।

महिला का चेहरा दुःख, हताशा लज्जा और आंतरिक हाहाकार से विवर्ण हो उठा।

कभी पाकेट कट जाना आदमी के लिए सहानुभूति उपजाता था लेकिन अब ऐसा व्यक्ति उपहास का पात्र बनता है।

थोड़ी देर महिला अपने रुआंसे चेहरे पर मुस्कान का आभास देने की कोशिश करती रही फिर सभी चीजों को नीचे रखकर दुकानदार से बोली, "देख रहे हैं क्या जमाना आ गया है ऐसा करिये ये चीजें अलग रख दीजिए मैं कल या परसों आकर ले जाऊंगी।'

महिला ऐसा व्यवहार कर रही थी जैसे जान बचाकर भागना चाहती हो। मगर उस समय उनकी स्थिति कौरव सभा में द्रौपदी जैसी हो रही थी। वहां खड़े प्रत्येक व्यक्ति की आंखों में अविश्वास की छाया थी। हर आदमी जेब कतरे की बात को कोई गप्प समझ रहा था।

कुछ लोग आपस में फुसफुसाकर अपना संदेह प्रकट कर रहे थे। दुकानदार के व्यवहार में वह संदेह प्रकट हो उठा। दुकानदार ने सारा सामान पीछे फेंककर कहा—' ये सब हम खूब जानते हैं। तुम अपने को बड़े चालाक समझते हो। दुकानदार तो जैसे रोटी नहीं घास खाता है।"

महिला मुंह लाल किये बिना किसी ओर देखे तेजी से चली जा रही

थी जैसे उन्होंने ही किसी की जेब काटी हो मगर उनके दोनो छोटे बच्चो ने मुसीबत खड़ी कर दी वे चीख चीख कर कहने लगे मॉं, मॉं मेरे लिए पैंट शर्ट इस आदमी ने क्यो रख दिये, मुझे दिला दो।"

उसके बाद वहाँ उपस्थित लोगो के मन मे जरा भी सदेह नही रहा कि यह सब नाटक है और लव-कुश की तरह शक्ल सूरत म और आकार मे समान व दोना बच्चे भी नाटक के अभिनेता है। व बच्चे दुकानदार के मन मे करुणा उत्पन्न करने की चेष्टा कर रहे थे।

मॉं कह रही है कि पैसे खो गये हैं। घर चलो मगर बच्चा की जिद है कि वे कपडे लेकर ही जायेंगे।

वहाँ खडे लोगा मे से कई लोग महिला को सुना कर ही कह रह थे आजकल इस तरह की चार सौ बीसी खूब चल रही है। उसी समय गाडी से उतर कर हमारे हीरो वेदात बागची ने रगमच पर पदार्पण किया। साथ-साथ ही मा ने एक बच्चे के गाल पर जोरदार चाटा मारा फलस्वरूप उसकी रुलाई आसमान छूने लगी।

'क्या बात है ?"

वेदांत का चेहरा मोहरा और पास गाडी दखकर लोगा ने रास्ता दिया उनम से एक ने सक्षेप मे सारी बातें बता दी।"

वेदात ने चीखते हुए बच्चे के सिर पर हाथ रखकर कहा 'छि छि रास्ते मे इस तरह रोते हैं भला ? चुप हो जाओ, अभी कपडे मिल जायेंग।

बच्चा तुरत चुप हो गया। शायद अकस्मात् राजा की तरह एक आदमी के आ उपस्थित होने से सभी अवाक हो गये थे।

वेदात बागची ने महिला की तरफ देखा। उनका चेहरा लज्जा और अपमान से विवर्ण हो रहा था।

"बैग मे कितने पैसे थे ? दुकानदार को क्या देना है ?"

"यह जानकर अब क्या होगा ?'

महिला क चेहरे पर दृढता का भाव था। वेदांत के इस प्राय परिवतन पर चकित था।

"और कुछ नही तो बच्चो के लिए तो कुछ करना ही होगा।"

उनके लिए आपको कुछ करने की क्या जरूरत है ?"

यह तो आदमी का आदमी के लिए फर्ज बनता है। बताइए कितने पैसे देने है ?

वदात का एक हाथ पट के पाकेट मे था।

अपने बच्चा को ठेल कर ले जाते हुए महिला ने कहा, "देख रही हू आदमी के फर्ज को लेकर आप कुछ ज्यादा ही तत्पर हैं। हटिए जाने दीजिए। ए, चल।"

एक बच्चा चीख पड़ा, ' क्यो चलू। शट पैंट लिए बिना नही जाऊ गा नही जाऊ गा।'

'वाह ! क्या सिखाया है।' कोई बोल पडा।

किसने कहा, क्या कहा वदात समझ नही पाया। उसने दुकानदार स पूछा, 'क्यो भाई इनके कपडो के कितने पैसे हुए।'

महिला ने तेज आवाज मे वदात को टोका, "क्यो, आप क्यो चुकायेंगे पैसे ?

'बच्चे रो रहे हैं। इसलिए" निहायत भोलेपन से कहा वदात ने।

'तो रोने दीजिए। आपका क्या जाता है।"

'ताज्जुब की बात है आप भी अच्छी गुस्सैल महिला है बच्चे रो रहे है। आप खुद परेशानी मे पडी हुई हैं। मेरे पास काफी पैसे हैं ।"

अचानक भीड म से एक असभ्य आवाज उभरी, "अच्छा एसा है क्या बाटने क लिए एकसट्रा पैसे है तो इधर उधर छीटना शुरू कर दीजिए गरीब जनता का भला होगा। एक खास दिशा मे सारे नोट क्यो ढाल रहे हैं।

'कौन बेहू ी बात कर रहा है ? लंबा चौडा वेदात घूमकर खडा हो गया ' इस तरह की एक भी बात किसी ने कही तो अच्छा न होगा।

कुछ तमाशा दखने वाला ने पाव पीछे हटाया और एक खास दूरी पर जा खडे हो गये। मगर शहरो और कस्बो के हर इलाके मे एक जीव होता

है जिसे 'दादा' कहा जाता है और जो ऐसे मौकों पर शायद जमीन फोड़ कर या आसमान से टपक पड़ते हैं। ऐसे भी कुछ जीव वहां आ गये थे और अपनी मांसपेशियां फुला रहे थे।

वेदांत ने मुड़कर फिर दुकानदार से पूछा "आप बताइये न कितने पैसे हुए ?"

दुकानदार ने बड़ी अनिच्छा से उत्तर दिया "अढ़ाई सौ।"

'बस ? ठीक है सामान इधर लाइये।'

वेदांत ने जेब से नोटों की एक मोटी गड्डी निकाली। उसी समय महिला बम की तरह फट पड़ी 'आप का मतलब क्या है ? आप ने मुझे क्या समझ रखा है ? आप मुझे पैसे दिखा रहे हैं ?'

"अजीब बात है मैं क्या आप को दान दे रहा हूं ? बच्चे तंग कर रहे हैं। खामख्वाह आप का भी मन खराब हो रहा है। पैसे आप पर उधार रहे। जब मर्जी दे जाइयेगा।'

वेदांत ने अढ़ाई सौ रुपये दुकान के काउंटर पर रख दिये। फिर भी दुकानदार ने वे पैसे उठाये नहीं महिला की तरफ देखता रहा। महिला ने एक बार उस कांतिमान पुरुष की तरफ आवाक् होकर देखा फिर अपने चारों ओर खड़े लोगों के अश्लील मुस्कान से भरे चेहरे पर निगाह डाली। फिर जितने ऊंचे स्वर में बोल सकती थी बोली "माफ कीजिए मुझे आप की मदद की जरूरत नहीं।'

'मेडम, मेरा घर यहीं पास में जोधपुर पार्क में है। ये रहा मेरा कार्ड। आकर जब सुविधा हो पैसे दे जाइयेगा।' कहकर वेदांत ने अपना विजिटिंग कार्ड महिला की तरफ बढ़ाया।

वेदांत की इस हरकत से महिला ने बहुत अपमानित महसूस किया। फिर भी सब्र के साथ गंभीर स्वर में बोली "देखिये, अगर आप सोचते हैं कि दुनिया में हर आदमी पैसा के लिए मुंह बाये खड़ा है और आप की दया की भीख लेकर कृतार्थ हो जायेगा तो आप बहुत भ्रम में हैं। हटिये, मुझे जाने दीजिए।"

"दया की बात इसमें क्या है ? कह तो रहा हूं कि आप पैसे लौटा दीजियेगा।"

"जी, नहीं, मुझे नहीं चाहिए।"

"आप भी अच्छी जिद्दी हैं ठीक है अभी ये कपड़े ले लीजिये। मैं आप के घर छोड़ देता हूं, मुझे वहां चलकर पैसे दे दीजिए। आओ बच्चों, गाड़ी में बैठ जाओ।"

बच्चे पहले ही इस नये अस्त्र से प्रभावित थे। झटपट गाड़ी की तरफ चल पड़े जो पास ही खड़ी सभी का लुभा रही थी।

अब महिला के लिए और धीरज रखना असंभव हो उठा। उसने चीखकर कहा 'तुम्हारा इरादा क्या है ? हट्ट छट्ट चलो इधर।"

बेचारे दादा लोग कब तक मसल पिसाने बैठे रहते, उनके हस्तक्षेप के लिए सुनहरा अवसर सामने था। "मार साले को, 'धर साले को' 'मार कर पटरा कर दें' 'औरत देखते ही साले की लार चूने लगी' इसी तरह के मनोरम वाक्यों के साथ वेदांत की नयी कार पर ईंट पड़ने लगी।

इस मौके का फायदा उठाकर महिला ने बच्चों के हाथ से पैकेट छीन कर वेदांत की तरफ उछाल दिये और दोनों बच्चों को हाथ पकड़कर घसीटती हुई सड़क के मोड़ पर अन्तर्ध्यान हो गयी।

ईंट वर्षा के साथ वचन बाणों की भी वर्षा हो रही थी 'साला, बदमाश औरतों बच्चों को पैसा गाड़ी दिखाकर भगा ले जाना चाहता है। लाश गिरा देंगे साले की।' इत्यादि।

ईंटों से गाड़ी को जितनी क्षति पहुंचायी जा सकती थी उतनी पहुंचा कर मामला पुलिस के हाथ में जाय इसके पहले ही दादा लोग अपने बिलों में प्रवेश कर गये। इसलिए यह कहानी अखबारों में तो पढ़ने को नहीं मिली मगर वेदांत का गाड़ी की मरम्मत में और साथ ही अपने शरीर की मरम्मत में थोड़े पैसे और वक्त जरूर लगाने पड़े।

यह कहानी तो अखबारों में नहीं छपी मगर इसके बाद की कहानी

जिसका नायक वेदात या शहर के सारे अखबारो मे प्रकाशित हुई। घटना यो थी।

एक दिन वेदात प्रेस से वापस गाडी मे आ रहा था। अचानक तेज आधी और बारिश शुरू हुई। तज आधी से बचन के लिए गाडी के शीशे उठान का उपक्रम करते करते वदात न लक्ष्य किया कि लोग भागकर आस पास की इमारतो मे शरण ले रहे हैं। दर असल आस पास इमारतो के नाम पर टीन की छना वाली दूकानें थी जिनकी छन भी भागकर पीछे बडी इमारतो की शरण लेना चाहती थी। बीच रास्ते म एक औरत परेशान हो रही थी। उसकी छनरी उलट गयी थी और साडी भी शरीर छाडकर भागना चाहती थी और बेचारी औरत इसी चक्कर मे न ठीक से छनरी सभाल पा रही थी और न साडी। इस बीच वह भीग भी गयी थी।

पहले तो वेदात को उस औरत की इस दुदशा पर हसी आयी और और उसने सोचा प्रकृति का मामूली प्रकोप भी आदमी को कितनी मुसीबता मे डाल जाता है। उसने गाडी धीमी कर दी और मन ही मन उस महिला स कहा दवी जी, उलटी छतरी का मोह छाडिए। इस फैशनेबुल छतरी से आप की कोई रक्षा नही होगी। चलिए दौड लगाइये और कोई शरण तलाशिये।

वेदात का यह मौन आवदन बेचारी महिला कसे सुनती। उसको अपनी सुरक्षा से ज्यादा अपनी छनरी प्यारी थी। अब वेदात से न रहा गया। गाडी को उस महिला के पास खडी करके उसने एक शीशा हल्का सा नीचे किया और उस फाक मे से जोर से चिल्लाकर बोला—"छोड दीजिए, वह ठीक नही होगी। उसे उड जाने दीजिए ।"

यद्यपि गाडी एकदम महिला की गदन पर सवार थी, फिर भी आधी की आवाज म वेदान का स्वागतम हवा मे उड गया था। मगर उसकी तरफ देखकर उस महिला की समझ में आ गया था कि वह उसे अपनी गाडी मे शरण देने को आतुर है।

महिला ने देखा एक तरफ आधी तूफान है दूसरी तरफ गाडी मे वैठा शिकारी। वह घबडा गयी। उसने छतरी आधी के हवाले की और भीगे कपडो को समेटकर किसी ओर शरण की ओर भागी। उसे लगा गाडी मे वैठे उस दैत्याकार व्यक्ति को एक दुबली-पतली लडकी को उठा कर गाडी मे डालते कितने सेकेंड लगेंगे अर्थात कुछ ही सेकेंडों म नव नलिनी विद्यालय की एक अग्रेजी शिक्षिका का जीवन कुछ ही सेकेंडो म खत्म।

मगर भीगे कपडा म रबड की सोल वाली वाली चप्पला पर हर बराहट म कितनी दूर भागा जा सकना था दो गज के भीतर ही चप्पल फिसली और महिला सडक के बीचो बीच चारो खाने चित।

"इसी समय जसे आकाश को विदीर्ण करती बिजली गिरी कही।

इसके बाद वेदात के लिए गाडी मे वठे रहना सभव न था उसन नीचे उतर कर प्रबल विरोध के बावजूद महिला को उठाकर गाडी म डाल दिया और दरवाजा लाक कर दिया, बोला 'मरने की इच्छा है क्या ?'

"हा है मैं कहती हू उतार दीजिए मुझे। आपन दरवाजा क्यो लाक किया बोलिए लॉक क्या किया ?'

वेदात ने गाडी को चलाते चलाते ही निर्लिप्त भाव से कहा—"इस लिए कि आप कही चलती हो कूद पडने की वीरता न दिखान लगें।"

आपने जबदस्ती मुझ गाडी म बिठाया क्यो ?"

"आप की जान बचाने के लिए। पता है सिर फट गया है आपका।"

'मैं मरू या जियू उससे आपका क्या है ? मुझे उतार दीजिए नही तो मैं शोर करके भीड इकट्ठा कर लूगी।'

वदात ने हसकर कहा भीड ? एक आदमी तो दिख नही रहा है भीड आयगी कहाँ से ?"

इसके बाद भद्र महिला के लिए धैय रखना सभव नही था वह वदात बागची के ऊपर झपट पडी। देह मे जितनी ताकत थी और शत्रु को परास्त करने के जितने आघाता का ज्ञान था उनका भी इस्तमाल करने लगी।

वेदात वागची का कुत्ता फट गया। गर्दन और चेहरे पर भद्र महिला के नाखूनो और दातो के अघात चि हो से खून की बुदें रिसने लगी।

वेदात एक हाथ से इन प्रहारो को रोकने की चेष्ठा करते-करते हुए चीखकर कहा 'क्या असभ्यता कर रही हैं, मैं क्या आप को खाय जा रहा हू?"

"खाने के लिए ही तो ले जा रहा है शतान, पाजी, गुडा।"

"थोडी देर बाद वेदात की गाडी की गति धीमी हुई। बारिश भी कम हो गयी थी। वेदात ने पीछे मुडकर देखते हुए कहा।

'लगता है किसी भले आदमी से आप की मुलाकात नही हुई है?"

"आप जैसे भद्र आदमी स रोज ही भेंट होती है। मुझे यही उतार दीजिए।'

"नही। पहले आप को फस्टएड दिलाना है, फिर और कोई बात।" कहकर वेदात वागची ने फिर गाडी की गति तेज की।

महिला को लगा कि य आदमी उसे भगाकर ले ही जायेगा किसी तरह मानेगा नही। उसने गुस्से मे वेदात के कधा पर पूरी ताकत से घूसे मारते हुए कहा— मुझे कुछ नही हुआ है मुझे उतार दो।"

'हाथ लगाकर देखिय सिर से कितना खून बह रहा है। पट्टी करवाना बहुत जरूरी है और टिटनस के इजेक्शन भी।"

"मेरी यह हालत तुम्हारे ही कारण हुई है।"

गाडी की गति कम होते न देखकर महिला न अतिम अस्त्र अपनाया। उसने वेदात की कठ नली को दोनों हाथो से दबाया। वदात न जान बचाने के लिए एक हाथ स महिला की कलाई पकड कर मराड दी। भद्र महिला शिथिल होकर पीछे की सीट पर गिर पडी और बुरी तरह रोने लगी फिर बोली— 'आपके पाव पडती हूँ मुझे छोड दीजिए।'

वेदांत अब अपने मुहल्ले के करीब आ पहुचा था। सामन ही एक परिचित डिस्पेंसरी थी। वेदात ने गाडी रोक ली और दरवाजा खोल दिया महिला ने झट स सडक पर उतरकर चीत्कार दिया— देखिय अ प लोग,



बचाइये, बचाइये, ये आदमी जबरदस्ती मुझे गाड़ी में डालकर ।"

इस बार की घटना ने काफी तूल पकड़ा।

नव नलिनी विद्यालय की शिक्षिका महाशया के बिखरे हुए केशपाश और भीगी वेशभूषा सिर से बहते हुए खून की धारा और हाफते हाफते डिस्पेंसरी की सीढ़ियों पर लेट जाना अजीब तमाशा बन गया। वेदान्त के परिचित डाक्टर और कम्पाउन्डर न भी इसे बहुत निमल भाव से नहीं ग्रहण किया।

थोड़ी देर म ही पुलिस आ गयी। महिला की दुदशा के साथ वेदान्त के गले पर महिला की उगलियो की छाप देखकर पुलिस तो क्या कोई महात्मा भी वेदात का निरापराध नहीं समझता। अखबारा म भी एक अभिजात व्यक्ति की कलफ-कहानी रस लेकर छापी गयी। काफी परशानी केबाद और बाद मे उक्त महिला की अनिच्छा के कारण मामला रफा दफा हुआ।

मगर सारी कहानी खत्म होने के बाद एक आश्चय जनक घटना हुई। कुछ दिनो बाद जाधपुर पाक म बागची विला की रहती वही महिला अपने अभिभावक को लेकर हाजिर हुई। वेदांत की मा स रोते हुए उसन क्षमा याचना की और कहा—' मैं डर से पागल हो गयी थी इसीलिए ।'

मा ने रुखे स्वर मे कहा था—' अब क्षमा मागने से क्या फायदा ? मेरे लड़के की जो बदनामी होनी थी वह तो हो ही गयी।'

वदात ने रस लेते हुए कहा था— सौभाग्य स आप की अगुलियो के अघात स अपने गले की रक्षा कर पाया या नहीं तो क्षमा मांगन का सुयोग आपको कसे मिलता। फिर भी मैं आप का उपकार कभी नहीं भूलूगा।"

उपकार ?"

हाँ, उपकार ही तो। मुझे एक बहुत बडी शिक्षा मिली ठीक भी है आप का काम ही है बच्चो को शिक्षा देना। मेरी माँ कहती है—"मैं भी एक बालिग बच्चा ही हू।"

जिन दिनों ये सब कांड चल रहा था कौशिक अपने मित्र को बचाने के लिए उसके बगल में आकर खड़ा हो गया था। एक प्रसिद्ध लेखक की गवाही से मामला जल्द सुलझ गया था।

कौशिक ने गंभीर स्वर में कहा था—"उम्मीद करता हूं अब तुम अपना चेहरा दिखाने नहीं आओगे। चित्रा भली औरत है इसीलिए तुम्हारी इस मूर्खता पूर्ण घटना पर विश्वास कर लिया है और तुम्हें निर्दोष मान लिया है और कोई औरत होती तो इसके बाद तुम्हारी छाया से भी दूर भागती। खैर, आगे से ध्यान रखना।"

तू तो जानता है कि मेरी मेमोरी बहुत अच्छी नहीं है। इसलिए इस तरह का कोई वादा मैं नहीं कर सकता।"

जिस दिन वह युवती क्षमा मांगने आयी उसके दूसरे ही दिन वेदांत यह खबर देने मित्र के घर पहुंचा।

सारी बातें सुनकर कौशिक ने कहा "तो तू स्वीकार करता है कि तुझे सीख मिल गयी?"

"हां, भाई, मिली तो।"

"तो अब कान पकड़ और जमीन पर नाक रगड़।'

वेदांत ने इधर-उधर देखकर सिर खुजलाते हुए कहा—"तेरे सामने तो नाक रगड़ने में मेरा कुछ आता-जाता नहीं लेकिन तेरी बीवी के सामने ।"

"क्या, लाज लग रही है?"

"हां, थोड़ा-थोड़ा।"

डर की बात नहीं है। आजकल मेरी पत्नी अपने बाप के घर गयी है। कुछ दिन वहीं रहेगी।"

"क्यों?"

'तू बेटा, बुद्धू का बुद्धू रह गया। विवाहिता महिलाएं साल—दो साल पर, कुछ दिनों के लिए बाप के घर रहने क्यों जाती है। जानता

नही तू ?"

'यह तो बहुत बुरा हुआ। मैं सोचते हुए आ रहा था कि भाभी जी के हाथ की बेहतरीन चाय पियेंगे।"

"तेरी वह आशा तो पूरी होने से रही। हाँ एक कच्छा-बनियान पहनने वाला बालक छोड गयी है चित्रा। उसके हाथ की चाय अगर गले से उतरे तो बनवा देता हू। चल, अब तो लज्जा की कोई बात नही रही, जल्दी से कान पकड और नाक रगडना शुरू कर।"

"धुर! ऐसा मजेदार दृश्य भाभी जी ने नही देखा तो फिर क्या फायदा।"

उस दिन के बाद काफी अर्सा गुजर गया वेदात कौशिक के घर नही गया। वेदात अपनी माँ को लेकर तीर्थाटन पर निकल पडा था। वेदात की माँ ने उसको करने की अप्रमाण चेष्टा मे असफल होकर एक दिन कहा था—"अब समाज मे मुह दिखाना मेरे लिए बहुत मुश्किल हो रहा है। तू एक काम कर बनारस मे हमारा जो मकान है वहा मुझे छोड आ।'

"तो क्या तुम अब सन्यास लेना चाहती हो ?'

"यही मान ले। तेरी गृहस्थी तो बसा नही पायी ?"

'तो क्या हुआ ? तेरा चाँद जैसा दामाद है, हीरे के टुकडे जैसा नाती है। चडी तुल्य बेटी है। इनके साथ सुख से गृहस्थी चलाओ।'

"इन्हे लेकर क्या हमारी गृहस्थी बनेगी ? लडकी दामाद तो दो दिन की शोभा हैं। अपनी गृहस्थी तो बेटे बहू को लेकर बनती है।"

यही तो तुमलोगो की गलती है। उसी गलत व्यवस्था के कारण तो दुनिया मे इतना सघर्ष मचा हुआ है। लडकी दामाद का साथ रखने मे तो सुविधा ही है। अपनी लडकी के साथ तुम जितना फ्री हो सकती हो, उतना क्या दूसरे की लडकी के साथ हो सकती हो '

"और दूसरे का लडका ?

"दूसरे के लडके की क्या बिसात है। तुम्हारी चडी मूर्ति बेटी ही तो

उसकी निर्देशिका है।

मां को लेकर तीर्थयात्रा पर जाने के पहले वेदांत ने बहिन और बह-नोई को घर और प्रेस सभला दिया था और उन्हे बाद मे अपने पास ही बनाये रखा। क्रमश व उसके लिए अपरिहार्य हो उठे। मा काशी मे ही रह गयी थी और प्रेस का कारोबार लगातार बढ़ता जा रहा था, इसलिए घर म और प्रस म मददगार की जरूरत भी थी।

उन दिनो बहिन बहनोई बहुत ही आज्ञाकारी हो रहे थे, क्योंकि बहिन को ससुराल म सिफ एक छोटा कमरा मिला था और बहनोई की कपनी बन्द हो गयी थी, इसलिए उनके पास भी नौकरी नहीं थी।

वेदात ने मां से प्रस्ताव किया कि वह बहनोई को अपनी जायदात मे आधे का मालिक बनाना चाहता है। मां को बेटे की यह उदारता पहले पसद नही आई थी।

"तेरी बुद्धि तो ठिकाने है ? तू अपनी जायदात म उसे क्यो साझीदार बनायगा। जानता नहीं कहावत "जम, जमाई, भगिना, ये तीनो होय न आपना।"

"बहनोई नही तो बहिन सही ? बात तो एक ही है ? पिताजी की जायदात मे मेरा और बहिन का कानून के हिसाब से भी बराबर अधिकार है।"

"मगर मालिक तो वही होगा—दूसरे घर का लडका।'

"अगर मैं शादी कर लू तो क्या दूसरे घर की लडकी आकर माल-किन नही बन जायगी। आते ही सबका ठिकाने लगाना शुरू कर देगी। तुम्हारा दामाद तो महाकाली के पावो तले लेटे शिव जैसा है।" वेदात ने हस कर कहा।

मा ने रुष्ट होकर कहा, "यह सब 'एडा बेंडा' तक मैं नही समझती। पुरान जमाने से जो चला आ रहा है, मुझे तो वही ठीक लगता है। बडे-बूढो ने सोच-समझकर नियम बनाये थे। उसी मे सबका भला है।"

'अरे मां, तुम तो कैसी बातें करती हो। वडे बूढे तो बाल विवाह,

सती प्रथा भी भी चलन चला गये थ। तो क्या उसे भी भले की चीज मानना पड़ेगा ?'

माँ और भी चिढ़ गयी बोली, 'हाँ ठीक कर गये थे, आज उनकी बातें चलती तो तुम बिन ब्याहे साँड की तरह छुट्टा घूम सकते थे भला? मैं कहे दे रही हूँ, जब तक तू ब्याह के लिए तयार नहीं होता, मैं यहाँ नहीं लौटूंगी। तू अपने बहन-बहनोई के साथ सुख से रह।"

"कमाल करती हो माँ, मेरे तैयार होने से क्या होगा। मुझ जैसे बूढ़े बैल के गले में कौन अपनी लड़की बाँधने को तयार होगा।"

"देखती हूँ कोई तयार होता है या नहीं।"

जो भी हो वेदांत ने बहिन के नाम अपनी संपत्ति का आधा हिस्सा लिख दिया क्योंकि उसके अनुसार ऐसा न करना नारी के अधिकार की अवमानना होती।

इस प्रकार वेदांत बहिन बहनोई के ऊपर सारा भार डालकर सचमुच छुट्टा साँड हो रहा है। इधर उधर घूमता—फिरता है। बीच बीच में दो चार दिनों के लिए माँ के पास काशी हो आता है। माँ को वापिस चलने के लिए मनाता है और हार कर अकेला ही कलकत्ता लौट आता है।

शायद माँ भी काशी वास का सुख छोड़ना नहीं चाहती थी। वह भी एक प्रकार का छुट्टा साँड होने का ही सुख था।

इसके बाद काफी दिनों तक अपने बाल सखा के साथ वेदांत की मुलाकात नहीं हुई। फिर अचानक एक दिन वेदांत धड़धड़ाता हुआ कौशिक के कमरे में घुसा और धप्प से एक कुर्सी पर बैठकर सिर खुजाते हुए अटक अटक कर घोषणा की कि भाई कुशे मैं एक बार फिर झमेले में पड़ गया हूँ।

'तू जिन्दगी भर गदहापना ही करता रहेगा। खैर, बता क्या बात है ?'

'इस बार मामला थोड़ा जटिल है।'

"कुछ बतायेगा भी ?"

'जरा अपनी टेबुल पर से कागज पत्र हटा।"

"कागज पत्र तेरा क्या बिगाड़ रहे है ?"

'नही, कागज पत्र कुछ बिगाड नही रहे है, मेरा मतलब है टेबुल पर थोडी जगह बना दे।"

'उसकी तुझ क्या जरूरत है ?

'जानता तो है कि टेबुल पर बैठे बिना कोई गंभीर बात चीत करने म मुझे असुविधा होती है।'

"तुझे मालुम है कि घर मे एक औरत भी है और वह इस तरह की बेहूदगी एकदम पसद नहीं करती।"

'ओह ! समझा। तू अपनी वाइफ की बात कर रहा है न ? तो क्या व आ गयी हैं ?'

"आ गयी हैं माने ? वह गयी ही कहाँ थी ? क्या तू आया तो वह बाहर जा रही थी ?'

'नही तो। मैं देखता तो तुरत चाय का आडर देता।'

उसी समय कमरे का पर्दा थोड़ा हिला और 'चाय का पानी चढ गया है।' कहते हुए चित्रा ने प्रवेश किया।

'वाह ! इसीलिए तो मैं तेरी पत्नी को इतना चाहता हू।"

'भैया तुमसे हाथ जोडकर प्रार्थना है। मरी इस इकलौती पत्नी पर अपनी शनिदृष्टि मत ही डालो तो अच्छा।"

'तू एकदम थड क्लास आदमी है। अरे ! जरा सुनियेगा जी।',

'जी नही चित्रा नाम है।'

"चाहने का अच्छा प्रमाण है कि नाम तक भूल गये। खैर, बताइये, क्या कह रहे है ?'

"कह रहा था क्या कह रहा था ? अरे हाँ, याद आया। कब लौटी आप मायके से ?'

'मायके से ?" चित्रा अवाक हुई।

"अर गयी नहीं थी ? ऐ कौशिक बता न ?"

कौशिक ने हसी दबाकर गभीर स्वर म कहा, "सन 1982 म तुम मुझे अनाथ करके करीब चार महीने अपने मायके थी न   उसी की बात कर रहा है, साला   हा   हा   हा   हा !"

आप भी कमाल हैं वदांत बाबू, तब स आप यहाँ आये ही नहीं   हाँ सच तो, गुडा के पैदा होने क बाद से तो आपकी शक्ल ही नहीं दिखाई दी। य कहाँ इतने दिन ?' चित्रा ने कहा।'

'था तो यहीं ?'

"ताज्जुब की बात है। मैं तो सोच रही थी आप यहीं बाहर चले गये हैं। गुडा के अन्नप्राशन के समय पता लगाया   गया था। तब तो आप कलकत्ता म थे नहीं।"

'किसका अन्नप्राशन,'

'गुडा का। और किसी के लिए मेरे सिर म दर्द क्यो होता ?'

'गुडा ? गुडा कौन है ?'

कौशिक हो हो कर के हँस पडा। फिर बोला, यह भी नहीं पता गुडा हमार बटे का नाम है।"

'तेरा बेटा ?   तेरा बेटा ? ओह ! हा, समझ गया   ला तो दिखा जरा अपने बच्चे को।"

कौशिक के बदले जवाब दिया चित्रा ने, 'लाती हू। पहले चाय लीजिए। आज इतने दिनो पर अचानक कसे हमारी याद आयी ? कोई नयी खबर है क्या ?'

निश्चय ही चित्रा आँखें नचाकर और रहस्यमयी मुस्कान से वेदात के ब्याह की ओर इशारा कर रही थी।

कौशिक ने होठो म सिग्रेट दबाकर कहा   ई   खबर होगी ? इसकी तो वही पुरानी 'नयी एक खबर' झमेले म फस गय हैं।

"अरे बाप र ! बडी गलती हो गयी   ।'

[illegible]

[illegible] इतनी देर से बेचारी को [illegible] रहा है? क्या सोचेगी।"

बेचारा निश्चय ही अंतिम वाक्य पूरा होने के पहले ही नीचे उतर गया था।

कौशिक ने पत्नी को इशारा किया, "यह क्या मामला है?"

अब जो है सो है। जो करना है उसे खुशी-खुशी ही करना चाहिए।"

'उसका अपना भी तो घर है? फिर यहाँ क्यों?"

"अपना मकान तो है। पर क्या कोई जहां-तहां से लड़की लेकर अपने मकान पर ले जाता है? ऐसा साहस उसी एक लड़की के वक्त पैदा होता है जिसके कारण मर्दों की राजा बलि जैसी हालत होती है।"

गाड़ी कौशिक के सदर फाटक से थोड़ी दूर पर खड़ी करके वेदांत चला आया था। गाड़ी में एक औरत चुप चाप बैठी रह गयी थी। वह असहाय सी कौशिक के मकान की तरफ ताक रही थी।

इसी मकान में तो घुसे हैं भले आदमी। कह गये। अभी आ रहा हूं। फिर इतनी देर क्यों हो रही है।"

तभी वेदांत हड़बड़ाता हुआ आया और लज्जित हंसी हंस कर बोला, 'आप बैठी हैं न? मैंने तो सोचा था कहीं आप चली न गयी हों। डरता डरता आ रहा था कि आकर देखूंगा गाड़ी खाली सवारी गायब।"

युवती ने पान के पत्ते जैसे चेहरे पर टिकी अपनी दोनों बड़ी बड़ी आंखों को वेदांत के चेहरे पर टिका कर कहा—'आपने ऐसा क्यों सोचा?"

'इसलिए सोचा कि मुझे गये बहुत देर हो गयी थी। आप की बात तो एकदम भूल ही गया था। भूल ही गया था कि आप गाड़ी में बैठी इंतजार कर रही हैं। दोस्त के साथ बहुत दिनों के बाद मुलाकात हुई थी। उर अब उठिए चलिए। वेदांत ने गाड़ी का दरवाजा खोल दिया।

मगर युवती बाहर नहीं आयी। उसके चेहरे पर अनिश्चय का भाव था।

'उतरिए न क्या हुआ?'

कहां चलना है?'

"यही सामने जो घर है, हमारे दोस्त का है। अब कुछ दिन को रहना होगा, समझीं? मतलब जब तक आत्मीय लगे।

पान के पत्ते जैसा चेहरा फिर उठ

'मैं? मैं तो अपने घर जाऊंगा मैं

"मुझे यहा छोडकर चले जायेंगे ।"

"छोडकर क्यो चला जाऊ गा, थोडी देर बैठूगा, चाय-वाय पीयूंगा इन लागों के साथ आपका परिचय कराऊगा फिर जाऊ गा ।"

"और जाकर मुझे भूल जाइयेगा ।"

"भूल क्यो जाऊ गा ?"

"सडक पर गाडी मे दिठाकर जो आदमी किसी को भूल जा सकता है वह किसी के घर छोडकर भूल जाय तो आश्चय क्या ।"

वेदान ने लज्जित होकर कहा —' देखिये ऐसा है कि मैं थाडा भूल क्कड जरूर हू पर पाखडी नही हू । अब यह गलती तो हा ही गयी है ।'

पान के पत्ते जसे चेहरे वाली लडकी ने गाडी स बाहर आकर वदान की बाह पर हाथ रखकर करुण स्वर म कहा—' मुझे माफ कीजिए, मैं भी कमी कृतघ्न हू । आप को मेरी बजह से कितनी परेशानी हो रही है ।"

' अरे यह सब छोडिए, चलिए ऊपर चलते हैं ।'

अनिच्छा होते हुए भी वेदात के साथ कोठिय के गेट तक वह आयी । गेट के ऊपर बोगन बेलिया की लता छायी हुई थी और असख्य लाल, गुलाबी, फूल खिले हुए थे । लडकी का याद आया कि इसी तरह एक गेट के सामने वदात के साथ कल भी वह जा खडी हुई थी । तब उसके अन्दर आशका थी, अनिच्छा नही थी । उसके अन्दर एक आशा थी, विश्वास था, फिर भी कुछ ही मिनटो मे उसे उस घर से बाहर निकलना पडा । निश्चय ही उसके साथ उस घर का मालिक वन्ात भी बाहर आया था और रास्ता भी क्या था ?

वेदान की बहन ने कहा था भइया घर तुम्हारा है तुम जिसे चाहो लाकर रख सकते हो । मैं कुछ नही बोलूगी । मेरा अधिकार भी नही है । मगर एक बात कहूँगी जब तक माँ इस घर मे नही हैं, मैं इतनी बडी जिम्मेदारी अपने सिर नही ले सकती हू ।

' अरे, तुझे क्या जिम्मेदारी लेनी है । किसी कमरे म इनके रहने की व्यवस्था कर दें और फिर गोविन्द है वह देखभाल कर लेगा ।" (गोविन्द

नौकर का नाम है।)

"बेवकूफों जैसी बात तो करो मत। इतना ठगे गए हो, फिर भी तुमने कोई सीख नहीं ली। इस लड़की के बारे में तुम क्या जानते हो?"

'कहा न, कि रेलगाड़ी में मुलाकात हुई थी। बनारस से यहाँ तक पास-पास बैठकर आये हैं। हावड़ा स्टेशन पर इन्हें लेने के लिए इनके जो मित्र आने वाले थे, वे किसी कारणवश नहीं आ पाये। मैं भला इस अकेली महिला को ठगों बदमाशों के बीच असहाय कैसे छोड़ सकता था। जो पता इन्होंने दिया, उसकी खोज की पर मिला ही नहीं। अब तू ही बता, इस बेचारी को कहाँ छोड़ आता? आदमी ही तो आदमी की मुसीबत में काम आता है?"

"क्या, थाने में छोड़ आते।'

"थाने में? छि! छि! थाने में इस बेचारी का क्या होता, इसका पता है तुझे?'

'सब पता है। आख कान बन्द करके तो नहीं रहती। पर इस घर में रखोगे तो क्या कोई मुसीबत नहीं खड़ी होगी। मान लो कल को पुलिस केस हो जाए और औरत भगाने के आरोप में पुलिस हम सबको हथकड़ी पहना दे तो? क्या ऐसा होना नामुमकिन है?'

'नहीं, असम्भव तो नहीं है। फिर भी अगर हम हर आदमी पर अविश्वास ही करने लग जायें तो फिर जीना ही मुश्किल हो जाये।"

ठीक है।' बहिन ने कहा, 'तुम अपना जीना आसान बनाओ। मैं और तुम्हारे बहनोई अपने घर चले जाते हैं।"

'क्या बात करती हो? तुम लोग क्यों जाओगे कहीं? ये तो हमेशा के लिए रहने नहीं आई है। दो चार दिन या दो चार घंटे।'

मगर बहिन तो अपनी माँ की बेटी हैं। उन्होंने बात नहीं मानी तो नहीं ही मानी। इस पार या उस पार उनका निर्णय अंतिम था।

अतएव उस लड़की का भार गर्दन पर लिए वेदांत को अपने ही घर के गेट से बाहर आना पड़ा था।

'मैं भी कितना बेवकूफ हूँ, उसने सोचा, 'प्रतिज्ञा की थी कि लडकियो से दो हाथ दूर ही रहूँगा, पर आदमी न चाहते हुए भी कभी कभी झंझट मे फस ही जाता है। बहिन मेरी परेशानी और इस लडकी की असहायता को समझना ही नही चाहती। जब इसने मुझे अपना मददगार बना लिया है तो इसकी मदद तो करनी ही होगी।'

मां कहती है न 'भाग्य होना है। लगता है मेरे भाग्य म ये सब परेशानियाँ लिखी हुई थी और उस लडकी को पीछे की सीट पर बिठाकर गाडी चलाते हुए वह इस घटना क बारे मे सोच रहा था।

शनिवार को माँ के पास बनारस पहुँचा था वेदात। जैसे बीच बीच मे एकाएक उसे माँ की याद आती और वह बनारस पहुँच जाता। ठीक वैसी ही यात्रा इस बार भी थी, दो दिन वहाँ रह कर उसने मा के हाथ का खाना विश्वनाथ मंदिर का प्रसाद पेडा और विश्वनाथ गली की मलाई की प्रसिद्ध दुकान की मलाई और ऊपर से माँ की डाँट-डपट धिक्कार और तिरस्कार खाता रहा। फिर सब कुछ धूल की तरह झाडकर वह निश्चित होकर कलकत्ता वापिस जा रहा था।

दो दिनो मे ही वापिस जा रहा था, इसलिए बथ का रिजर्वेशन नही हो पाया था। वेदात ने सोचा था एक रात का ही तो कुल मामला था। इसीलिए फर्स्ट क्लास का टिकट लेकर भी उसे सेकेंड क्लास मे यात्रा करनी पडी थी।

सोचा, चलो एक रात का ही तो मामला है, इसीलिए बथ के लिए टी० टी० ई० के पीछे कहाँ भागे, इतने लोग जहाँ बिना रिजर्वेशन के जा रहे हैं, एक और सही, समय से काफी पहले ही वेदात स्टेशन आ गया था और एक खाली सा डिब्बा देख कर खिडकी के पास वाली एक सीट दखल कर ली थी और निश्चित हो गया था। एक रात काटने के लिए इतना काफी था।

मगर कौन जानता था कि वह एक रात की यात्रा 'सहस्र रजनी चरित्र' बन जायेगा।

ट्रेन छूटने ही वाली थी, धक्कामुक्की अपनी चरम सीमा पर पहुंची हुई थी कि उसी में से रास्ता बनाती-हाँफती हुई उस युवती ने वेदांत से कहा था, "मुझे जरा खिड़की के पास बैठने देंगे ?"

प्रस्ताव सुन कर वेदांत ने मुंह फाड़ कर उसकी ओर देखा।

पान के पत्ते जैसा चेहरा, उस पर टँकी खूब बड़ी बड़ी दो आँखें, साँवला रंग, लम्बी छरहरी देहयष्टि। उमर बाइस से बत्तीस के बीच कुछ भी हो सकता था।

कान पकड़ कर वेदांत ने कसम खायी थी कि अब वह कभी किसी औरत के मामले में दखल नहीं देगा। मगर इस परिस्थिति में अपनी प्रतिज्ञा बनाये रखने के लिए उसे क्या करना चाहिए यह सोच न पाकर वेदांत बागची जल्दी से अपनी सीट छोड़ कर उठ खड़ा हुआ और बोला, "बैठिए।'

युवती के गले में एक स्कार्फ बँधा था, जिसे खोल कर उसने एक हाथ में ले लिया, थोड़ी देर फूला हुआ दम साधती रही, फिर वेदांत की ओर देखकर कहा, "आप बंगाली हैं यह देखकर ही आपसे ऐसा अन्यायपूर्ण प्रस्ताव करने का मुझे साहस हुआ।'

वेदांत ने मन ही मन कहा चलो कम से कम तुम्हें यह अहसास तो है कि तुम्हारा प्रस्ताव अन्यायपूर्ण है पर उस युवती से कहा कोई बात नहीं। आप आराम से बैठिए। इसमें अन्याय की क्या बात है ?'

उस समय भी डिब्बे में युद्धक्षेत्र का दृश्य उपस्थित था। ठेलाठेली, धक्का मुक्की पूरे जोर पर थी। युवती आराम से फैलकर बैठ गयी। पास में रखा वेदांत का छोटा सूटकेस आधा उसके आँचल के नीचे ढक गया। दो मिनट बाद वेदांत की तरफ एक बार देखकर सूटकेस की तरफ इशारा करके युवती ने पूछा, 'यह आपका है ?"

जी हाँ।'

युवती ने सूटकेस को उठाकर अपने पाँवों के साथ सीट के नीचे रख कर और यथासंभव सिमट कर वेदांत को बैठने का निमंत्रण दिया।

जगह कोई खास न थी और उतनी-सी जगह म वदात के बैठने पर तय
। कि युवती के शरीर स्पर्श से बचना असभव था। कहना चाहिए
कायदा सट कर ही बैठना पडता दोनो का।

वेदात ने यथास्थान खडे खडे ही कहा "नहीं, ऐसे ही ठीक है।"

"ठीक है मान ? क्या रात भर खडे खडे सफर करेंगे ?"

बाद म देख लेंगे।'

"इसका मतलब है मुझे ही उठना पडेगा। ठीक है, मैं कही और
गह तलाशती हूँ। आप अपना सीट लीजिए।"

वदात हँस पडा, "यह रिजर्व्ड कपाटमट नही है। इसम जो जहाँ बैठा
, वही उसकी सीट है। चुपचाप बैठी रहिये।

"बैठे रहना ही तो मुश्किल है।"

"आपका क्या असुविधा है ?"

युवती ने आँखा के इशारे से अपने बगल म बठे आदमी की ओर
दात का ध्यान आकर्षित किया। लम्बी दाढी मूछ वाले एक स्थूलकाय
ज्जन बैठे थे। सूटकेस हटाने से कुछ इचा की जगह निकली थी उस पर
क्रमश काबिज होते जा रहे थे। ट्रेन के हिलने के ताल के साथ ताल
मला कर उनका थुलथुल शरीर थलथला रहा था और पीछे छोड कर
सी की दिशा म लुढक पडने के लिए पूरी तरह सन्नद्ध था।

"आप मेरे और इनके बीच पार्टीशन बन सकते हैं।" मुस्करा कर
वती ने कहा।

'कमाल है !' वेदात ने सोचा, 'श्रीमती जी, आपन हम क्या समझ
लिया है ? मैं पहले तो आपनी सीट आपको दू फिर आपके लिए
ार्टीशन बनू ? वाह !'

मगर मन ही मन क्या नही कहा जाता।

मगर लडकी पर आने वाली मुसीबत का देखकर फिर उसका मन
लटा, 'सच, यह आदमी तो उसके ऊपर गिरने ही वाला है।'

"भाई साब ! भाई सा आ ब।" उसने हाथ से थुलथुल, दाढी-

मूछधारी व्यक्ति के कंधे हिलाये। फिर कहा, "मेहरबानी करके थोड़ी जगह दीजिए।"

उक्त सज्जन ने बिना आँखें खोले बड़बड़ाकर कुछ कहा, जो स्पष्ट नहीं हुआ।

वेदांत ने कंधे को थोड़ा और झकझोरा। उक्त सज्जन की आँखें अध खुली हो गइ। झुंझलाकर कोई भद्दी बात कहने ही जा रहा था कि सामने खड़े लम्बे-चौड़े युवक को देखकर मुह की बात मुह में रोक कर थोड़ा एक तरफ खिसक गया कोई आधा इंच।

युवती ने अपने को थोड़ा और समेट लिया। इसके फलस्वरूप जो छ इंच जगह बची उसमें वेदांत ने अपने शरीर को किसी तरह फंसा लिया।

गाड़ी चलती रही और पार्टीशन की दीवाल पर एक ओर से थुल थुल शरीर दूसरी ओर से कोमल नारी देह के धक्के लगते रहे। साथ में नाक बजने की गुड़गुड़ाहट कानों में कटु संगीत घोलती रही। अचानक एक समय संगिनी ने दबे स्वर में कहा— 'सुनिये।'

वेदांत ने गर्दन घुमाकर युवती की तरफ देखा और पूछा—"मुझ से कुछ कह रही है?"

'हाँ! आप से ही कह रही हूँ। मैं अकेली हू यह बात किसी को मालूम नहीं होना चाहिए।'

"मैं समझा नहीं।'

"मेरा मतलब है कि अगर लोग यह समझेंगे कि मैं अकेली जा रही हू तो बदमाश लोग मेरे पीछे पड़ जायेंगे।'

वेदांत एक पल गम्भीर होकर सोचता रहा फिर बोला—"घर से अकेली निकलने का रिस्क जब लिया था तो उसी समय यह बात सोचनी थी।"

युवती ने एक गहरी सांस ली और कहा— 'बहुत मजबूरी न होती तो ।

"ठीक है, मुझे क्या करने को कहती हैं ?"

"और कुछ नहीं। सिर्फ ऐसा भाव दिखाइये जैसे मैं आप के साथ यात्रा कर रही हूँ।"

"अजीब बात है।"

"अजीब तो है, पर आप बंगाली हैं इसलिए।"

"क्या इतनी बड़ी गाड़ी में अकेला मैं ही बंगाली हूँ ?"

इस पर युवती चुप हो गयी। तेज हवा को रोकने के लिए युवती ने खिड़की बन्द कर रखी थी और चुपचाप सिर नीचा किये बैठी रही।

उसकी चुप्पी ने वेदांत के मन में अपने उत्तर की कठोरता का एहसास दिलाया। ऐसी कठोर बातें करना उसका स्वभाव नहीं है। फिर किसी लड़की के मामले में उसकी गर्दन न फंसे इसी कारण कठोर होने का नाटक कर रहा था। मगर नाटक तो ज्यादा देर नहीं चल सकता। थोड़ी देर बाद ही वह बोल उठा "मैं बंगाली ही हूँ, यह कैसे पता चला आपको ?"

युवती थोड़ा हिली, हालांकि हिलने की जगह न थी। फिर बोली "पहले पहल तो मुझे भी भ्रम हुआ था लेकिन आप के मुँह से एक ऐसा शब्द निकला जो किसी बंगाली के मुँह से ही निकल सकता है। जिस समय बड़े-बड़े बक्से और गठरी, मोटरी लेकर मेरे पीछे पीछे देहातियों का एक दल शोर मचाता हुआ घुसा, तो आप के मुँह से निकला 'सरछे' (मारे गये) यह शब्द कोई बंगाली ही कह सकता था।"

"अच्छा, मुझे तो याद नहीं है मेरे मुँह से यह शब्द निकला था। मगर कभी कभी आदमी असावधानी में कुछ ऐसा कह या कर जाता है जो उसे परेशानी में डाल जाता है।"

इस बार भी न चाहते हुए भी वेदांत के मुँह से ऐसी बात निकली थी जो शायद उस युवती को ठेस पहुँचा गयी। वह फिर चुप हो गयी।

ट्रेन पूरी रफ्तार में चल रही थी, हिलती डोलती और झकझोरती हुई। वेदांत के बगल में बैठे दाढ़ी मूछधारी थुलथुल जी बार बार अपना हैवी वेट वेदांत के ऊपर ठेल रहे थे और अपना दुग्ध युक्त सिर प्रेयसी को

तरह उससे कंधों पर रख रहे थे। वेदांत बार-बार उनके इस प्रणय निवेदन को परे ढेल रहा था और सोच रहा था कि अगर वह 'पार्टीशनवाल' की भूमिका में न उतरता तो इस बेचारी तनवंगी महिला का क्या बनता।

चाहते हुए भी वेदांत महिला के घनिष्ठ स्पर्श से बच नहीं पा रहा था। उनकी स्थिति मन से नहीं तो तन से गुड़ और चींटे की हो रही थी। वेदांत को नारी शरीर से ऐसे घनिष्ठ स्पर्श की आदत नहीं थी और न संस्कार ही था। उसे आशंका हो रही थी कि युवती कुछ अन्यथा भी सोच सकती है। लेकिन संतोष केवल इतना था कि उसके चेहरे पर न तो दाढ़ी मूंछ का जंगल था और न उसके शरीर से कोई अरुचिकर बास ही आ रही थी और न ही वह युवती के कंधे पर अपना सिर ही रख रहा था।

गंतव्य नजदीक आ रहा था। लोग अपने जूते चप्पलों, छाता, सुराही संभालने लगे थे। युवती ने वेदांत से निवेदन किया—"आपसे एक और मदद चाहती हूँ। अगला स्टेशन पर गाड़ी रूकेगी तो मुझे भूलकर जल्दी से निकल मत जाइयेगा। प्लेटफार्म के बाहर साथ साथ चलेंगे।"

'फिर ?' वेदांत का दूध से जला मन छाछ देखकर डर गया।

'फिर आपकी छुट्टी। यहां कोई मुझे लेने आया होगा।'

"आह अच्छा।

थोड़ी देर चुप्पी रही। फिर अचानक युवती ने कहा—"अच्छा बताइए तो प्लेटफार्म टिकट कहाँ मिलता है ?' "क्या ? आपको प्लेटफार्म टिकट की क्या जरूरत पड़ गयी ?'

'नहीं प्लेटफार्म टिकट नहीं चाहिए। मुझे चिट्ठी में लिखा गया है कि मैं उसी जगह खड़ी हूं वर्ना भीड़ में ढूंढना मुश्किल होगा।

'लेने कौन आयेगा आपको ?'

है कोई।'

वेदांत इस कोई का अर्थ समझ गया मुस्कुराया। युवती भी मुस्कुरायी। मगर उस कोई नाम के सज्जन का प्लेटफार्म टिकट की खिड़की के पास तो क्या किसी भी खिड़की के पास भीतर बाहर कहीं भी

पाया नही जा सका। पान के पत्ते जैसे चेहरे और बडी-बडी कोमल (अब करूण और अश्रुपूरित) नयनो वाली युवती को साथ में सहजे वेदात बार-बार प्लेटफॉर्मो, बुकिंग ऑफिस की खिडकिया और टैक्सी स्टड पर चक्कर लगाता रहा, मगर 'कोई' नही दिखाई दिया। अन्त म थकान से चूर होकर ये दोनो एक जगह बैठ गये। थोडी देर चुप रहने के बाद वेदात ने कहा—"इस प्रकार एक अनिश्चित कायक्रम क भरोसे आप का अकेली घर से बाहर निकलना नही चाहिए था।"

इस पर युवती की बडी बडी आँखें फिर डवडबा आयी। वेदात को अपनी दुर्गति से गुस्सा भी आ रहा था और युवती की दुर्गति की बात सोचकर करुणा भी ऊपज रही थी।

आखिर मे उसने युवती से प्रस्ताव किया कि—"अच्छा पता बताइए आप को छोड आता हू।"

' पता तो मालूम नही।"

वेदात गुस्से से प्राय फट पडा—"अच्छा तमाशा है। स्टेशन पर जो आपको रिसीव करने आनेवाला था वह कौन था? अगर आपका आत्मीय था तो उसका पता आपको मालूम होना चाहिए। समझ में नही आ रहा है कि हम मे से कौन धोखे का शिकार हो रहा है। कैसा है यह आप का रिश्तेदार? कौन है आपका?''

'वह मेरा रिश्तेदार नही है।" एक पल रुककर थूक निगल कर युवती ने कहा— मित्र है।"

' अच्छा। मतलब वह मित्र जो भविष्य मे परम गुरु होने वाले हैं। क्यों?"

रुआँसी होती हुई भी युवती थोडा शरमा गयी।

'अच्छा, बताइये यह मित्रता हुई कसे? मित्र सहपाठी था, या पडोसी या भाभी का भाई या बुआ का भाजा या पिता के मित्र का बेटा या बडे भाई का मित्र या दीदी की सहपाठिनी का भाई या क्या?" वेदात ने पूछा।

"ओह। आप भी अजीब हैं। पर, छोडिए, आप मुझे मेरे हाल पर छोड दीजिए। अब और आपको परशान करना नही चाहती। मेरा जो होना होगा, होगा। मेरी किस्मत ही खराब है तो आप या कोई और भला क्या कर सकता है।"

"अच्छा। इतनी देर के बाद अब आपको अपनी किस्मत की याद आयी है। मैं जानना चाहता हू किसके भरोसे आपने इतना बडा कदम उठाया। यहाँ आपको रिसीव करने कोई आयेगा यह आपको किसने बताया? निश्चय ही कोई चिट्ठी आयी होगी?'

'हूँ।"

'तो उस चिट्ठी म पता भी होगा?'

'हाँ है, तेरह बटा तीन, नीलमणि सरकार लेन।'

'आगे?'

"आगे कुछ नही।

'कलकत्ता कितना है यह भी नहीं? अब यह तेरह बटा तीन नील-मणि सरकार लेन कहाँ है कसे पता चलेगा। कलकत्ता क्या कोई कस्बा है?"'

'कैसे बताऊँ? मैं कलकत्ता का कोई कोना नही जानती। पाँच छ बरस की उमर मे कलकत्ता छोड कर जाना पडा था तब से पहली बार आना हुआ है।'

कलकत्ता छोड कर जाना पडा था—इस तरह कहा गया था कि उसम निहित वेदना से वेदात का दिल पिघल गया। उसने अपेक्षाकृत नरम आवाज म पछा, 'बनारस म कहाँ रहती थी?'

"हाउस कटोरा।'

"ओह! मेरी मा अहल्याबाई के पास रहती है।'

"आपकी मा बनारस रहती हैं?" युवती का चेहरा खिल उठा।

'हाँ मा के पास ही गया था।'

'पहले से पता होता तो आपकी माँ से मिलकर आती। काशी अकेली

रहती है?'

"हा, मेरे ऊपर गुस्सा करके।"

युवती वेदात की बात पर हँस पडी।

"आप जैसे सज्जन बेटे पर गुस्सा करती हैं। विश्वास तो नही होता।"

"मगर आदमी जो बाहर से दिखाई देता है, भीतर से उसका उल्टा भी हो सकता है। खैर, बनारस मे आपके कौन रहते हैं?"

"मामा मामी।'

"उन्होंने आपको अकेली आने कैसे दिया?"

युवती थोडा हँसी फिर बोली—"आप को ऐसा लगता है कि मैं उनसे पूछकर आयी हूँ?"

'इसका मतलब है चोरी से भागकर आयी है?'

"है तो ऐसा ही।"

"और जिसके भरोसे आपने अपनी नाव मझधार मे डाल दी है वह खिवैया ही गायब है क्यो? आश्चर्य की बात है।"

युवती ने वेदात की ओर एक पल देखा, उसके चेहरे पर क्रोध और अपमान की झलक दिखायी दी। एक पल बाद बोली—"मेरे कारण आप को अभी तक इतना कष्ट हुआ इस कारण आपका चिढ जाना स्वाभाविक ही है। मगर किसी के बार मे बिना उसकी परिस्थिति को जाने कुछ कहना ठीक नहीं है। आप मरी चिंता न कर ।'

'यहाँ से खिसक लें क्यो? ठीक है, चलता हूँ नमस्कार।"

लम्बे-लम्बे डग भरता हुआ वेदात जाने लगा। युवती दो पल स्तब्ध खडी रही फिर उसके पीछे दौड पडी। पास आकर हाँफते हुए बोली—"मुझे क्षमा कीजिए। जब तक मेरी मुलाकात मेरे मित्र से न हो जाय तब तक लगता है आपको ही मेरा भार वहन करना होगा।

वेदात ने स्वीकृति मे सिर हिलाया और वसे ही चलता रहा। युवती भी पीछे-पीछे दौडती रही।

शेष -

टक्सी वाले को बुलाकर उसन युवती को टैक्सी म बठने का इशारा किया, फिर खुद भी बैठ गया। टैक्सी के चलने पर वेदात ने पूछा—"आप के मित्र का नाम जान सकता हूँ ?"

"जी, शिशिर चक्रवर्ती नाम है उनका।"

वेदात को बचपन मे पढी कविता की दो पक्तिया याद आ गयी।

'कौन जाति क्या नाम है
कहाँ पे उनका धाम है
मैं तो उनको पहचानू ना
पहचाने मेरे दो नयन।"

ये बातें उसने मन ही मन सोची फिर बोला—"आपको जो चिट्ठी मिली थी उसका लिफाफा देख सकता हूँ ? शायद उसम पोस्ट आफिस की मुहर हो। वसे हमारे पोस्ट आफिस पता नही पानी से ठप्पा मारते हैं या स्याही से मजाल है कि किसी की समझ मे आ जाय कि किस डाकखाने से किस तारीख को चिट्ठी चली है या किस तारीख को पहुँची है फिर भी कोशिश कर देखने मे क्या नुकसान है।

युवती ने सहमते हुए कहा—"लिफाफा तो मैंने फेंक दिया।"

"लिफाफा भी फेंक दिया। मैं क्या योही कहता हूँ कि आप का यह सारा किस्सा बडा अजीब है, बडा रहस्यमय, लिफाफा फेंकने की क्या जरूरत थी ?"

'घर मे किसी की नजर न पड जाय। इसलिए लिफाफा फाडकर फेंक दिया।"

"तो निश्चय ही चिट्ठी भी फाडकर फेंक दी होगी ?'

"जी नही ! चिट्ठी हमारी एक क्लासफेलो के पते पर आयी थी।"

ओह ! पढाई लिखाई क्या बनारस मे हो रही थी ? '

'अगर हाय स्कूल तक की पढाई को पढाई लिखाई कहते हैं तो बनारस मे 'कन्या कुमारी बालिका मन्दिर' से दसवी पास किया है मैंने।"

वेदात पूछना चाहता था कि श्रीमान शिशिर चक्रवर्ती महाशय से

आपका परिचय कितना पुराना है और उसका सूत्र क्या है ? मगर भद्रता बनाये रखने के लिए वह चुप लगा गया। मगर पता नहीं क्या सोचकर युवती खुद ही बोल उठी—"शिशिर मेरी क्लासफेलो के दूर का भाई लगता है दुर्गापुर में नौकरी करता है।'

युवती ने अपने हैंडबैग से चिट्ठी निकाली और वेदान्त की तरफ हाथ बढ़ाकर कहा—"पढ़कर देखिये, अगर इससे कुछ पता चले।

' मर गया मैं तो। आप क्या सोचती हैं कि मैं इतना अभद्र हूँ कि आपका प्रेम-पत्र पढ़ूगा ?'

"हुँह ! प्रेमपत्र ! इतना साहस नहीं है इसमें एकदम सादी चिट्ठी है। पढ़ भी लेंगे तो कुछ नहीं होगा।'

"जो भी हो दूसरे की चिट्ठी पढ़ने की मेरी आदत नहीं है।"

"कोई मेरे मामा को यह बात सिखा देता।"

"आप के मामा को ? ओ हो हो।" बात समझकर हँस पड़ा वेदांत। फिर बोला—'तभी क्लासफेलो का पता देना पड़ा है मित्र को। सचमुच कुछ लोगों को बड़ी बुरी आदत होती है।"

चिट्ठी नहीं पढ़ी गयी। फिर भी बातों बातों मे ढेर सारी सूचनाएँ प्राप्त हुईं। पता चला युवती का नाम मुक्ति है। उसके मामा मामी उसे बिगाड़कर मुक्नी कहते हैं। यह भी पता चला कि बचपन मे मा-बाप को खोकर उसे मामा मामी का आश्रय लेना पड़ा था। मामा मामी खाना कपड़ा तो जरूर देते होंगे। वरना मुक्ति बेचारी जिंदा कैसे रहती मगर यह भी सही है कि जो भी खिलाते पिलाते हैं सब वसूल कर लेते हैं।

यह भी चल रहा था मगर मुश्किल ये है कि अब मामाजी अपने एक विधुर बिहारी बंधु के भग्न हृदय और टूटी गृहस्थी को जोड़ने की महान इच्छा मे अपनी इस भांजी को बिहारी बाबू के गले बाँधने के लिए कृत संकल्प है।'

"बिहारी के साथ क्या ?"

' तो क्या हुआ ! बंगाली मे अच्छी ही बंगला बोलता है।"

"उसका पहले विवाह हो चुका है।'

"तो क्या हुआ ? क्या दोहाजू का ब्याह होते कभी नहीं सुना है।'

'और उमर ?"

"दूर-दूर, मर्द की कोई उमर देखता है। ऐसा मोटा ताजा है कि सात बाघ भी मिलकर न खा सकें। अभी भी रोज एक सौ दंड बैठक लगाता है, मुगद्दर भाजता है और मेरी उमरभी बहुत कच्ची नहीं है और सबसे बड़ी बात है कि लक्ष्मी पैर तोड़कर उसके घर बैठी हुई है। मामी ने कहा था—' पागल लड़की सारी धन दौलत की मालकिन बन जायेगी तू। पाँच बेटियाँ हैं तो क्या हुआ, लड़का तो कोई नहीं। दो की शादी पहले ही हो चुकी है एक आरा जिला और बलिया जिला। उनकी माँ जब जिन्दा थी तब भी बाप उन्हें कभी नहीं बुलाता था। नई पत्नी मिलने पर तो बुलाने का सवाल ही नहीं उठता। छ, आठ और दस बरस की जो लड़कियाँ हैं उनको ब्याह कर घर से भगाने मे मुश्किल से पांच सात साल लगेंगे। उसके बाद तो सारे कन्टक साफ। पैसा ही तेरा ओढ़ना होगा, पैसा ही तेरा बिछौना। विश्वनाथ गली और दशाश्वमेध रोड पर उस आदमी की बनारसी साड़ियों की दो दो दूकानें हैं। चाह तो सुबह शाम बनारसी साड़ी पहन सकेगी। इसके अलावा तुझे अकेलापन भी नहीं होगा। तेरे वर का कहना है कि वह तेरे मामा मामी को भी वह अपने पास ही रखेगा। उसे असुविधा भी क्या है। इतना बड़ा घर है अनगिनत कमरे हैं। ऐसे वर के नाम पर तू नाक भौं सिकोड़ रही है।'

कौशिक के घर मे थोड़ी देर तक मुक्ति तनाव म रही। मगर बिना की बातों से धीरे धीरे वह सहज हो गयी इसके अलावा उनका बच्चा किसी को भी पल भर म तनाव विहीन कर देने म माहिर था। ससार मे तनाव के जितने भी कारण हैं जितने भी मनोमालिन्य, लज्जा, सकोच और जितने भी दुःख हैं। सभी को एक शिशु की मुग्ध करने वाली मुस्कान पल-भर म दूर कर देती है।

उस घर मे मुक्ति वेदात की भावी पत्नी के रूप मे निश्चय ही नहीं आयी थी मगर चित्रा और कौशिक उसके पीठ पीछे मजाक मे कहते थे— "देखना, यह नीलमणि सरकार लेन कल्पना लोक मे ही रह जायेगा और मुक्ति की मुक्ति वेदात के ही हाथो होगी।"

मगर वेदात बागची भी अपने ढग का अकेला आदमी है मुक्ति को वहा छोडकर जाने के बाद से सारा दिन उसने तेरह बटा तीन नीलमणि सरकार लेन के बारे मे सूचना एकत्र करता रहा और शाम को फिर कौशिक के घर हाजिर हुआ।

"आ गये, थैक्यू" कौशिक ने कहा।

"क्या? आप लोगो ने यह समझ लिया था कि मैं एक लावारिस महिला को आपकी गदन पर डालकर खिसक जाना चाहता हू?"

चित्रा ने मुस्कराकर कहा—'ऐसी बेवकूफी की बात हम क्यो सोचते हम तो बल्कि सोच रहे थे कि आप इस बहुमूल्य हीरे का लाकर म रख कर निश्चिन्त हो गये हैं। लेकिन लॉकर क्या करे रत्न ही परेशान है। सोच रहा है कि यह लाकर पूरा-पूरा सेफ नहीं है। इसीलिए शाम से ही आँखें दरवाजे पर लगी हुई है और बार बार छज्जे पर जाकर बाहर झाँक आ रही हैं।" चित्रा ने हँसकर कहा।

"देखता हूँ, कथाकार की गहस्थी चलात चलाते आपकी भाषा मे भी साहित्यिक पुट आ गया है।" वेदात ने कहा।

"आप भी तो अच्छे लाल बुझक्कड हैं। ये भाषा क्या आधुनिक कथाकार कौशिक राय की है? यह तो पुराने जमाने की, बकिमचद्र चटर्जी युग की भाषा है। खैर, मैं कहना यह चाहती थी कि आपकी मित्र थाडा परेशान दीख रही हैं।"

कौशिक राय ने कहा—"यह तो स्वाभाविक ही है। इसके लिए तुम उन्हे दोष नहीं दे सकती। हमारे साथ उनका परिचय ही कितना है।'

"और बागची महाशय के साथ तो लगता है युगो-युगो का परिचय है।" चित्रा ने कटाक्ष किया।

"अच्छा फालतू बातें छोडो। भद्र महिला को खबर दो कि उनके परिचित मित्र आ गये है।"

"इतनी आसानी से मैं परिचित मित्र बनने का दावा नही कर सकता। लगता है उन्होंने तुम लोगों को परेशान किया है।" वेदात ने कहा।

"तब तो आप को जो लग रहा है वह सही नही है। बेचारी अत्यन्त सभ्य, शान्त और बुद्धिमती लड़की है। भीतर से इतनी परेशान है यह भी आसानी से पकड में आने देना नही चाहती है।" चित्रा ने कहा।

फिर भी आपने पकड ही लिया।' वेदात ने कटाक्ष किया।

कौशिक ने कहा— किसी किसी के पास "एक्स रे आई" होती है। वह चित्रा के पास भी है। चित्रा, उन्हें बुलाओ। गुड्डा ने तो कुछ ही घंटो मे उनको एकदम कब्जे मे कर लिया है।'

चित्रा के पीछे पीछे गुड्डा को गोद मे लिए मुक्ति ने कमरे मे प्रवेश किया।

"आपको तो इतनी ही देर मे इसने खूब पहचान लिया।' वेदात ने कहा।

मुक्ति मुस्कुरायी।

उसके चेहरे पर एक रोशनी सी बिखर गयी।

'इतने सुन्दर व और सुशील बच्चे का यह क्या नाम रख दिया है आप लोगो ने ?' मुक्ति ने कहा।

कौशिक ने उत्तर दिया— 'इसका नामकरण गलत नहीं हुआ है यह बात धीरे धीरे आप समझ जायेंगी ?

'अच्छा मैं चाय चढाकर आती हूं। चित्रा ने कहा।

'प्रस्ताव तो सुन्दर है मगर आपको तकलीफ होगी वेदात ने कहा।

मुक्ति ने तुरत हँसकर कहा—' आप अगर चाय, चीनी, दूध कहाँ है मुझे बता दें तो मैं बनाकर ला सकती हूँ।'

चित्रा हँसकर बोली— मैं तो बताने के लिए कब से उत्सुक होकर बैठी हूँ। आप मुझे नही जानती हैं मैं बडी काहिल हूँ। एक दो बार आप

चाय बनाकर पिला देंगी तो मुझे किसी और के हाथ की चाय ही अच्छी नहीं लगेगी।"

कौशिक काफी देर से यह कहने के लिए भीतर ही भीतर उबाल खा रहा था कि वे लोग दूसरे कमरे मे जाकर बैठें। मगर उसकी समझ मे नही आ रहा था कि यह बात वह कैसे कहे। उसे पत्रिका के लिए आज ही किस्त भेजनी है। मगर उसे लिखने का वक्त नही मिल रहा है। हाय, रे भद्रता! तेरे कारण आदमी कितना कष्ट पाता है।

"अभी से इतनी आदत मत खराब करो। कही नीलमणि सरकार लन वाल साहब हाजिर हो गये तो क्या करोगी?"

वेदात ने माथे पर हाथ रखकर नाटकीय मुद्रा म कहा—'काश, हमारी किस्मत इतनी अच्छी होती य लीजिए ढूढ ढाँढकर पूरे कलकत्ते का यह नक्शा मिला है मुझे। मगर इसे तो देखकर ही मेरा सिर चकरा रहा है इतना छोटा टाइप इस्तेमाल किया गया है कि मैं तो दस दिन म भी इसको पूरा-पूरा नही पढ सकता।"

वेदात ने एक पुराना कलकत्ता गाइड उनके सामने रख दिया।

दूसरे दिन खूब सवेरे वेदात हाजिर हुआ। आते ही बोल उठा—'मिसज राय इस कमरे म अड्डा जमाने से तो कौशिक का जीवन अधकार मय हो जायगा। चलिए बरामदे मे बैठते हैं।"

कौशिक और चित्रा न आँखो ही आखो मे एक दूसरे से आश्चय भाव प्रकट किया। कल रात म ही कौशिक ने चित्रा स कहा था—"भई यह तो नही चलेगा, अब तो यह रोज ही आयेगा। और मेरा लिखना पढना चौपट होगा इसकी कोई और व्यवस्था करनी होगी।" लेकिन कुछ कोई व्यवस्था नही करनी पडी। सब अपने आप हो गया। फिर भी कौशिक राय मित्र के प्रति कृतज्ञता ज्ञापन के बदले कौतुकपूण हँसी हँस रहा था। मानव स्वभाव भी कैसा अजीब है।

बरामदे म बैठकर चाय की प्याली मुह से लगाते हुए वेदात ने मुस्कि

से पूछा—"कुछ पता लगा ?" मुक्ति ने नही म सिर हिलाया।

"अच्छी तरह देख लिया है न ? हो सकता है यह किसी पतली बाइ लेन का नाम हो।"

मुक्ति के कुछ बोलन के पहले ही चित्रा बोल उठी, "सारा दिन तो उसी मे आखें फोडती रही है बेचारी। मैंने तो कहा भी था कि इस तरह तो आपकी आखें खराब हो जायेंगी।"

"यही तो। अच्छा, मिसेज राय एक काम क्यो न करा जाय ?"

"क्या बोलिए।"

"लगता है नीलमणि सरकार लेन पुराने कलकत्ता मे होगा। नाथ म ही होगा। उधर के डाकखानो से पता लगाया जाय तो कसा रहे। पोस्ट मैन तो हर जगह जाते हैं।"

"आइडिया तो अच्छी है।' चित्रा ने कहा, "मगर काम काज छोडकर गाडी लेकर घूमने म भी काफी वक्त लगेगा। और फिर साउथ कलकत्ता म भी तो नीलमणि सरकार लेन हो सकता है।"

"हा, हो तो सकता है। एक बात और है। मुक्ति जी ने कहा था यह जगह एक मेस है। क्यो न हम कलकत्ता के सारे मेसो म खोज करें ?"

मुक्ति चुप ही थी। इस बार थोडा हँसकर बोली "'यह तो भुस के ढेर मे सुई खोजने जैसी चीज होगी।'

"हाँ है तो।' चित्रा ने कहा, 'अच्छा, आप लोग थोडी देर सुई खोजिए। तब तक मैं खाने पीने की व्यवस्था करू। बागची बाबू, आप भाग मत जाइयेगा। सब साथ बैठकर खायेंगे।'

'मुझे तो माफ कीजिए।'

नही, दोपहर को भी आपने डूब मार दी। अब इस वक्त तो अपने मेहमान के साथ बैठकर खा लीजिए।' चित्रा ने कहा।

"क्या बात करती हैं। हम सभी आपके गेस्ट हैं। खर, बताइये क्या पकान जा रही है। पहले स ही जान लू तो भूख बढ जायेगी।"

"रहने दीजिए। मुझे आपकी भूख का पता है।'

"ज्यादा न भी खा सकूं तो क्या, अच्छा खाना मिल जाय तो कोई कम भी नहीं खाता। मगर जब से माँ गुस्सा होकर काशी जा बैठी हैं, वह भी निल हो गया है। मेरी बहिन के निर्देशन और परिचालन मे जो प्रोडक्शन होता है उसकी बात न करना ही अच्छा है।"

'मैं कहूँगी उनसे कि आप उनकी शिकायत करते है।' चित्रा ने कहा।

"जरूर कहियेगा। शायद उसी से कुछ सुधार हो जाय।"

चित्रा चली गयी तो मुक्ति ने कहा, "इस तरह खोज पाना क्या संभव होगा?"

"तो कैसे खोजें, आप ही बतलाइए।" वेदांत ने कहा।

"मैं क्या बतलाऊँ?'

'अगर पोस्टल जोन का पता होता तो चिट्ठी डालकर भी पता लगाया जा सकता था।'

यह होता तो यह करते' जैसी बातो तक ही उस दिन का कथोपकथन सीमित रहा।

इसके बाद दिन पर दिन बीतते रहे, पर नीलमणि सरकार लेन के शिशिर चक्रवर्ती का पता न लग सका।

इधर मुक्ति और वेदांत की बातचीत के विषय भी बदलने लगे। तेरह बटा तीन नीलमणि सरकार लेन के अलावा भी बातें होने लगीं। जैसे कभी वेदांत कहता, लगता है आजकल इस सड़क का नाम कुछ और हो गया है। छोड़िए, घर में बैठे बैठे बोर हो रही होंगी। चलिए थोड़ा घूम आते है। मिसेज राय, आप भी चलिए न।"

मगर मिसेज राय के पास घूमने का वक्त न होता। चित्रा कहती, "भाई साहेब, मुझे तो मरने की भी फुरसत नहीं है। आप लोग ही आइए।"

तो फिर जिसे मरने की फुरसत थी उसे ही लेकर घूमने निकल पड़ता वेदांत। निकलना पूरी सज धज के साथ होता। इस बीच सज धज के

उपकरण भी काफी मात्रा मे एकत्र कर लिये गये थे।

पहले ही दिन मुक्ति को राय परिवार मे छोडकर वापिस आने के पहले वेदांत ने चित्रा को अलग ले आकर कहा था, "मिसेज राय आप तो देख ही रही है यह लडकी एक कपडे मे ही घर छोडकर चली आयी है। तो कपडे लत्ते तो चाहिए ही इसे।"

"हा, वह तो है ही और महिलाओ का तो कपडे लत्त के अलावा भी बहुत कुछ चाहिए होता है। मगर इस बारे मे आप क्यो चिंता करते हैं? मैं भी तो हूँ इसी घर म।"

वह तो ठीक है। वह तो ठीक है, मगर मेहरबानी करके अगर यह रख सके ।"

पाकेट मे जो भी पैसे थे उन्हे निकालकर उसने मेज पर रख दिया।

'अरे मो यह क्या कर रहे हैं? चित्रा ने कहा।

"वाह! खरीद फरोख्त करने जाइयगा तो इसकी जरूरत पडेगी ही, अभी तो इतने ही हैं बाद म और दे जाऊँगा। जो भी जरूरत हो मुझे बता दीजियेगा, मगर किसी चीज की कमी नही होनी चाहिए।"

"देखिए बागची बाबू, औरतो की साडी, वग चप्पल, छतरी म कितना लगेगा उसकी कोई लिमिट नही होती। हाँ, आप अगर बता सकें कि आपकी बांधवी को किस स्केल पर सजाना है तब जरूर अदाजा लग सकता है।' चित्रा ने हँसकर कहा।

'मेरी बांधवी? वदात अवाक हुआ फिर बोला, "इसका मतलब है आपको जो हिस्ट्री बतायी गयी है उस पर आपका विश्वास नही।

हद करते हैं आप भी। बांधवी बनान म कितना वक्त लगता। और फिर हमशा के लिए भी तो बाधवी बनाया जा सकता है। इसम हिस्ट्री आपकी यहाँ बाधा देने आयगी।

' मगर उस गुर म तो पहले ही बालू पड गया है। मिसज राय। बीच म यह जो तेरह बटा तीन नीलमणि सरकार लेन की दीवार खडी है।' वेदांत ने कहा।

चित्रा की हँसी अब रुक न सकी।

हँसने मे कोई बाधा भी न थी। मुक्ति उस समय स्नान घर म कपडे धो रही थी।

"सच, आपके लिए बडा दुख हो रहा है बागची बाबू। मेज पर कितने पैसे छोड जा रह है, इसका हिसाब तो लेते जाइए।"

"आप ही देख लीजिए। ज्यादा नही हैं।' कहकर वदात उठ खडा हुआ।

इस बीच चित्रा ने रुपये गिन कर बताया—"सात सा अस्सी हैं।'

"यह तो बहुत कम हैं। आजकल साडी-वाडी के दाम बहुत बढ गये हैं। चलिए, एक सेट ता कम स कम हो ही जाएगा।"

चित्रा न शतानी स कहा था, 'बहूसजान वाला एक सेट होगा कि नही यह नहीं कह सकती पर हाँ, एक लेखक की बहू के साथ पहनकर निकलने लायक तो एक से ज्यादा सेट हो जायेंगे।'

'आप भी ।' कहकर हँसते हुए वदात चला गया था।

इसके बाद से चित्रा का साथ लेकर मुक्ति और वेदात मार्केटिंग करने कई बार निकल। ढेर सारी चीजें और कपडे खरीदे गये। चित्रा के लिए भी साडियाँ खरीदी गयी। मना करने पर गुस्सा और रूठ जाने का दौर चला।

'क्या रे कौशिक, तरी बीबी को दो एक साडी क्या मैं उपहार मे नहीं दे सकता? मेरा इतना भी हक नही।"

'आफकोर्स हक है। दो एक क्या दस बीस साडिया भी दे डाल तो मुझे आपत्ति न होगी। मेरा भार ही हलका होगा। कौशिक राय ने कहा।

'ठीक है। मिसेज राय, सुन लिया न।"

"सुन लिया। मगर एक बात पहले ही कहे दे रही हूँ, बाद मे उसे "प्रेमोपहार' मानकर मुह मत सुजाना।" चित्रा ने पति की ओर कटाक्ष करके कहा।

"मुझे कोई डर नही है। मुझे पता है वह प्रेमोपहार किसके लिए आयेगा। तुम अपना मह धो रखना।"

पहले पहले मुक्ति चित्रा के बेटे का साथ ले जाना चाहती।

'चल गुड्डा, घूमने चलते हैं।"

वापसी म कितन ही गुब्बारे खिलौने लेकर गुड्डा वापिस आता।

मगर छोटे बच्चे को लेकर हर समय तो निकलना मुश्किल है। उसका अपना समय है नहाने खाने और सोने का।

मुक्ति कभी कभी कहती, 'बेकार मे इधर उधर चक्कर लगाने का फायदा क्या ?'

'वह भी जरूरी है। हो सकता है कही राह म आपके नीलमणि सरकार जी से मुलाकात हो जाय" वदात कहता।

"ओ मा ! आप लोग तो बेचारे का नाम ही भुलवा देंगे। किसी दिन मैं भी शिशिर चक्रवर्ती की जगह नीलमणि सरकार कह बैठूंगी। मुक्ति ने भौहें टेढी की।

"नाराज हो गयी ? अच्छा अबस मैं सावधान रहूँगा। दरसल जानती हैं बात क्या है ? यह शब्द आजकल भगवान के नाम जसा हो रहा है। दिन रात जुबान पर रहता है। बीच बीच म किसी अनजाने इलाके से गुजरते हुए गाडी खडा करके राहगीरा से पूछने लगता हूँ—भाई, इधर कोइ नील मणि सरकार लेन है क्या ? वसे मैं तो आपके शिशिर चक्रवर्ती महाशय को पहचानता नही, सामने से गुजर जाय तो भी मेरे लिए उनको पहचानना मुश्किल ह।'

उसी शिशिर चक्रवर्ती को खोज निकालने की तरह तरह की परिकल्पनाए बनाई जा रही थी।

एक दिन वदान्त ने कहा 'मुक्ति जी, आपने एक दिन कहा था शिशिर बाबू दुर्गापुर मे काम करत हैं तो किस डिपाटमेंट मे हैं बता सकती हैं। आसानी से पता लगाया जा सकता है।'

मगर मुक्ति इस बारे मे कुछ भी नही जानती थी। मुक्ति तो अपनी दोस्त के माध्यम से शिशिर के साथ पत्र व्यवहार करती थी। वह चिट्ठी लिखकर अपनी दोस्त को दे आती थी और वह शिशिर को भिजवा देती थी।

इस पर वेदात ने सुझाया कि दुर्गापुर किसी को भेज कर ही दफ्तर, हर मुहल्ले म जाँच करवाई जा सकती है कि इस नाम का कोई व्यक्ति वहाँ है या नही। दुर्गापुर म फिर भी सम्भव है पता लगाना। मगर इस योजना मे भी व्याघात पहुँचा क्योकि मुक्ति ने बताया कि शिशिर ने चिट्ठी में लिखा था कि बहुत कोशिश करके भी क्वाटर का जोगाड न कर पाने के कारण उसने किसी ऐसी नौकरी की तलाश करनी शुरू की, जिसम तत्काल क्वाटर मिल जाय। ऐसी एक नौकरी उसे विशाखापट्टनम म मिल गयी है। क्वाटर भी मिल गया है पर इसके लिए लिख कर देना पडा है कि वह विवाहित है और इसी भरोसे उसे कलकत्ता चले आने को लिख दिया है।

'तो फिर इसका मतलब है कि दुर्गापुर म शिशिर बाबू नही है '

'नही।'

"अच्छा ! एक काम करते हैं। अखबार मे विज्ञापन दिया जाय ?' वेदात ने कौशिक राय से राय मागी।

'ठीक तो है। कल ही दनिक 'नवदिगत' का आदमी मेरे पास आयेगा।"

विज्ञापन का मसौदा तयार हुआ— 'शिशिर चक्रवर्ती, आप जहा कही भी हो तुरत सपर्क करें—मुक्ति।'

बाप रे ! मेरा नाम देंगे ?" मुक्ति काप उठी, "तब तो मेरे लिए बडी मुश्किल खडी हो जायेगी। कही मामा की नजर पड गयी तो ।'

"अहो ! बनारस मे आपके मामा को 'नवदिगत' पढने को कहाँ मिलेगा ? वेदात ने कहा।

'अगर कलकत्ता का उनका कोई रिश्तेदार पढने के बाद उन्हे सूचित

कर दे, तो ?"

विज्ञापन का मसौदा दुबारा तैयार किया गया—'तेरह बटा तीन नीलमणि सरकार लेन के शिशिर चक्रवर्ती निम्नलिखित वाक्स नम्बर पर सपर्क करें। बहुत आवश्यक है।"

केवल 'नवदिगत' मे नही, कलकत्ता और भी कई दैनिको मे उपरोक्त विज्ञापन निकाला गया, मगर कही से कोई उत्तर नही आया।

अन्त मे निराश होकर एक दिन वेदात ने मुक्ति से पूछा, "अब क्या किया जाय, मुक्ति ?"

इस बीच वेदात 'आप' से 'तुम' पर आ गया था। 'मैं क्या बताऊँ।' मुक्ति ने भी हताशा भरे स्वर में कहा।

और क्या करता वेदात, सिवाय इसके कि मुक्ति के टूटे दिल को बहलाने के लिए उसे सिनेमा, थियेटर दिखाने ले जाता फाइन आर्टस की प्रदर्शिनी दिखा लाता, या फिर कही घूमने निकल जाते दोनो। कभी कभी चित्रा का भी साथ जाना पडता।

एक दिन वदात की बहिन ने उसे घर दबोचा, "भैया, यह तुम दिन रात कहा गायब रहते हो ? कहाँ घूमते रहते हो ?"

"कही भी नही ? यो ही।'

सुना है रेलगाडी मे जो लडकी तुम्हारी गदन पर सवार हो गयी थी, उसे कधे पर उठाये सारे शहर मे पागलो की तरह फिर रहे हो ? लोग अध तो नही हो गये हैं।

"आह ! तेरी भाषा तो एकदम "मार कटारी हो रही है खूब। कहाँ से सीखी ऐसी भाषा ? अपने 'उनसे ?

' ठीक है, मेरी बातो को हवा मे उडा दो पर मा को तो जवाब देना ही होगा। माँ आ रही हैं।"

माँ आ रही हैं ?' चौक पडा वेदात "किसने कहा ?"

' कहेगा कौन ? माँ की चिट्ठी आई है।'

' कहा, दिखाना जरा।"

"तुम्हारी नहीं है।"

"ठीक है, तो पढ़ के सुना दे।"

"मुझे भी नहो, उन्होंने अपने दामाद को लिखी है चिट्ठी।"

"अच्छा ! अच्छा ! तो जीजा जी ने अपने साले के अध पतन की कहानी लिखकर अपनी सास को उसके उद्धार के लिए बुलाया है।"

वेदांत की वहिन दबने वाली न थी और फिर माँ आ रही थी इसका भी एक मनोवैज्ञानिक जोर था, बोली, "तो और उपाय भी क्या था? तुम इस बुढ़ापे म तमाशा करते फिरोगे तो क्या इससे हमारी बदनामी नहीं होगी? बाद मे माँ कहती उन्हें जनाया ही नही गया।"

'वाह तेरा दायित्वबोध कितना प्रबल है। ख़ैर, माँ आ कब रही है?"

"परसों।"

'किस ट्रेन से?"

"पता नहीं।'

'कमाल है। स्टेशन नही जाना क्या?"

"वह तुम अपने जीजा जी से पूछो।"

"मेरी प्यारी बहिन, आज अपने पतिदेव से इस बात का पता लगाकर कल सुबह मुझे बता देना, प्लीज?"

बात थोड़ी व्यंग्यपूर्ण अवश्य थी, मगर बहिन-बहनोई ने इसे अपना अपमान माना। कई बार सोचा अपने घर लौट जायें, पर साले के मोह म ऐसा न कर सके? और फिर "बागची आर्ट प्रेस" भी तो अनाथ हो जाता। बागची बाबू के तो आजकल पंख उग आये हैं।

बहिन को तो किसी तरह टाल गया वेदांत, मगर माँ के आने की खबर से वह थोड़ा सहम जरूर गया। अभी कुछ ही दिन पहले तो मा से कह आया था, "ठीक है, अगर तुमने ऐसी ही भीष्म प्रतिज्ञा कर रखी है तो मैं भी अब यहाँ नही आऊगा, मैं भी देखूगा बेटे का मुह देखे बिना तुम कितने दिन रह सकती हो।"



ओह ! आजकल के भीतर ही अगर वह अपराधी शिशिर चक्रवर्ती कहीं पकड़ मे आ जाय तो उसकी चीज उसके हाथ म थमा कर निश्चिन्त हो जाता। फिर देख लेता अपने बहिन बहनोई को।

मगर क्या ऐसा सभव है ? अगर ऐसा हो जाय तो ? इस प्रश्न के उत्तर म उसका हृदय हाहाकर कर उठा।

उधर लेखक महोदय और उनकी घरनी के बीच इसी प्रसग म हसी मजाक चल रही है।

'प्रेमी तो लापता हो गया ह। तुम्हारी सखी का दिल क्या सचमुच चूरमार हो गया है ?" कौशिक ने पूछा।

"हमारी सखी ?'

'अरे भाई ! तुम्हारी सखी नहीं तो तुम्हारे बेटे की आटी कहा। क्या लगता है तुम्ह ?'

'मुझे और क्या लगेगा। जो देख रही हूँ वही लग रहा है। कहा वह मेस म रहने वाला बेचारा शिशिर चक्रवर्ती—पता नही कसा है उसका रूप गुण ? और कहा कार्तिकेय जैसा सुन्दर और धनवान तुम्हारा दोस्त वदास ? दिल भला टूटे भी तो कैसे ?"

"तुम तो प्रेम पर से मेरा विश्वास उठा के रहोगी।'

क्यो ? जो देख रही हूँ, वही कह रही हूं। मुझे नही लगता कि शिशिर चक्रवर्ती के साथ मुक्ति का कोइ गहरा प्रेम था। उसका तो अवसर भी नही मिला था उन्ह। लगता है लडके को ही इस पर तरस आया होगा और उसने कदम आगे बढाये होगे। मुक्ति के लिए वह डूबते का तिनके का सहारा था। उसने उसे ही अपना खिवया मान लिया था। हालांकि ।'

'वाह वा ! वाह वा ! तालियां। क्या विश्लेषण है। पत्नी का हाथ पकड कर अपनी ओर खीचते हुए कौशिक न कहा 'बसम ! अगर तू कलम उठा ले न, तो मेरा बाजार खतम ही समझा।

"रहने दो यह मस्केबाजी।' चित्रा ने मुस्कराते हुए कहा, 'तुम्हारे दोस्त का क्या हुआ है? कल से आये नहीं।'

करा से क्या? कहो कल नहीं आया। आज का दिन तो अभी बाकी है। आ भी सकता है।

उस समय गुडा को उसकी आटी बरामदे में कहानी सुना रही थी।

"सुनो! सोच रहा हूं साले वेदांत को ।'

"फिर!"

"अच्छा बाबा अच्छा! तुम्हारे बागची बाबू से कहता हूँ शिशिर चक्रवर्ती को ढूंढने का नाटक खतम कर इसे ले जाकर अपनी घरनी बना।"

"मगर बागची बाबू के घर में तो हवा उल्टी बह रही है। पहले ही दिन तो बेचारी को दरवाजा दिखा दिया गया था।'

'वह तो उसकी छोटी बहिन है?

मगर क्या इसीलिए उसके विरोध को भी छोटा मानने की मूर्खता की जा सकती है।"

'अच्छा! उसकी माँ भी तो है। गुस्सा करके काशी या वृदावन कहीं चली गयी है।"

"काशी। ठीक ही तो है। मा के पास लौटते वक्त ही वेदांत को मुक्ति मिली थी।

"गुड। अब अगर उसकी माँ का पता लेकर उन्हें पत्र लिख दिया जाय तो इस मामले को सही रास्ते पर लाया जा सकता है।'

'कैसे?'

"क्या? मुक्ति की एक पासपोर्ट साइज फोटो निकलवाकर लिफाफे मे भरकर भेज दूं और साथ में एक चिट्ठी लिख दूं—चाची जी आपकी अनुपस्थिति में वेदांत बौखल की तरह इधर उधर घूमता रहता है। उस पर जोर डालकर थोडा राजी किया गया है शादी के लिए। लडकी का फोटो साथ में भेज रहे है। आपको अगर फोटो पसन्द हो तो आकर कमान समालिए। लडकी बनारस की ही है और कुलीन ब्राह्मण परिवार की है

वगैरह वगैरह।"

"आइडिया तो अच्छी है। फोटो देखकर नापसंद होने का तो सवाल ही नहीं उठता। इसके अलावा, कुलीन ब्राह्मण, बनारस के वासी आदि बातें भी फेवरेबुल ही हैं। तुम एक काम करो सामने की जया स्टूडियो से मुक्ति का एक फोटो निकलवा लो।

' चलो, समस्या का एक समाधान तो निकला। अब देखते हैं कन्या और वर क्या कहते हैं?'

' कहेंगे क्या? कहेंगे—जैसी आप लोगों की मर्जी और पति पत्नी ठठाकर हँस पड़े।

जिस समय यहा इस बात पर विचार किया जा रहा था कि वेदांत की मा को कैसे बुलाया जाय, उस समय वेदांत की माँ आ चुकी थी।

मा किस गाडी से आ रही है यह सूचना न पाकर वेदांत बहुत दिनों से बंद पड़े मा के कमरे की सफाई में जुट गया। सहसा सीढ़ियों के नीचे से मा की आवाज सुनाई पड़ी। गाड़ी का समय कैसे बताती जब यही तय नहीं था कि किस गाड़ी से आ रही हूँ। जो गाड़ी मिली उसी को पकड़कर आ गयी।'

वेदांत ने हाथ का झाड़न एक कोने में फेंक दिया और सीढ़िया से नीचे उतरने जा रहा था कि देखा मा ऊपर आ रही हैं। मा ऊपर आ गयी तो वेदांत ने प्रणाम करने के बाद पूछा—"क्या बात है। अचानक।

माँ ने तीखा उत्तर दिया—' क्यों मेरे अचानक आने से तुझे असुविधा हो गयी क्या?"

वेदांत के मन में धुक धुक हो रही थी। फिर भी गंभीर स्वर में उसने कहा— 'हा थोड़ी असुविधा तो जरूर हुई।'

' क्या? क्या कहा तूने? मेरे आने से तुझे असुविधा हो रही है?'

वेदांत ने बहन की तरफ चोरी से एक नजर डालकर कहा— होगी नहीं असुविधा। मैं छुट्टा साँढ हो रहा था अपनी मर्जी से उल्टा

सीधा ।"

माँ ने बेटे की हँसी से उज्ज्वल चेहरे की ओर बेटी के बेजार मुख को बारी बारी से देखा। फिर मुस्कुराकर बोली—'बच्चा, उल्टा सीधा करने में तो तुम्हारा मुकाबला नहीं है। खैर, अभी मैं पहले नहाऊँगी। अपनी ही देह से घिन लग रही है।"

माँ नहाते नहाते सोच रही थी। पिछली बार उसे लौटा देने के बाद माँ को बहुत बुरा लगा था। बेटे पर ममता हुई थी। इसीलिए दामाद की चिट्ठी पाते ही भागी दौड़ी चली आयी थी।

क्या वह बेटे पर अविश्वास करती है ? हां करती तो है, इसलिए नहीं कि वह बेटे को चरित्रहीन, आवारा समझती है बल्कि इसलिए कि वह भोलाभाला और गैर दुनियादार है। पता नहीं कौन फालतू लड़की उसे बेवकूफ बनाकर लूट रही है। जो भी हो वेदांत माँ से कभी झूठ नहीं बोला।

'क्या आपका फोन है।

यह कोई अनमावित बात नहीं थी, फिर भी वेदांत का दिल धक् धक करने लगा। और कोई नहीं। वही है कल से ही जा नहीं पाया वह। जबकि कल ही एक नया सूत्र पाकर शिशिर की खोज में निकला था। एक बस कंडक्टर ने बताया था कि नीलमणि नहीं, नीलकांत सरकार लेन बेलिया घाटा की तरफ है। एक होटल नाम है ओरियंट होटल।

वेदांत ने सोचा नीलमणि और नीलकांत में कोई खास फर्क नहीं है। और होटल है तो मेस भी हो सकता है। मन आशान्वित था, पर तभी माँ के आने की खबर मिली और सब कुछ अस्त व्यस्त हो गया।

बेचारी मुदित। कल से इन्तजार कर कर के हारकर आज एक दुस्साहसपूर्ण काम कर बैठी है।

कांपते हाथों से रिसीवर उठाकर हलो कहते ही दूसरी ओर से कौशिक राय की आवाज सुनाई पड़ी, "अरे सुन चाची जी माने तेरी माँ का बनारस

का पता क्या है?"

फिर एक बार दिल कांप उठा। लगता है कुछ गचपच हुआ बठा है। हो सकता है मुक्ति के मामा को माँ का पता किसी तरह चल गया हो।

"अरे! बोलता क्यो नही। मैं कागज कलम लेकर बठा हू।'

"मा का पता लेकर क्या करेगा?"

"है जरूरत। तू बोल।"

'मगर माँ तो आज सवेरे यहाँ आ गयी हैं।'

"अच्छा!" कौशिक खुश होकर बोला "इसे ही कहते है भाग्यवान का बोधा भगवान ढोते हैं।"

"मतलब?'

"मतलब कुछ नही। मा का गुस्सा खतम हुआ?'

'अभी पता नही। मा आते ही स्नान घर म चली गयी। कोई बात-चीत नही हुई है।'

"ठीक है। शाम को घर पर होगी मां?

'जरूर। मगर मामला क्या है?'

"आकर बताऊँगा। ओ० के०।"

कौशिक न फान रख दिया। वेदांत जैसे चारो खाने चित्त हो गया। सब खतम। नाटक के अंतिम दृश्य का पर्दा गिर गया।

क्या पता माँ के साथ साथ मुक्ति का वह मामा टामा भी न आया हो और शाम को यहाँ हाजिर हो जाय।

मुक्ति को फिर खो देना होगा इस आशका स जस उसके सीने म कोई छुरी घुप गयी हो। और तभी एक प्रश्न राक्षसी मुद्रा मे मुह फाडे सामन आ खडा हुआ। मुक्ति को तुमने पाया ही कब? पाने के बाद ही तो खोना होता है। पता नही कब से मै उसे अपनी समझने लगा मेरे इतने दिनो के अर्थ-हीन जीवन को अर्थ देने वाली। यह कैसा अहसास है?

शिशिर चक्रवर्ती नामक एक व्यक्ति को पागलो की तरह मैं इसीलिए तो खोज रहा हूँ कि मुक्ति को उसके हाथ सौंपकर मुक्त हो सकू? कभी

भी तो मुक्ति से नहीं कह पाया कि 'मुक्ति, खोजा-खोजी का यह प्रहसन बन्द करो। तुम्हें मैं नहीं छोड़ सकता। एक नहीं, एक सौ शिशिर चक्रवर्ती भी तुम्हें मुझसे छीनकर नहीं ले जा सकते। मुक्ति तक विवेक सभ्यता भद्रता मैं कुछ नहीं जानता। तुम मेरी हो, बस, यही मेरी अंतिम बात है।"

नहीं, बदात नामक यह बुद्धू कभी ये बातें नहीं कह सका। यहाँ तक कि उसे कहने का खयाल भी नहीं आया। वह केवल उस अचानक प्राप्त सुख की तात्कालिकता में ही डूबा रहा। वे दोनों एक लक्ष्य लेकर बाहर निकल रहे हैं और कुछ देर एक दूसरे के सान्निध्य में बिता रहे हैं ये आवेगमय रंगीन दिन चिर स्थायी हों, पानी के बुलबुले की तरह मिट न जाएं।

एक सूखे पत्ते का जो हवा में उड़ रहा था, पीछा करते हुए वे यहाँ तक आ पहुँचे थे। धीरे धीरे मुक्ति के उन्नत चेहरे पर भी आशा और खुशी लौट आयी है। नाना हाथों में पैकेट संभाल जब वह बाहर से आती और पुकारती, "गुड्डा, ओ गुड्डा सरकार? आइए देखिए, आपके लिए दुकान लदकर लायी हूँ।" तो उसे देखकर लगता वह सद्य किशोरी है।

'गुड्डा की आदतें तो गुड्डा की आदतें खराब कर देंगी।" किन्नी पीठ पीछे कहती।

"बदात की इस विवेक हीनता से सिर्फ गुड्डा का नहीं, उसकी आदतों की आदतें खराब हो रही हैं। भविष्य में अगर कभी सचमुच नीलमणि सरकार लेन के शिशिर महोदय आ पहुँचे तो मुक्ति की इस फजूल खर्ची का ठेला उनसे बर्दाश्त होगा?' कौशिक कहता।

मगर यह तो पीठ पीछे की बात है। मुँह पर कोई कुछ नहीं कहता। सभी उस अस्थायी आनंद और उल्लास की तरंगों पर बह रहे थे।

मन ही मन सभी समझ रहे थे यह सुख अस्थायी है। यह तो फतिंगे के पंख के नीचे आश्रय लेने जैसी बात थी। एक डर बदात को चारों ओर से घेर रहा था। कौशिक किस लिए माँ से मिलना चाहता है?

उसे लग रहा है कोई भयानक दंड उसे मिलने वाला है। वह अपने को धिक्कार रहा है 'मैं कितना गधा, कितना बड़ा गधा। मैं सिर उठाकर

क्या नहीं कह पा रहा हू कि जहन्नुम म जाय शिशिर चक्रवर्ती। मैं हूँ मुक्ति का पति।"

रूपकथाओं और गप्पो मे इस तरह की घटनाए आती है कि किसी व्यक्ति को राजा की आज्ञा से सूली पर चढ़ाने ले जाया जा रहा है कि एका एक ऐसा कुछ हो जाता है कि वही राजा उस हाथी पर चढ़ाकर माथे पर राजतिलक लगाकर सिंहासन पर बिठाता है और राजकन्या का हाथ उसके हाथो म देता है।

ऐसी घटनाएँ पुराने जमाने म होती थी पर उस दिन ऐसी ही एक घटना आज के जमाने मे हुई। वेदांत वागची की किस्मत म भी सूली पर चढ़ते चढ़ते हाथी पर चढने का योग आ उपस्थित हुआ।

कौशिक के आने के पहले ही वेदांत कहीं निकल गया।

वेदांत की माँ कौशिक की पत्नी को कौशिक के बचपन की कुछ घटनाएँ प्रत्यक्षदर्शी की हैसियत से बताकर गुडा स उसकी तुलना करती रही।

फिर मुक्ति का फोटो देखकर बोली, "यही लडकी है ? है तो सुन्दरी।'

"हाँ, अब घेर घार कर ब्याह कर देना ही अच्छा होगा।' चित्रा ने कहा।

' लडकी कहाँ की है ? काशी की है न ?

हा।"

पिता का नाम ?'

"माता पिता इसके बचपन मे ही भगवान को प्यारे हो चुके है ?' कौशिक राय ने कहा।

माँ बाप मर चुके हैं, पर उनका नाम धाम, कुल गोत्र, राशि आदि तो नही मार गये हैं।" वेदांत की माँ ने कहा।

"वह सब पता करके बता दूगा।"

'वह काशी म कहाँ रहती थी ?"

"मामा के घर। वे लोग चित्रा के दूर के रिश्तेदार हैं। मामा मामी के दुर्व्यवहार से तग आकर हमारे पास चली आई है। अब मैं और चित्रा ही उसके ब्याह की चिन्ता करेंगे।"

"शायद खुकू ने इसी लडकी की बात लिखी थी ?'

यह क्या बात है। चित्रा के पाँवो के नीचे से जमीन खिसक गयी। वह चुप रही है।

वेदात की माँ न ही फिर कहा, "हाँ मेरी लडकी न लिखा था पता नही कहाँ की एक लडकी के साथ वेदात खब घूम फिर रहा है। लगता है यही लडकी है ?

चित्रा ने सूखे गले स कहा, "खूब तो क्या हाँ, कभी कभी मेरे साथ ।'

'ठीक है। मैं समझ गयी।" वेदात की माँ ने कहा, "मुझे लडकी बहुत पसन्द है। मैं इसे अपनी बहू बनाने का राजी हूँ।"

'तो फिर अभागे शिशिर चक्रवर्ती की भूमिका समाप्त। अब उस मच पर से ही नीचे धकेल दो।" वापसी मे कौशिक राय न चित्रा स कहा, "मुझे तो यह भी सदेह है कि वाकई कोई शिशिर चक्रवर्ती नामक आदमी था भी।"

'नही, था तो सही।' चित्रा ने कहा—"इतनी बातें बनाकर बोलन वाली लडकी वह नही।'

'तब शायद नायक ने नायिका को पानी मे उतार कर और यह कह कर पीछे से भी आ रहा हूँ भाग खडा हुआ।'

ये हो सकता है। प्रेम करना कितना आसान है उसकी जिम्मेदारी लेना उतना आसान नही है।'

थोडी देर बाद कौशिक ने फिर कहा—"अच्छा चित्रा, हमारे आने

नी बात जानकर भी वह साला भाग क्यों गया ?'

"ओह, फिर तुमने ?"

' चित्रा, तुम्हारे हाथ जोड़ता हूँ मुझे दो चार दफा उसे गाली दे लेने दो।'

"तुम्हें अपनी कहानियों में पूरी स्वाधीनता मिली हुई है। कभी-कभी तो जिस भाषा का तुम इस्तमाल करते हो, उसे पढ़कर मुँह शर्म से लाल हो जाता है। समझ में नहीं आता कि तुमने ये सब गालियाँ सीखी कहाँ से।"

'लेखक को सब कुछ सीखना पड़ता है और वह भी घर में बैठे बैठे ही। नरक का वर्णन करने के लिए दांते को क्या नरक जाना पड़ा था ?'

ठीक है तुम्हारी जो मर्जी हो करो, मगर खबरदार गुड्डा के सामने कभी इस तरह की भाषा मुँह पर न लाना।

"मेरा क्या दिमाग खराब हुआ है। तब साला की जगह 'बेटा' शब्द का इस्तेमाल करूँगा। शायद बदात भागा इसलिए होगा कि नर्वस हो गया होगा।"

"क्या ?'

"सोचा होगा कि मैं उसकी मां से उसकी निन्दा करूँगा।'

"धत्त, ऐसी बात भला वे क्या सोचेंगे ?"

'इनका स्वभाव है। जब किसी मामले में फँस जाता है तो ऐसी ही उल्टी सीधी बातें सोचता है।'

'खैर, इस बार वह अध्याय भी समाप्त हो रहा है।' चित्रा ने हँस कर आगे कहा—"बागची बाबू की मां इतनी आसानी से मान जायगी मैंने नहीं सोचा था।"

मैंने भी। उन्होंने सोचा होगा कि लड़की काम मील जानि गाम लेकर किचपिच करना ठीक नहीं है। किसी तरह छुट्टा साढ़ का बचाव में बंद करना जरूरी है। जिस लड़की के साथ लटका है उसी के साथ मढ़ दो।

वदात की माँ ने बेटे से कोई जिरह नही किया। इधर उधर की बातें करती रही। फिर कौशिक और चित्रा के आने की सूचना दी और दोनो की प्रशसा की। फिर शिकायत की— तेरा ऐसा क्या काम पड गया था कि तू उस समय गायब हो गया?" फिर एकाएक जैसे कोई बात याद आ गयी हो उन्होने पूछा— हाँ रे एक अच्छी अच्छी लडकी देखी है मैंने पान के पत्त जैसा चेहरा, बडी-बडी आँखें मुझे बहुत पसन्द है। मैंने तो कह दिया है कि मैं उसे अपनी बहू बनाऊगी।'

वेदान्त के ऊपर जैसे आवाज पट पडा। यह कैसी बात एकदम से पक्का ही कर लिया?" यह बहन और बहनाई का षडयन्त्र होगा। वेदात अपना गुस्सा और क्षोभ रोक न सका बोला—"मैंने कभी तुम से कहा है कि मैं शादी करूँगा और तुरत तो पक्का भी कर लिया। नही नही मैं ब्याह नही करूँगा।"

"अभी नही करेगा तो क्या मेरे मरन पर करेगा? मगर मैं सुनने वाली नही हूँ। रोज कोई न कोई तमाशा खडा करते हो चारो ओर निंदा होती है और बोलते हो ब्याह नही करूँगा। ब्याह तो तुम को करना ही है।"

वाह! मुझसे एक बार पूछने की जरूरत भी तुम्हें महसूस न हुई!

माँ ने गभीर स्वर मे कहा— "लडकी देखेगा तो तू भी पसद करेगा ले फोटो देख ले।

माँ ने आँखो मे मुस्कराते हुए फोटो वेदात की ओर बढा दिया फोटो पर नजर पडते ही जैसे वेदात के चारो ओर प्रकाश और भीतर बयार प्रवाहित हो उठी। कौशिक के उस रहस्यमय प्रश्न का उत्तर मिल गया। ठीक उसी समय जब वेदात ने सोचना शुरू किया था कि इस अर्थहीन खोजबीन का समाप्त करके घोषणा कर देना होगा कि मुदित का छोड पाना उसके लिए असभव है तभी चित्रा भाभी ने यह कर्यशाजी की कृतज्ञता से उसका मन भर आया।

मा ने बेटे के मुँह की ओर देखकर बनावटी गुस्से से पूछा—

"क्यों रे, ऐसी सुंदर लड़की भी तुझे पसंद नहीं आयी है क्या ?"

वेदांत ने धीमे से कहा—बुरी नहीं है।"

"तुझे यह 'बुरी नहीं है' लग रही है ? तो फिर कैसी लड़की चाहिए तुझे।"

"अच्छा बाबा बहुत अच्छी है। अब खुश ?"

"तो फिर बात पक्की करूँ ?"

"बात तो पक्की तुम कर ही चुकी हो।"

कौन जानता था कि बागची कोठी के उस अधेड़ वदांत बागची के मन में कितने दिनों बाद ऐसा रंग चढ़ेगा जिस रंग से पृथ्वी आकाश सब रंगीन हो उठेंगे।

अचानक वदांत को ध्यान आया कि मुक्ति को व लोग अंधेरे में क्यों रखे हैं क्या उससे पूछना जरूरी नहीं है ? अगर वह मेरे ऊपर आरोप करे और कहे—'छि तुमने इतना बड़ा विश्वास घात किया मेरे साथ ! तुमने शिशिर की खोजने की कोशिश नहीं की। सिर्फ खोजने का नाटक करते रहे क्योंकि तुम्हारी नीयत ठीक नहीं थी। वेदांत की आँखों का प्रकाश बुझ गया।

कौशिक राय बड़े मनोयोग से लिखने में लगा हुआ था कि अचानक पीछे से गर्दन पर एक रद्दा लगा और वदांत की आवाज सुनाई पड़ी साले तुम भीतर भीतर यह क्या षडयंत्र रच रहा था।"

कौशिक ने गर्दन सहलाते सहलाते कहा—'अबे गधे तू जानता नहीं कि मैं स्पौंडिलाइटिस का मरीज हूँ।"

'तेरी तरह चौबीस घंटे गर्दन घिसने वाले को स्पौंडिलाइटिस नहीं होगी तो किसे होगी ? साले, तुम मेरी माँ के साथ क्या बात करके आया है।'

कौशिक ने बड़े आराम से कहा—' क्या। मुक्ति के साथ तेरा ब्याह ठीक करके आया हूँ कोई बुरा तो नहीं किया है।'

"वडा अच्छा काम किया है मुक्ति से पूछा था।"

"अरे छोड, उससे क्या पूछना, ऐसा अच्छा वर ऐसी अच्छी सास, रुपये पैसे की कमी नहीं किसी लडकी को और चाहिए क्या।"

'और कुछ नही चाहिए।" तेरा लिखना पढना सब बेकार है।

"अच्छा वावा, तू खुद ही जाकर पूछ ले, मुझे लिखने दे।"

'भाड मे जा।"

"मैं तो भाड मे जाऊगा, तू रसोई घर म जा। तेरी प्रेयसी सब्जी काट रही है। तू खुद उससे जो पूछना है पूछ ले।'

हा, मुक्ति सब्जी ही काट रही थी।

चित्रा ने कहा—' इतनी महीन वदगोभी काट रही है कि तेरी सास देखे तो मोहित हा जाय।"

मुक्ति मुस्कुरा पडी। तभी वेदात कमर म घुसा।

उस देखकर चित्रा न मुक्ति को सलाह दी—"अब रहन दो नही तो नजर इधर उधर हाने से ऊँगली भी काट लोगी।"

"आप भी चित्रा दी ।' मुक्ति ने शरमाते हुए शिकायत की।

वेदात ने आवाक होकर देखा मुक्ति के चेहरे पर गुस्से का लेशमात्र भी न था उल्टे वेदात को देखकर उसका चेहरा खिल उठा।"

"मुक्ति !"

मुक्ति ने कोई उत्तर नही दिया, सिफ आख उठाकर उसकी ओर देखा चित्रा इस बीच दूसरे कमरे मे जानबूझकर चली गयी थी।

"मुक्ति, विश्वास करो, मैं इस षडयत्र म शामिल नही हूँ।

'मुझे मालूम है।'

"तो फिर ?"

मुक्ति ने हल्के से हसकर कहा—"तो फिर और क्या ?" और फिर सब्जी काटने मे लग गयी।

"मुक्ति।'

"बोलो ?"

"मगर एक असुविधा हो गई।"

' असुविधा ?" मुक्ति ने तेजी से वेदांत की ओर देखा।

"हाँ, अब हम दोनों के लिए घूमने फिरने का कोई बहाना नहीं रहा।"

मुक्ति कुछ कहने जा रही थी कि गुड्डा दौड़ता हुआ आया और उसकी पीठ पर झूलते हुए बोला, "आंटी ! आंटी !"

"अरे ! क्या कर रहा है ? छोड़, छोड़।"

"नहीं छोड़ूँगा। चाचा क्या मजा है। आंटी के साथ तुम्हारा ब्याह हो रहा है न। तुम टोप पहन कर दूल्हा बनोगे न।"

वेदांत का यह कहना कि घूमने फिरने का कोई बहाना नहीं रहा ठीक नहीं था। ब्याह की तैयारियां शुरू हो गयी थी ! मुक्ति के लिए भी तो सारी चीजें वेदांत को ही खरीदनी थी और मुक्ति की पसंद नापसंद तो जानना ही था।

अवश्य ही माँ की आज्ञा से ही वेदांत यह सब कर रहा है। चित्रा को भी वे बार बार अनुरोध करके साथ ले जा रहे हैं। मगर चित्रा मना कर देती थी बीच बीच में। कहती "नहीं बाबा, मैं हमेशा साथ रहूंगी तो सभी चीजें मेरी पसन्द की आ जायेंगी। यह बुद्धू तो मेरे सामने अपनी पसंद बताती ही नहीं।'

अतएव मुक्ति और वेदांत निरंकुश होकर कार से पूरे कलकत्ता को पददलित कर रहे है।

वेदांत की माँ बेटी दामाद के टेढ़े मुंह को अनदेखा करके उत्साह से बेटे को निर्देश दे रही हैं ले यह लिस्ट थाम। सभी चीजें आनी हैं। कृपणता मत करना, समझा।"

गाड़ी के सामने की सीट पर मुक्ति और वेदांत बैठे हैं। पीछे की सीट पर पैकेटों और बंडलों के ढेर हैं। अब सिर्फ रह गयी है गहनों की डिलेवरी। शहर के सबसे बड़े जौहरी को आर्डर दे दिया गया है।

रास्ते में एक समय मुक्ति ने कहा, "तुम यह सब क्या कर रहे हो? मुझे बडा डर लग रहा है। खराब लग रहा है।"

"खराब लग रहा है?"

"लग तो रहा है। इतना पैसा खर्च करने की जरूरत क्या है? इतने खर्चे में तो दस गरीब लड़कियों का ब्याह हो जाता।"

'ऐसी खुशी के वक्त ये सब बातें क्यों उठा रही हो, मुक्ति?"

मुक्ति ने एक पल बाद धीमे से कहा 'मैं तो गरीब घर की, बल्कि अनाथ लडकी हूँ। कितनी परेशानी में दुख-कष्ट में मेरी जिन्दगी कटी है, उसकी तुम कल्पना भी नहीं कर सकते। इसीलिए इतना कुछ होना देख कर बडा अजीब लग रहा है।'

'छोडो ये सब बेकार की बातें। अब बताओ हनीमून के लिए कहाँ चलना चाहती हो?

'तुम जानो!"

'वाह! मैं क्यों जानूंगा? शादी के बाद तो सब कुछ तुम्हें ही जानना होगा।'

'मगर अभी तो सब तुम्हें ही तय करना होगा। मुक्ति ने शरमाते हुए कहा।

वेदांत ने स्टियरिंग व्हील पर निगाह रखते हुए निश्चित स्वर में कहा, "पहले तो बनारस जायेंगे। तुम्हारे मामा के घर। उन्हें प्रणाम करने जाना ही चाहिए।"

"धत्!'

"धत् क्या? यही उनके दुर्व्यवहार का समुचित उत्तर होगा। अचानक एक दिन गायब होकर हमेशा तुम गायब ही रहोगी?"

"पता नहीं। तुम्हारी बातों से मेरा कलेजा काँपता है।

"तुम भी बडी डरपोक हो।'

'अचानक लाल बत्ती पर उसे तेजी से गाडी रोकनी पडी। दूसरी तरफ से अजस्र ट्रैफिक जारी हो गया। पता नहीं कितनी देर लगे।

इस बीच वेदात ने एक सिगरेट जलाया और बोला, ' मैडम, दिल को थोडा मजबूत करना होगा। बनारस तो मुझे जाना ही होगा। कम से-कम दो दजन देवी-देवताओ की मा ने मन्नत मान रखी है। उनकी पूजा चढाने जाना होगा, और फिर तुम्हारी उस क्लासफेलो के साथ भी तो मुलाकात करनी होगी।' अचानक मुक्ति का चेहरा पीला पड गया, जिसे देखकर वेदात बोल उठा, "क्या, क्या हुआ ?"

गाडी जब-से रुकी थी तब से ही मुक्ति बाहर झाक रही थी। वेदात अपनी मस्ती मे बोलता जा रहा था कि अचानक उसने देखा मुक्ति का चेहरा पीला पड गया। दूसरे ही पल उसने हथेलियो से अपना चेहरा ढक लिया।

' क्या हुआ ? आख मे कुछ पड गया क्या ?'

आख मे कुछ नही पडा था, बल्कि वह किसी की नजरो मे पड गयी थी।

उसने मुह ढके ढके ही कहा, 'गाडी चला दो। तेजी से ले चलो गाडी।'

मगर लाल बत्ती और दूसरी ओर से आती ट्रैफिक को फाद कर गाडी नही भगायी जा सकती थी।

नही, कोई चाकू या बम मारने नही आ रहा था। एकदम निरीह और साधारण चहरे मोहरे वाला एक आदमी गाडियो के बीच से रास्ता बनाता इसी तरफ चला आ रहा था।

"मुक्ति !!" अवाक होकर वेदात ने पुकारा था।

इसी बीच वह आदमी वेदात की गाडी के पास आकर व्याकुल स्वर मे पुकार उठा, ' मुक्ति !!' तभी बत्ती हरी हो गयी।

वेदात ने कार का दरवाजा खोलकर उस आदमी से कहा, ' अन्दर आ जाइए।"

मैं ? । ' वह आदमी हिचकिचा रहा था।

' जी हाँ, आप ही।'

वह आदमी कार मे बैठ गया। गाड़ी धीरे धीरे चल पडी।

"इतने दिन कहाँ थे ?" वेदात ने ही पूछा।

वह आदमी अस्फुट व्याकुल स्वर मे काफी देर बहुत कुछ कहता रहा, जिसका अर्थ था कि वह पागलों की तरह मुक्ति को ढूढता रहा है।

मुक्ति पत्थर सी चेतना शून्य।

"मुक्ति, तुम अपने नीलमणि सरकार से पूछो उस दिन हावडा स्टेशन पर क्यो नही आये ?"

"क्या नाम कहा आपने ? जी नही, मेरा नाम शिशिर चक्रवर्ती है।"

"एक ही बात है। नाम से क्या फर्क पडता है। हुआ क्या था असल बात वही है।'

वह आदमी यानी शिशिर चक्रवर्ती उदास आवाज मे बोला, "मेरी किस्मत और क्या ? जिस दिन मुक्ति को रिसीव करने हावडा जाना था उसकी पिछली रात को तार मिला कि माँ की मत्यु हो गयी है। मुझे गाँव जाना पडा।"

मुक्ति ने अब शिशिर की तरफ देखा।

वेदांत को भी धक्का लगा।

"गाँव कहाँ है ?" वेदात ने पूछा।

'वधमान जिला मे। रेलवे स्टेशन से काफी दूर अन्दर की तरफ। चौदह मील पैदल जाना पडता है। वहाँ कोई सवारी नही जाती।"

मगर क्या सारे सवाल वदान्त ही करेगा। मुक्ति के गले मे क्या फँस गया है ?

'अखबार वगैरह नही जाता शायद ?' वेदात ने ही पूछा।

"ना। डाकखाना भी बहुत दूर है। सप्ताह मे एक वार बाजार लगता है। तो उसी दिन अखबार का मुँह देखने को मिलता है।"

अभी तक क्या गाव म ही थे। कलकत्ता नही आये थे ?"

"जी नही, कलकत्ता नही आया, बनारस गया था।'

"बनारस ! इतनी देर बाद मुक्ति के गले से अस्फुट स्वर निकला।

और कहा जाता बताओ ? मुझे मालूम था कलकत्ता मे तुम्हारा कोई नहीं है। मगर वहा जाने पर माटी न कहा कि तीन मास पहले जो तुमने बनारस छोडा तो लौट कर नही गयो।"

'ओह ! तो क्या आप भी हमारी तरह तभी से रास्ते रास्ते खोजते फिर रहे है ?" वेदात ने पूछा।

'आपकी तरह माने ?"

"बताऊँगा। पहले आप बताइए।"

उसने अपनी कहानी सुनाई। बनारस से वह अपनी नौकरी पर चला गया। गरीब के लिए नौकरी सभी चीजो से बढकर होती है। नई नौकरी ज्वाइनिग डेट पार हो गया था। ' जानते है मा को फूककर आने के बाद ही पाच मील पदल पोस्ट आफिस जाकर तार दिया। पर आप विश्वास नही करेंगे ज्वाइन करने गया तो पसनल आफिसर न वह भी बगाली हो था—कहा, आशा करता हूँ मा दुबारा नही मरेंगी आपकी क्या दुनिया है।

"फिर ?"

फिर और क्या ? अब छुट्टी मिली ता कलकत्ता आया मुक्ति को खोजन। मेरे एक मित्र ने लिखा था कि शिशिर चक्रवर्ती के नाम स एक विज्ञापन निकला था। मगर इस दुनिया म शिशिर चक्रवर्ती नाम का मैं कोई अकेला तो हू नही। फिर भी एक उम्मीद थी जो मर नही रही थी।

"आपके मेस का पता क्या था ?" वदात ने पूछा।

'तेरह बटा तीन निमल सरकार लेन एमहस्ट राड पार करते ही।"

'देखा मुक्ति, तुम्हारा नीलमणि आखिर म निमल निकला। हाय ! शिशिर बाबू, पिछले एक सौ दस दिना से हम नीलमणि सरकार लेन का पता लगा रहे हैं।'

इतनी देर बाद शिशिर को अपने आस पास नजर डालने का अवकाश मिला। देखा गाडी की पिछली सीट पर सामान लदा पडा है। देखा मुक्ति राजरानी की तरह सज रही है। धीमे से बोला, "आश्चर्य! मुझे आप लोग खोज रहे थे? मगर आप मुक्ति के माने !"

"देख ही तो रहे है—ड्राइवर।"

शिशिर वेदात की बात पर हँस पडा, बोला, "ब्याह कब हुआ?"

"ब्याह? ब्याह कैसे होता महाशय? वर ही लापता था तो ब्याह होता किसके साथ? ओह! जौहरी की दूकान तो पीछे रह गयी।"

जो भी हो ब्याह हो रहा है। खूब समारोहपूर्वक हो रहा है। मगर कहाँ? कमाल है क्या शहर मे किराये के मकान नही हैं? मकान क्या किराये पर हर चीज मिलती है कलकत्ता शहर म। पसा चाहिए।

"यह आदमी क्या पागल हो गया है।' कौशिक ने खीज कर कहा।

"पागल और किसे कहते हैं?' चित्रा ने कहा।

वेदात की माँ बनारस जाते समय कह गयी हैं "अब मैं यहाँ नही आऊँगी। मेरी मिट्टी बनारस की मिट्टी म मिलेगी।'

वेदात की बहिन ने कहा, 'मैंने तो भैया को पहले ही कहा था कि वह किसी दुष्ट औरत के हत्थे पड गये हैं। कपडे गहने की गठरी लेकर जायेगी। यही उसका पेशा है।"

वेदात के बहनोई जी की राय थी, "धर्म की आखिर मे जीत होती ही है। दूसरे की ब्याहता औरत भगा कर ले आना और रख पाना आसान नही है। छोडना पडा न। नही छोडते तो वह आदमी पुलिस केस करता। दूसरो को उल्लू बनाने के लिए ब्याह का नाटक रचा जा रहा था। सारी दुनिया घास नही खाती। हुँह!"

और शिशिर चक्रवर्ती तथा मुक्ति घोषाल का क्या कहना है?

शिशिर ने हाथ जोडकर वेदात से कहा था, "आप मुझे छोड दीजिए।

मैं खुशी खुशी मुक्ति को बधाई देकर चला आऊगा। मुक्ति को इस राज-सिंहासन से उतार कर अपने कूड़ेदान में ले जाकर रखने की मेरी जरा भी इच्छा नहीं है। अगर मैं ऐसा कर भी लू तो मुझे जीवन भर शांति नहीं मिलेगी।"

मगर वेदांत ने कहा था, 'कमाल के आदमी हैं आप? अपना क्लेम छोड़कर मंच पर से उतर जाना चाहते हैं? ऐसा भी कहीं होता है।'

"क्यों नहीं होता?"

"हमारे पास भी तो विवेक नाम की चीज हो सकती है। और विवेक होगा तो उसकी चुभन भी होगी।"

अभागा शिशिर चक्रवर्ती हताश स्वर में बोला, 'इतना सुख, इतना ऐश्वर्य और राजा जैसा वर से वंचित करके मुक्ति को नहीं, नहीं, मुझे जाने दीजिए।"

"क्या कहते हैं? इतने दिनों से जिसे खोजते खोजते निराश होकर जब कुछ का कुछ होने लगा था तब आपको पाकर छोड़ने का मतलब क्या है? अगर यह घटना हो जाती तो क्या होता?'

"अच्छा ही होता।"

"जी नहीं, बहुत बुरा होता। और तब जो भी होता अलग बात है, मगर अब तो हम आपको किसी तरह नहीं छोड़ सकते।'

तो जो होना था वही हुआ।

ब्याह के बाद शिशिर ने मुक्ति के गहने कपड़े लेने से इनकार किया तो नाराज होकर वेदांत ने कहा, "आप नहीं लेना चाहते तो जाते समय गंगा में डाल दीजिएगा। वर्ना आपकी अनुपस्थिति में आपकी प्रेयसी को मैं जो प्यार करने लगा था उसकी स्मृति के रूप में ही सही वह सब ग्रहण कीजिए।"

और वेदांत बागची देवताओं की तरह हँसा था।

"मगर ।"

मगर वगर कुछ नहीं। सब ठीक हो जायेगा।'

और मुक्ति घोषाल क्या कहती हैं ?

उसने अपनी एकमात्र बांधवी चित्रा से कहा था, "मेरी समझ म नहीं आ रहा है कि यह सब क्या हो रहा है ? शायद ठीक ही हो रहा है। सारा जीवन इस पागल प्रेम के भार को मैं शायद ढो नहीं पाती।"

मगर बदांत और मुक्ति ने एक दूसरे से क्या कहा ? कुछ कहने का समय कहाँ था ? वेदान बागची के पास बातें करने का वक्त न था। उसके दिमाग पर दो-दो असहाय जीवों के ब्याह का भार था। उसे तो दम मारने की भी फुर्सत न थी।

ब्याह की रात निमंत्रितों को खिलाने पिलाने में वदांत का उत्साह देखने लायक था। उसकी बातें, उसकी हँसी रुकने का नाम नहीं ले रही थी।

ब्याह के बाद घर लौटने पर साड़ी उतारते उतारते चित्रा ने पति से कहा 'तुम अपने मित्र पर एक कहानी लिखो। बहुत बढ़िया प्लाट है।

"दुर ! उनकी बात मत करो। साला एकदम रबिश है। चला है महानता दिखाने। साला गधा कहीं का।" कौशिक ने कहा।

'महानता दिखाने नहीं चले थे। यही उनका स्वभाव है।" चित्रा ने भरे गले से कहा।

'इसी रोग ने उसका जीवन बर्बाद कर दिया।" कौशिक ने चिढ कर कहा, "यह बेचारा शिशिर चक्रवर्ती इसकी तुलना में कहीं ज्यादा समझदार है। वह तो अपना दावा छोड रहा था। चिता की कोई बात नहीं है। यह भी उसका आखिरी तमाशा नहीं है। फिर कुछ दिन बाद आयेगा और दाँत चियार कर कहेगा, 'भाई, इस बार फिर एक झमेले में फँस गया हूँ। यह भी कोई प्लाट है।'

चित्रा न नाइटी पहन कर पखे की स्पीड बढा कर बिस्तर पर बठती हुई बोली, "तुम लोग तो उनका फसना ही देखते हो। फसने के कारण पर कभी ध्यान दिया है ?"

"कारण ? कारण कोई नया है क्या ? औरत देखते ही इसकी बुद्धि घास चरने चली जाती है।"

"ताज्जुब की बात है। तुम यह बात कह रहे हो।" फिर दोनों कुछ देर चुप रहे। चित्रा ही फिर बोली। उसकी आवाज भारी थी, "तुम्हारे वह दोस्त हैं। मगर तुम उन्हें नहीं समझ सके। ताज्जुब है।"

थोड़ी देर फिर चुप्पी रही। अँधेरे में चित्रा की गंभीर आवाज आई, "औरतें देखते ही... छि ! क्या कह रहे हो ?

वह आदमी किसी औरत की तरफ आँख उठा कर भी नहीं ताकता ! उस आदमी के साथ मैं बिना किसी आशंका के अकेले कमरे में रात बिताने को राजी हो सकती हूँ।"

"ऐं ! सच ?' कौशिक ने अँधेरे में ही पत्नी की पीठ सहलाते हुए पूछा, "तुम सच कह रही हो ?"

"निश्चय ! पुरुष की आँखों का भाव समझने में औरत को जरा भी देर नहीं लगती। तुम्हारा बचपन का दोस्त है। उसकी फँस जाने की कहानियाँ तुम्हारे मुँह से सुनी हैं मैंने। तुम अभी तक समझ नहीं पाये कि वह क्यों आगा पीछा बिना सोचे स्त्रियों की मदद के लिए दौड़ पड़ता है ?

कौशिक ने कहा, 'बताओ तो तुमने इसके पीछे किस रहस्य का आविष्कार किया है ? तब शायद इस पर कहानी लिखना आसान हो जाए।"

"नहीं। मुझे कुछ नहीं कहना है।" चित्रा ने कहा और जँभाई लेते हुए दूसरी ओर करवट बदल लिया।

अन्तिम अक का अन्तिम दृश्य

असमाप्त काम के चिह्नस्वरूप फाइलो की एक मोटी तह एक किनारे खिसकाते हुए और छोटी मोटी चीजो को सहेजते हुए रत्नाकर ने पपा की मेज की तरफ कनखियो से देखा।

जैसा रोज होता है पपा की मेज एकदम 'नीट ऐंड क्लीन' थी। शाम को दफ्तर से निकलने से पहले पपा की मेज पर धूल के कुछ कणो के अलावा कोई चीज नही होती।

मगर पपा उस समय भी व्यस्त थी। वह अपने हैडबैग के अनेक खानो मे से हरेक मे रखी चीजो को देख परख रही थी। प्रत्येक म हाथ डालकर जैसे कुछ ढूढ रही थी।

रत्नाकर ने सोचा औरतो के हैंडबैग मे पता नही क्या क्या होता है? कुछ घरेलू टाइप की औरतें तो इसमे रोज की साग सब्जी भी रख कर ले जाती है।

रत्नाकर की भाभी भी श्यामनगर बालिका विद्यालय से पढाकर लौटते समय अपना हैडबैग थैले की तरह लाती है। 'सस्ता बाजार' तो तो उनके लिए देवता के मदिर जसा है जहा रोज एक बार जाना जरूरी है कुछ खरीदना न हो तो भी।

एक दिन रत्नाकर की भाभी ने अपने हैडबैग म दो किलो वजन की एक पत्तागोभी और आधे दजन से ऊपर खीरे भरकर लायी थी किसी और दिन एक बडा सा सुदर वन का तरबूज ले आयी थी। यह कहानी सुनाकर रत्नाकर ने पपा को खूब हसाया। रत्नाकर ने पपा की

हँसी पर कटाक्ष करते हुए कहा था—"घबराइये नही निकट भविष्य मे आप की भी वही हालत होने वाली है। अभी अभी देख रहा हूँ पूरा कारखाना भरा हुआ है किस काम आती हैं इतनी चीजें ?"

पपा ने हँसकर कहा था—"आप की समझ म नही आयगा।

"वाह, आयेगा क्या नही। आप या ता सिर दर्द की गोली ढूढ रही हैं या लौंड्री की रसीद या खरीदी हुई साडी बदलने के लिए कशमीमो या चश्मे का प्रेस्क्रिप्शयन या किसी पुरानी सखी का पता या नेशनल लाइब्रेरी का काड या ।"

"रुक क्यो गये। आगे चालिये, आप की कल्पना शक्ति देखते हैं।"

'ना, और कुछ नही सूझ रहा है। आप बताइए।"

पपा ने हुडबैग को बद करते हुए कहा, 'यो ही। कोई खास चीज नही ढूढ रही थी।'

कुछ ढूढ तो रही थी।"

"लगता है घर पर ही छोड आई हूँ। पपा ने धीमे से कहा।

रत्नाकर ने मन ही मन कहा। 'तुम कुछ भी नही ढूढ रही थी। वह तो सिर्फ वक्त काटने का बहाना था। इस अभागे रत्नाकर के साथ निकलने की इच्छा रखते हुए भी इसे पता न चले इसी का बहाना है।'

मगर यह बात वह जुबान पर तो ला नही सकता था। अधीरता म समय से पहले कुछ कर दना ही मूखता ही है। कली का फूल बनाने मे वक्त तो लगेगा। बाला अपनी मेज को इतनी नीट ऐंड क्लीन कसे रखती है आप।"

"कोई कठिन काम तो नही है।" पपा न हँस कर कहा।

मुझे तो बडा कठिन काम लगता है। मुझे तो इतना वक्त ही नही मिलता।'

'आठ कप चाय और बीस तीस सिग्रेट पीने मे भी तो समय लगता है।'

'पपा ने फिर हँस कर कहा।

'न पिऊँ तो एनर्जी कहाँ से आयेगी ?"

"कहना मुश्किल है। हम औरतों को एनर्जी कहाँ से मिलती है ?

आप चाहें तो उससे दो गुना ज्यादा काम कर सकते हैं।

"क्या बात करती हैं आप भी। इस बयान में इतना ही कर देते हैं वही ज्यादा है। वैसे आप हमारे जैसे लोगों का बड़ा अनिष्ट कर रही हैं।'

"अनिष्ट ?"

हाँ अनिष्ट अगर अफसरों की नजर पड़ जाय तो कहेंगे कि अगर एक आदमी इतना काम कर सकता है तो दूसरा क्या नहीं कर सकता ?"

' आपने अभी कहा न कि यह एक बयान है। यहाँ कौन किसके काम का हिसाब रखता है ? आप कुर्सी पर बैठे बैठे समय काट दें तो भी देखेंगे समय आने पर आपका प्रोमोशन हो जायेगा, तनख्वाह भी बढ़ जायेगी।"

' वाह ! तब फिर आप क्यों खट खट कर जान देती हैं ?"

' स्वभाव दोष।" पपा ने फिर हँस कर कहा।

वे जब बाहर आये तो सीढ़ियों पर कर्मचारियों की ठेलाठेली चल रही थी। वे एक किनारे खड़े हो गये। गरमियों के दिन थे, इसलिए पाँच बजे शाम को भी रोशनी पूरी ताकत से झिलमिला रही थी। जनाकीर्ण कलकत्ता शहर की उद्दाम गति पर जैसे एक झिलमिलाती चादर पड़ी हुई थी। मगर यह स्थिति वैसी ही क्षणस्थायी थी जैसी भीड़ से अलग पपा और रत्नाकर का साथ साथ किनारे खड़ा होने का समय।

पपा के चेहरे पर भी वही झिलमिलाती रोशनी ठहरी हुई थी, हालांकि वह रत्नाकर की तरह नहीं थक रही थी।

"ज्यादा सिसियर लोगों की हालत ऐसी ही होती है, फिर भी '

' फिर भी क्या ?" पपा ने दूसरी ओर देखते हुए पूछा।

"सब अकारण है, सब एक तरह का शौक है, यह नौकरी यह खटनी।"

"आप गलत सोचते हैं। मेरे लिए यह शौक नहीं है, जीने का एक

मात्र साधन है। चलिए अब निकलते हैं।"

हां, जल्दी से उन्हें निकल पड़ना चाहिए। यह जो ग्पे पल का साथ खड़ा होना है यह भी लोगो की नजरों को खलता है यह बात बिना दूसरों की तरफ देखे भी समझी जा सकती है।

भीड मे दोनो साथ साथ चल रहे थे। गेट से थोडा बाहर जा कर रत्नाकर एक जगह ठिठक गया, बोला, "आह ? ध्यान ही नही रहा आज तो थाने मे आपके रिपोट करने का दिन है। रथ आकर खड़ा है।"

पपा ने म्लान स्वर म कहा "हा दरोगा जी का कानून एक दम सख्त है। उसमे जरा भी इधर-उधर नही किया जा सकता।

"आपके घरवाले जानते हैं ?"

"जरूर। वे लोग बडे सतर्क है। किसी काम म कोई त्रुटि नही करते। पहले ही मा को बता आते हैं कि वे मुझे ले जा रहे है।" फिर थोडा हँस कर आगे कहा, 'साथ म परिवार के बाग के फल, मिठाइया, घर की गाय का दूध-दही माँ को प्रेजेंट कर जाते है। यानी नागपाश पूरी तरह चौकस और सख्त।"

रत्नाकर ने थोडे रुष्ट स्वर मे कहा "आपका उत्साह देख कर मुझे तो नही लगता कि आप इसे नागपाश मानती हैं।

जो नजर मे पडता है क्या वही सब कुछ है।' कहकर पपा तेजी से इतजार करती गाडी की तरफ बढ गयी।

ड्राइवर दरवाजा खोलकर खडा हो गया और लबी सलामी मारी। पपा के अदर बैठ जाने के बाद गाडी चल पडी। गाडी का दरवाजा बद होने का शब्द रत्नाकर के कलेज पर हथौडे की तरह पटा।

हालाकि यह हर सप्ताह अनिवार्य रूप से होता है पर रोज ही रत्नाकर गुस्से से जलता रहता है। उसे लगता है पपा नजरबद कदी है और कीमती गाडी पर सवार होकर राजसी ठाट से घूमना उसे पपा का थाने म रिपोट करने जाने जैसा लगता है।

सडक पर अदृश्य होती गाडी की तरफ देखते हुए रत्नाकर सोच रहा

था—'सचमुच बहुत सतर्क हैं वे लोग कि वहाँ कोई त्रुटि न रह जाय। ड्राइवर काफी पुराना लगता है, फिर भी कार में एक दाई भी आती है। पपा उसी के बगल में बठती है। आज शनिवार की शाम को पपा जा रही है, कल रविवार पूरा दिन और रात वहाँ रहेगी, सोमवार सवेरे यही गाडी उसे दफ्तर छोड जायेगी। तब भी यह दासी साथ में आयेगी। एकदम स्टीन जैसा।'

रत्नाकर और पपा केन्द्रीय सरकार के दफ्तर में काम करते हैं। शनिवार का हॉलिडे नहीं होता। इस बात पर उसकी भाभी कहती है, 'तू एक दिन भी अपने भाई के साथ बैठ कर खा पी नहीं सकता। बेचारे आ कर तेरे लिए बठे इन्तजार करते हैं। उन्हें टाँग रखना अच्छा नहीं लगता।

लतिका के श्यामनगर बालिका विद्यालय में शनि-रवि दो दिन की छुट्टी रहती है। इसीलिए उसको इतनी शिकायत है, वर्ना और दिनों तो स्कूल से लौटते समय, बाजार से खरीद फरोख्त करके आते आते उसे भी काफी शाम हो जाती है।

सुधाकर नंगे बदन लुंगी पहने सवेरे के अखबार का पारायण कर रहा था। उसकी तरफ इशारा करते हुए रत्नाकर ने कहा, "भाभी जी, अपने बेचारे पतिदेव को भी एक कप चाय और दो न।'

"बिना दिये निस्तार कहाँ है। चाय तो जितनी बार मिले उनको कम है। दफ्तर में कितनी बार पीते हैं इसका ठिकाना नहीं।'

भैया, यह काम तो आप बड़ा गलत करते हैं।"

'तुम्हारे भैया कौन सा काम सही करते हैं।' लतिका बोली।

भाभी, वसे आपके साथ हमेशा सहमत नहीं हो पाता पर इस बात में मैं भी आपके साथ एकमत हूँ। बस आपको इतनी छूट देना यह भी भैया ठीक नहीं करते।"

"क्या कहा ? छूट दी है मुझे तुम्हारे भैया ने ? अरे, दी नहीं है, मैंने

सापद करके छूट लो है। समझे?"

"ओह! तब तो मुझे कुछ नहीं कहना। मगर भैया, आपके गलत कामों की लिस्ट काफी लम्बी है। आप जो नंगे बदन सिर्फ लुंगी लपेट बैठे रहते हैं यह क्या ठीक है?"

"देखो न!" लतिका ही बोली, "सिर्फ इस असभ्यता के लिए मुझे तुम्हें तलाक दे देना चाहिए। पर दया आती है इसलिए अभी तक किया नहीं। और कहते हैं क्या जानते हो रत्नाकर मर्द का नंगे बदन बैठने में शर्म कैसी? जैसे मर्द होने से ही सारे खून माफ। जब गरमी मर्दों को ही लगती हो?"

"अरे बाबा, मैंने वचन तो दिया है कि घर में भाई की बहू के आते ही एकदम भद्र पुरुष बन जाऊंगा। हमेशा सफेद बनियान और पाजामा पहने रहूँगा। प्लेट में डालकर चाय भी नहीं पीऊँगा।

"तो फिर भाभीजी, आपकी किस्मत में भैया का भद्र रूप देखना नहीं लिखा है।"

"क्या? क्या? सुधाकर ने पूछा।

इसका कोई उत्तर दिये बिना रत्नाकर अपने कमरे में चला गया। ब्याह न करने की प्रतिज्ञा नहीं की थी उसने, सिर्फ आर्थिक कारणों से ही टालता जा रहा है। वैसे घर की आर्थिक स्थिति कोई खराब भी न थी। भैया भाभी की गृहस्थी मजे में ही चल रही थी।

दिन भर श्यामनगर बालिका विद्यालय की बालिकाओं से सिर खपाने और सस्ता बाजार से बैग भर कर सामान खरीद कर घर आती इस महिला और दफ्तर से आकर नंगे बदन लुंगी पहन कर सवेरे के अखबार की एक एक पंक्ति का पारायण करते इस पुरुष के जीवन में एक खास तरह की परितृप्ति भी तो है।

माँ जब तक जीवित थी वह इस बात को उतना साफ नहीं देख पाता था, तब समझ भी रत्नाकर की कम थी। पर जबसे वह समझने—बूझने लायक हुआ है भैया भाभी का जीवन उसे सुखी और सम्पूर्ण ही लगा है।

और उसने हमेशा सोचा है उसका जीवन भी अगर इन्हीं की तरह बुरा क्या है ? उससे ज्यादा की जरूरत भी क्या है ? पर भाभी की सी औरतें मिलती कहाँ है ? पर कोई भीष्म प्रतिज्ञा नहीं की थी रत्नाकर ने । इसीलिए लतिका अन्दर ही अन्दर खुश खुश—अपने लिए देवरानी की तलाश मे लगी हुई थी ।

पर आज रत्नाकर उस खुशी पर एक भारी पत्थर फेंककर चला गया ।

शायद यह सब नहीं होता । शायद किसी दिन भैया भाभी की पसन्द की किसी लड़की से ब्याह करके रत्नाकर हजारो और मध्य वित्त बंगाली पुरुषों की तरह सभी प्रकार की परम्परागत प्रथाओं और अनुष्ठानों का पालन करता हुआ जीवन गुजार देता अगर

हां, अगर किसी शुभ मुहूर्त मे वह पपा को न देखता ।

कितनी अद्भुत बात है । इसी आफिस मे बहुत दिनों से पपा काम कर रही है । सिर्फ दूसरे सेक्शन मे कार्यरत होने से पपा से उसकी मुलाकात नहीं हुई थी । पर सहसा एक दिन उन दोनो के बीच की दूरी एक पल मे समाप्त हो गयी । पपा का अपने सेक्शन से रत्नाकर के सेक्शन मे स्थानान्तरण हुआ और उसी के कमरे मे दूसरी सीट पर बैठे एक वृद्ध सज्जन को अपदस्थ करके एक दिन रूपवती पपा आ बैठी ।

अपने कमरे में आकर रत्नाकर ने कमरे की बत्ती बुझा दी और बिस्तर पर लेट गया । लेटे-लेटे ही बुदबुदाया, 'पपा ! पपा ! काश एक-डेढ़ साल पहले तुम्हारे साथ हमारी मुलाकात हो गयी होती ? तब तुम इतनी दुर्लभ न होती मेरे लिए ? मगर अभी भी तुम इतनी दुर्लभ क्यों हो ! क्या पगली की तरह कुछ कुसस्कार ग्रस्त लोगों के पीछे अपना जीवन बर्बाद करती रहोगी ?'

'नहीं ऐसा नहीं होना चाहिए । मैं ऐसा नहीं होने दूंगा । पपा ! पपा ! मैं सब समझता हूं । खिला हुआ फूल पत्तों से ढका दिखलायी नहीं देता मगर उसकी सुगन्ध कहाँ छुपती है ।

सपद घरबै छूट ली है। समझे ?"

'ओह ! तब ता मुझे कुछ नही कट
भामा की लिस्ट काफी सम्बी है। आप जो
कहते हैं यह क्या ठीक है ?'

देखो न।" लतिका ही बोली, 'f
तुम्हें तलाक दे देना चाहिए। पर क्या
नहीं। और कहते हैं क्या जानते हो
हाम कैसी ? जसे मद होन स हो सा
लगती हो ?"

'अरे बाबा मैंने वचन तो टि
ही एकदम भद्र पुरुष बा जाऊंगा
पहन रहूँगा। प्लेट म डालकर न

"तो फिर भाभीजी, आपक
लिया है।"

'क्या ? क्यो ? सुधाकर

इसका कोई उत्तर दिय
ब्याह न करने की प्रतिना न
टालता जा रहा है। वैसे
भैया भाभी की गहस्थी

सुधाकर पत्नी के गम्भीर चेहरे को थोडी देर देखता रहा फिर की तरह खुश होकर बोला—"तो इसमे इतनी चिंतित होने की क्या बे है ? अगर ऐसा है तो समझ लो मामला अपने आप फिर हो रहा है। आजकल उपन्यासो म लिखा होता है—"प्रणय का परिणाम है परिणय।"

"आ हा हा ! कितने उपन्यास पढे हैं तुमने ?"

"तुम समझती हो मैंने उपन्यास कहानी पढी ही नही।"

"मेरी फूटी आँखो के सामने अखबार छोडकर दूसरी कोई किताब पढते तो दिखे नही तुम।"

"वाह ! तुमने जब मुझे देखा तब क्या मैं प्राइमरी का छात्र था ? मैं कुछ पढता लिखता नही था ?"

"ओह हाँ, बीस साल पहले तुम नावेल पढते थे। ये तो मैं मान सकती हूँ। मगर क्या दुनिया उ ही बीस साल पहले के सिद्धान्तो पर आज भी चल रही है ?"

"चल तो खर नही रही है। उन दिनों लोगो मे थोडी लाज शम थी। अपनी शादी के बारे मे मुह खोलना मुश्किल था वरना मैं क्या तुम्हे ले आता ? अब देखो तुम बुरा मत मानना। तुम एक बार रत्नाकर से पूछ देखो न।"

"क्या पूछ ?'

"अब तुम्हें यह भी बताना पडेगा। तुम्हारी जीभ तो शायद ही कोई बात करने म रुकती हो। सीधे सीधे वही बात पूछ लना।'

लतिका मुस्कुराई फिर बोली—' रह गये तुम बुद्ध क बुद्धू ! तुमने कभी प्रेम किया है ?'

'क्या बुद्धू लोग प्रेम नही कर सकते ?'

'बेवकूफ ही प्रेम के चक्कर म पडते हैं।"

"तब तो हमारा रत्नाकर प्रेम प्रेम के चक्कर म नही हैं। चुस्त-चालाक लडका है। कम स कम मेरी तरह बुद्धू तो नही ही है। तुम याही

रत्नाकर के दूसरे कमरे मे चले जाने के बाद सुधाकर ने लतिका की तरफ बौडम की तरह देखा और पूछा—"ये क्या हुआ ?"

लतिका ने भौंह सिकोड़कर कहा— "मैं भी ठीक-ठीक समझ नही पा रही हूँ। उसके प्रमोशन के बाद से मैं उसके लिए लडकी तलाश कर रही हूँ। यह भी नही है कि वह नही जानता। मगर कभी उसने कोई आपत्ति तो की नही।"

सुधाकर थोड़ी देर सोचता रहा फिर बोला—"तसवीरें पसन्द नही आयी होगी।"

लतिका ने विरूप स्वर म कहा—"अभी तो मैंने दो एक जगह बात ही की है कोई तसवीर आयी भी नही।"

"अच्छा! अच्छा! समझ गया।"

लतिका की भौंह और टेढ़ी हो गयी चिढ़कर बोली— 'क्या समझे ?"

"यही कि लडकी ढूढन मे देरी करते देख उसने हताश होकर उल्टी बात की है। तुम जल्दी से उसके लिए लडकी ढूढो।"

"तुम्हारी जसी बुद्धि है वैसी ही तो समझोगे !

"क्या ? मैंन क्या गलत समझा है ?'

'नही, तुमन बहुत ठीक समझा है। हो न गोबर गनेश !'

"तो फिर क्या बात है तुम क्या समझती हो ?'

"मुझे तो और ही बात लगती है।

"और क्या बात हो सकती है।'

"लगता है कि लडका प्रेम के चक्कर म पड गया है।'

"कमाल की बात करती हो। ये तो लाल बुझक्कर जसी बातें कर रही हो। किस आधार पर तुम ऐसी बात कह रही हो ?"

"इसमें आधार की जरूरत नही होती। औरतो के पास एक एक्स रे आइ होती है जिसम अपने आप सब कुछ दीख जाता है।"

सुधाकर पत्नी के गम्भीर चेहरे को थोडी देर देखता रहा फिर
की तरह खुश होकर बोला—"तो इसम इतनी चिंतित होने की क्या बे
है ? अगर ऐसा है तो समझ लो मामला अपने आप फिर हो रहा है।
आजकल उपन्यासों मे लिखा होता है—"प्रणय का परिणाम है
परिणय।"

"आ हा हा ! कितने उपन्यास पढ़े हैं तुमने ?"

"तुम समझती हो मैंने उपन्यास कहानी पढ़ी ही नहीं।"

"मेरी फूटी आँखो के सामने अखबार छोड़कर दूसरी कोई किताब पढ़ते तो दिखे नहीं तुम।"

'वाह ! तुमने जब मुझे देखा तब क्या मैं प्राइमरी का छात्र था ? मैं कुछ पढ़ता लिखता नहीं था ?"'

"ओह हाँ, बीस साल पहले तुम नावेल पढ़ते थे। ये तो मैं मान सकती हूँ। मगर क्या दुनिया उ ही बीस साल पहले के सिद्धान्तों पर आज भी चल रही है ?"

"चल तो खैर नहीं रही है। उन दिनों लोगों म थोडी लाज शर्म थी। अपनी शादी के बारे म मुह खोलना मुश्किल था वरना मैं क्या तुम्हें ले आता ? अब देखो तुम बुरा मत मानना। तुम एक बार रत्नाकर स पूछ देखो न।

"क्या पूछू ?"

"अब तुम्हें यह भी बताना पडेगा। तुम्हारी जीभ तो शायद ही कोई बात करने म रुकती हो। सीधे सीधे यही बात पूछ लना।'

लतिका मुस्कुराई फिर बोली—'रह गये तुम बुद्धू के बुद्धू ! तुमने कभी प्रेम किया है ?'

'क्या बुद्धू लोग प्रेम नहीं कर सकते ?'

बेवकूफ ही प्रेम के चक्कर म पड़ते हैं।'

"तब तो हमारा रत्नाकर प्रेम व्रेम के चक्कर में नहीं है। चुस्त-चालाक लडका है। कम स कम मेरी तरह बुद्धू तो नहीं ही है। तुम यहीं

कल्पना कर रही हो। एक काम करो चटपट आठ-दस तसवीरों का जुगाड करो। कोई न कोई तो पसन्द आ ही जायेगी।"

'सच तुमने तो बडी अच्छी बात सुझायी। लडकियों की इतनी तसवीरें किस मार्किट मे मिलेंगी, गरिया हाट, बागडी मार्किट या न्यू मार्किट मे ?"

"तुम तो मेरी सब बातो को मजाक में टाल जाते हो।'

"अच्छा ! मजाक समझ गये तुम। इतने बुद्धू नही हो तुम जितना मैं समझती हूँ।"

रत्नाकर अपनी भाभी को बुद्धू समझता है और लतिका सुधाकर को बुद्धू समझती है। मगर दरअसल रत्नाकर ही बुद्धूपने का काम कर रहा है। पपा जसी लडकी के प्रेम म फँसकर वह कोई बुद्धिमानी का काम तो नही कर रहा है।

तीन व्यक्तियों के इस परिवार मे रात का खाना देर से होता है शाम की चाय के साथ हैवी नाश्ता कर लेते हैं। उसी समय थोडी पारिवारिक सुख दुख की चर्चा हो जाती है फिर सब अपने-अपने काम मे लग जाते हैं। आमतौर पर सुधाकर एक बडी कुर्सी म बैठकर ऊँघता है। रत्नाकर अपने कमरे म कुछ पढ़ता लिखता है। लतिका खाना पकाती है जिसमे सुबह के लिए सब्जी वगैरह भी शामिल है। जिसे वह फ्रिज मे डाल देती है। उसे सवेरे ■ बजे ही श्यामनगर बालिका विद्यालय के लिए बस पकडनी होती है। इसके बाद वह अगले दिन की साज सज्जा, कापी किताब एक जगह रखकर खाना लगाती है।

लतिका थोडा पुराने दिमाग की है। फ्रॉक पहनने वाली नौकरानी रखने म उसे डर लगता है। सोचती है अच्छा खान-पहनने को मिले तो उस तरुणी होने म देर नहीं लगती। आम तौर से तब जब सारा दिन खान-पीन और सौन्दर्य प्रसाधन करने की खुली छूट हो और फिर किसी पान वाले, सब्जी वाले या आवारा युवक के प्रेम म फसकर उन्हें घर म निमन्त्रण देना या फिर घर के सब सामान समेटकर प्रेम की परिताप

करने के लिए निकल पड़ना एकदम असम्भव नही है। इसलिए लतिका ने शामनगर से ही एक बूढ़ी नौकरानी का जुगाड़ किया है और इस खतरा से निश्चिन्त हो गयी है।

बुढ़िया गैस जलाना, नही जानती न जाने। चाय बनाना नही जानती, कोई बात नही। आँखो से कम दीखने के कारण सौदा सुलफ भी नही ला सकती, वह भी मजूर है। कम-से कम मुहल्ले के किसी मस्तान के साथ प्रेम करके लतिका का घर उजाड़कर भागने लायक तो वह नही है। प्रेम के सम्बन्ध म लतिका की धारणा सिनेमा और उपन्यास से मेल नही खाती।

रत्नाकर को पढ़ने का शौक है। वह आफिस से आकर नाश्ता करने के बाद देर रात तक पढ़ता है। न उसके मित्र दोस्त हैं और न वह अड्डेबाजी करता है। इस उम्र के लड़के के ये लक्षण कई लोगो को अच्छे नही लगत। रत्नाकर की ममेरी बहन के पतिदेव कभी-कभी सपत्नीक उसके यहा डेरा डालत हैं और इस बात को लेकर रत्नाकर की खिचाई करते है। मगर रत्नाकर हँसकर टाल जाता है। रत्नाकर के ब्याह को लेकर जीजाजी के साथ अब भी हँसी मजाक होती है। रत्नाकर कभी इस सम्भावना से न तो इनकार करता है और न चिढ़ता है। ब्याह का प्रतिवाद आज उसन पहली बार किया है। इसीलिए लतिका चिंतित है।

ब्याह का प्रतिवाद करके रत्नाकर भी चिंतित है। किताब आँखो के सामने रखकर भी उसकी पंक्तियो का अर्थ उसकी समझ म नहीं आ रहा है। बार बार उसे अनुताप हो रहा है। क्या उसने उन दो सरल और स्नेही लोगो के मन को इस तरह की बात करके दुखाया।

किताब रखकर उसन बत्ती बुझा दी, सोचा, भैया की तरह वह भी एक नीद मार ले। मगर बन्द आखो के सामने भी चीटियो की तरह किताब की निरर्थक पंक्तियाँ नाचती रही। बीच-बीच मे वह लतिका से पूछता है—"अच्छा भाभी, एक बात बताओ तकिये पर सिर रखते ही नाक बजने लगे इस अलौकिक साधना का रहस्य क्या है ?"

लतिका ने कहा—"जिस रहस्य का पता मुझे खुद नही चलता है उसे तुम्ह कैसे समझाऊं।"

इसी तरह की सामान्य बात चीत और हँसी मजाक मे उस परिवार के दिन बडो खुशी से बीत रहे थे। मगर पता नही, कही कुछ ऐसा व्यवधान आ पडा कि सुख का यह वातावरण छिन्न भिन्न हो गया। रत्नाकर के निस्संग जीवन मे कोई एक अपरिचित वातायन खुल गया जिसमे से होकर अबाध आलोक और बाढ का अगाध जल अन्दर प्रविष्ट होकर सब कुछ उलट पलट गया।

रत्नाकर को न नीद आनी थी न आयी।

उसने अपने आप को सामने खडा करके प्रताडित किया—"साले मूख, बुरबक, बुद्धू, तुझे अचानक प्रेम मे पडने की क्या जरूरत आ गयी थी। जिन्दगी आराम से चल रही थी उसे खामखाह् लपटो के हवाले कर दिया।"

मित्रा का साथ पहले ही छूट गया था। पुस्तके सगिनी हो गयी थी। मगर कुछ दिनो से रत्नाकर के मन को बाध नही रही थी। लतिका जैसी सरल औरत भी जिस काम को निपट मूखता मानती है। वह काम रत्नाकर जैसा चुस्त चालाक आदमी करने गया ही क्यो?

यद्यपि इस चिरतन प्रश्न का एक चिरतन उत्तर भी है जान-बूझकर कोई प्रेम के फदे मे पाव नही डालता। कोई अदृश्य शक्ति जैसे आदमी को ठेलकर उधर ले जाती है। शुरू-शुरू मे पता नही चलता और जब पता चलता है तो आदमी के सामने कोई उपाय नही होता।

रत्नाकर को पपा के साथ अपने पहले दिन की मुलाकात की याद आती है। उस दिन वह बहुत बजार था! उसने सुना था कि एक महिला ट्रासफर होकर उसी के कमरे म उसी के सामने बैठने वाली है। इस खबर को सुनते ही रत्नाकर की आँखो के सामने मिसज दत्त का चेहरा नाचने लगा। सारा दिन कचर कचर पान खाने वाली और मिनट मिनट पर डिबिया मे से निकालकर जरदे की बुकनी फाकने वाली मिसेज दत्त को

रत्नाकर कभी बर्दाश्त नहीं कर सकेगा। जरदे और पसीने की गंध से भ. उस छोटे से कमरे में घुसते ही रत्नाकर को मितली आने लगती थी। रत्नाकर कितना चाहता था कि एक एकांत कमरे में बैठने का उसे सुयोग मिले। मगर जिस पद पर वह था उसके लिए यह सुविधा नहीं थी। दो टेबुलों के बीच एक छोटे-से स्टूल पर टेलीफोन था जिसे दोनों टेबुलों के अधिकारी इस्तेमाल में लाते थे। मिसेस दत्त अपने इस अधिकार का खूब सदुपयोग करती थीं। एक बार टेलीफोन का चोंगा मुंह से लगा लें तो क्या मजाल एक घंटे से पहले उसे अलग करें। मिसेज दत्त के वार्तालाप से ऊबकर रत्नाकर कैंटिन में जा बैठता था।

और अब फिर एक महिला उसी कुर्सी पर विराजने आ रही हैं।

मगर महिला जिस दिन ज्वाइन करने वाली थी उसी दिन दफ्तर के बाहर ही देवदुलाल नामक एक फालतू किस्म के सहकर्मी ने रत्नाकर को रास्ते में ही रोककर कहा—"मिस्टर मलिक आप भी बड़े किस्मत वाले हो आज से आप के कमरे में आपके बगल वाली कुर्सी पर रजनीगंधा का एक गुच्छा विराजमान होगा।"

रत्नाकर ने थोड़ा-सा मन-ही मन चकित होते हुए पूछा था—"क्या मतलब?'

"मतलब अभी समझ में आ जायगा। मैंने अभी अभी उन्हें इवार्जे के कमरे से निकलते हुए देखा है। आहा, क्या छोकरी हैं। बाई गॉड, यू आर लकी। कह कर देवदुलाल हंसा।

"घोपाल महाशय, कृपा करके अपनी सीट पर जाइए। कुछ तो सरकार का नमक हलाल कीजिए और आपके दांत इतने गन्दे हैं कि मेहरबानी करके मेरे सामने इन्हें ढँक कर ही रखें। बेमतलब की बातों में अपना वक्त क्यों जाया करते हैं?'

'सीट पर तो दिन भर बैठना ही है। सोचा, एक बार और देवी का दर्शन करता जाऊँ।" देवदुलाल ने बेहयाई से कहा।

"अभी दर्शन नहीं हुआ?'

"हुआ था, पर बहुत संक्षिप्त था—एकदम बिजली चमकने की माफिक। जरा ढंग से   लीजिए वह आ रही है।"

जरा ढंग से देखने की लालसा लिए हुए भी देवदुलाल घोषाल सामने से गरदन ऊंची किए तेज कदम आती महिला की परछाईं देखकर ही चट से बगल के दरवाजे से बरामदे में निकलकर अंतर्ध्यान हो गये।

और दूसरे ही क्षण रत्नाकर को लगा कि देवदुलाल जैसे जड़ व्यक्ति के मुंह से कविता की भाषा निकलना एकदम अकारण न था।

पहले दिन तो सिर्फ औपचारिकता के दो चार वाक्यों का ही विनिमय हुआ। पर धीरे धीरे उनके बीच बात चीत के और भी आयाम खुले।

पपा स्वभाव से कम बोलती है। शुरू शुरू में उसका कम बोलना अपने चारों ओर गम्भीरता की लक्ष्मण रेखा खींचने जैसा था, पर धीरे-धीरे रत्नाकर की बातों की चतुराई और कलात्मकता ने उसका यह बांध तोड़ दिया।

सहकर्मियों की आंखों से उनकी यह घनिष्ठता छिपी न रही। क्योंकि उनकी आंखों में जो रहस्यमय मधुरता रहती थी, वही सब कुछ कह देती थी। कोई-कोई अकेले में रत्नाकर को छेड़ते, 'मिस्टर मल्लिक, यह तो बड़ी गड़बड़ बात हुई। आपकी सहकर्मिणी तो मिस की जगह मिसेज' निकली। सारा गुड़ गोबर हो गया।"

शुरू शुरू में पपा के साम्य को लेकर सरस समालोचना की बाढ़ आई थी। कुछ दिनों बाद वह खत्म हो गयी, फिर भी पपा को लेकर चर्चाएं बन्द नहीं हुई। कारण यह कि पपा सिर्फ गम्भीरता के आवरण में नहीं रहस्य के आवरण में भी ढंकी हुई थी।

अत्यन्त साधारण कपड़ा लत्ता में सप्ताह के पांच दिन पपा और लोगों की तरह ही बस में ठेला-ठेली करके चढ़ती और पसीने में भीग कर भीड़-भरी बसों में आती जाती। मगर सप्ताह के बाकी दो दिन उसके आचरण का रहस्य समझ में नहीं आता।

शनिवार को आधे दिन के आफिस के बाद ही एक बड़ी-सी कार

चुपचाप लाकर दफ्तर की इमारत के सामने सड़क की दूसरी ओर आ खड़ी होती। पपा दफ्तर से निकल कर तेजी से कार की तरफ जाती। कार का वर्दीधारी ड्राइवर बड़े आदर से उसके लिए कार का पिछला दरवाजा खोल कर खड़ा हो जाता। पपा को जोरदार सलामी देता। पपा अन्दर बैठ जाती तो कार अनिर्दिष्ट दिशा में चल देती।

लोगों ने देखा कार की पिछली सीट पर एक महिला बैठी होती। सोमवार को दफ्तर खुलने के पहले वही कार फिर पपा को दफ्तर छोड़ जाती। मिसेज पपा राय मन्द चाल से चलकर दफ्तर में प्रविष्ट होती। विशेष बात यह होती कि उस दिन उनकी वेशभूषा बड़ी शानदार होती। साड़ी कीमती होती बालों की सजावट भी नये फैशन की होती। आकर वह अपनी टेबुल पर बैठ जाती।

किसी को भी यह पूछने का साहस नहीं होता कि मिसेज राय आप 'वीकेंड' में कहाँ जाती हैं? सीधे सीधे प्रश्न पूछने की सुविधा और साहस न हो तो कल्पना के बबूले आसमान छूने लगते हैं। लोग आपस में दो तरह की चर्चा करते हैं। कोई कहता— शायद चुपके चुपके फिल्मों की शूटिंग करने जाती है। थोड़ा नाम धाम मिल जाये तो नौकरी छोड़ देगी।"

दूसरा कहता—' सिनेमा में जाने लायक तो है। चमक तो सकती है। मगर यह कैसी शूटिंग है कि दो दिन दिन रात चलती रहती है?"

कोई मुस्कराकर कहता—"आउटडोर शूटिंग होगी।"

कोई दूसरा टिप्पणी करता—' यह कैसी फिल्म है जिसमें हर सप्ताह सिर्फ आउटडोर शूटिंग होती है।"

कोई और टिप्पणी करता—' क्या पता इंडोर शूटिंग ही होती हो। डायरेक्टर के फ्लैट में क्या एकाध कमरा इस काम के लिए नहीं मिल सकता।"

' छि कैसी बातें करते हैं?' उन्हें देखकर तो नहीं लगता कि वे ऐसी होंगी।' एक भद्र व्यक्ति ने प्रतिवाद किया।

"वाह रे मेरे लाल बुझक्कड़! आप तो आदमी का चेहरा-मोहरा देखकर उसकी नस नस की पहचान कर लेते हैं।"

"वेवकूफी की बात मत करो। मैंने तो कुछ और ही सुना है।"

"अच्छा! क्या सुना है भाई?" कई लोग उत्सुक हो उठे।

'इनका एक दूर का रिश्तेदार बता रहा था— 'इनके मां बाप भाई वगैरह कलकत्ते के बाहर किसी गाव मे रहते हैं। डेली पैसिंजरी करना सभव नहीं है इसीलिए अपने एक रिश्तेदार के यहा रहती हैं। इसीलिए हर शनिवार को अपने परिवार से मिलने चली जाती हैं।"

'मगर ये तो मिसेज है तो फिर इनके मिस्टर कहा हैं? और फिर मांग मे कभी सिन्दूर भी नहीं देखा।"

'दुर आप भी क्या बात करते हैं। आजकल की मॉडर्न लडकिया सिन्दूर लगाती ही कहा हैं?"

और आजकल की माडर्न लडकिया मिस्टर के मर जाने पर भी विधवा कहां होती हैं। खान पान चाल चलन कही भी तो वैधव्य का कोई लक्षण नही दीखता है।'

"तो क्या आपका कहना है कि व विधवा है?"

"मुझे तो ऐसा ही लगता है।"

नही विधवा तो नही लगती। विधवा औरत चाहे जितनी भी सजे उसके चेहरे पर विधवापन लिखा रहता है। मुझे तो य परित्यक्ता लगती हैं।"

'हा, डरवोसस्ड भी हो सकती हैं। विधवा होती तो मा बाप और सास ससुर इस तरह चरने खाने को नही छोडते।'

"अरे, आजकल की औरतें मां बाप सास ससुर की कहां परवाह करती हैं। वसे आजकल की दुनिया मे मिसेज राय भी कब तक अपने को बचाये रहेंगी।"

"हमारे रत्नाकर बाबू मे साथ देखता हूँ बडी मीठी मीठी बातें होती हैं। विधवा या परित्यक्ता हों तो समझो बात पट गयी' ही ही ही ही, खी, खी खी खी!

इस तरह की बातें रत्नाकर की पीठ पीछे ही होती हैं। उसके सामने

बालने का किसी को साहस नहीं होता। लोग उससे डरते हैं। उसके व्यक्तित्व म एक खास तरह का रौब है। वह इस तरह की टुच्ची बाता मे एकदम रस नही लेता है। उसके सामने इस तरह की बातें करने पर उससे जो जवाब मिलता है उससे लोगो की चमडी उतर जाती है। इसीलिए लोग डरते हैं और इसीलिए उसे पस द भी नहीं करते। उसका व्यक्तित्व भी ऐसा है कि लोग आतकित रहते हैं। साधारण घर का लडका होते हुए भी उसके पूरे व्यक्तित्व मे एक खास तरह की सौम्यता और श्रेष्ठता है। जगबधु बाबू के फेयरवेल के समय जो ग्रुप फोटो लिया गया था, उसम रत्नाकर का सिर और लोगो से एक हाथ ऊंचा था।

इतनी कमियों के ऊपर सबसे बडी कमी यह कि जो मिसेज राय किसी की तरफ आँख उठाकर भी नही देखती उसकी आँखो म आँखें डाल कर मुस्कराने का दुस्साहस करता है यह आदमी।

रत्नाकर कुछ देर तक उस कार पर नजरें गडाये रहा। फिर धीरे-धीरे जाकर अपनी बस मे बैठ गया। कार शहर छोड कर बाहर की ओर जाने वाली सडक पर दौड पडी थी।

कोई ज्यादा दूर नही जाना पडा।

उसके आफिस से उत्तरपाडा है ही कितनी दूर ?

एक बहुत बडे कम्पाउ ड से घिरी विशाल काय कोठी म कार ने प्रवेश किया। कार जब पार्टिको के नीचे पहुँची तो एक पुरान वर्दीधारी नौकर ने झुक कर प्रणाम किया।

कोठी चारो तरफ के काफी जमीन। कभी वहां बहुत सु दर बगीचा रहा होगा, जो अब उपेक्षित है। हालाकि हर पेड पौधे की जड मे मिट्टी को यत्नपूर्वक खोद कर पानी दी गई मिट्टी मे माली क हाथा का स्पर्श है, पर सारा बगीचा श्रीहीन लगता है। लगता है किसी उदास जगल म ऊँघता हुआ एक राजमहल खडा हो। राजमहल मे जहां जो चाहिए सब है, पर जैसे सभी पर मौत की परछाइ पडी हुइ है।

शायद सिर्फ पपा को ऐसा लगता हो। और लोगों को सब ठीक ठाक लगता हो। पपा ने इस कोठी को जब पहली बार देखा था तो इसकी दरो दीवार पर सजावट करने वाले कर्माकार की उँगलियों की रंगीन छाप थी और यह पूरी कोठी रंगीन लट्टुओं से जगर मगर कर रही थी। अब इसे देखकर ऐसा लगता है कि कोई बूढ़ी औरत गालों पर लाली पोतकर सुन्दर दिखने की व्यर्थ कोशिश कर रही हो।

अब तो यह पूरी कोठी और इसके आस पास का सम्पूर्ण परिवेश जैसे ऊँघ रहा है। महामाया भवन का गेट देखकर पपा भी जैसे सिहर उठती है।

कार में साथ आई परिचारिका नीचे उतरी उसने पपा को उतरने के लिए आदर से अपना हाथ बढ़ाकर इशारा किया। उसके बढ़े हुए हाथ की ओर ध्यान न देकर पपा खुद नीचे उतर आई।

सभी कुछ निःशब्द हो रहा था। लोग तो थे पर उस घर का नियम था चुप रहना अनावश्यक एक शब्द भी मुँह से न निकालना। उस घर में आदमी बहुत कम थे यह बात भी नहीं थी। सभी जैसे पपा के आगमन की उत्सुकता से प्रतीक्षा करते रहते थे। उनमें से अधिकांश नौकर चाकर तथा आश्रित जन थे। वे सभी पपा का ऐसा स्वागत करते थे और उसके प्रति ऐसा भाव दिखाते थे जैसे वह उस घर की बहुत माननीय अतिथि हो।

बाहर के लम्बे चौड़े हाल को पार करके कोठी के भीतरी हिस्से में प्रवेश किया जाता है। यह हॉल बादामी होते हुए संगमरमर के पत्थरों का बना हुआ है। कोनों की तरफ दो एक जगह दरारें उभर रही थीं। दीवालों के साथ कितनी ही तरह की लम्बी आयु वाली पुरानी चीजें कतार से सजाकर रखी गयी हैं जो इस बात की गवाही दे रही हैं कि कभी इसका बड़ा वानवाला था। 'महामाया वर्तमान मालिक की दादी का है न'?

कार में पपा के साथ पीछे की सीट पर बैठकर आने वाली महिला इस घर की पुरानी सेविका है। उसे लोग सुखदा की माँ कहकर पुकारते हैं। वह अन्दर तक पपा के साथ जाती है यह उसकी ड्यूटी है। पपा सिर पर आँचल

ले लेती है और सुखदा की माँ साथ साथ अन्दर की ओर जाती है। इसे भी वह ड्यूटी की तरह लेती है।

अन्दर की चौखट पर पहुँच कर सुखदा की माँ एक पल रुककर बोल उठती है—"बहूरानी, पहले हाथ मुँह धोयेंगी या उन लोगों के साथ मुलाकात करेंगी ?"

पपा ने बहूरानी शब्द पर पहली बार ही आपत्ति की थी, कहा था—'ऐसे क्या बोलती हो सुखदा की मा ? मैं किस राज्य की रानी हूँ ?'

सीधीसादी सुखदा की माँ ने कहा था—"बहूरानी, ये सब राज पाट तो आपका ही है।"

"नहीं सुखदा की मा, मुझे यह सब अच्छा नहीं लगता तुम सीधे बेटी कहा करो।" फिर उसके मुह से अनायास निकल गया था—"राजा का ठिकाना नहीं, और रानी ! हुँह ?"

बहुत धीमे से कहे जाने पर भी ये शब्द सुखदा की माँ के कानों मे पड़े थे। एक पल स्तब्ध रहकर उसने कहा था—"राजा बाबू को गोद मे खेला कर बड़ा किया था। मगर कभी बेटा नहीं कहा अब आप को भला 'बेटी कैसे कह सकूँगी ! अच्छा बहूरानी न सही, बहूजी कहूँगी ठीक है न ?"

पपा से मना करते नहीं बना था।

सुखदा की मा ने फिर कहा था—'न हो पहले उन लोगों से मिल लीजिए। बूढा बूढी मुँह बाये आपको अगोर रहे हैं।"

पपा ने घूघट को थोडा सरका कर और चाल थोड़ी और धीमी कर ली।

थोडी दूर चलकर ही एक कमरे मे एकदम पंगु बूढा-बूढी बैठे हैं। उम्र ज्यादा नहीं है मगर दुर्भाग्य ने उन्हें अक्षम बना दिया है। कोठी का कारोबार देखना उनके लिए संभव नहीं है। वह काम कर्मचारीगण करते हैं।

जिन्होंने चरम उल्लास की उस रात मन्द हँसी देखा था वे क्या विश्वास

"क्या बात करती हो। इस परिवार का लड़का भला ऐसा गलत काम कर सकता है क्या ?"

पपा नाम की आफिस में काम करने वाली वह लड़की पुराने जमाने की बहुओं की तरह सिर पर आँचल लेकर कमरे में घुसी और उन दोनों अकाल वृद्ध व्यक्तियों को प्रणाम किया।

बूढ़ा बूढ़ी अत्यन्त भावुक हो उठते हैं। बात करते समय गला कांपता है और हाथ पकड़ते समय हाथ काँपते हैं।

काले चश्मे से ढकी आँखों वाले प्रभातसूर्य राय ने अपना एक हाथ शून्य में उठाते हुए कांपते गले से कहा—"आ गयी बेटी ? हम सवेरे से तुम्हारा इंतजार कर ।" बात पूरी नहीं कर सके।

शून्य में उठे हुए हाथ से पता चलता है कि उनकी देखने की शक्ति समाप्त हो गयी है और ह्वील चेयर बता रही है कि उनमें चलने फिरने की शक्ति भी नहीं है।

पपा प्रभातसूर्य राय के बढ़े हुए हाथ अपने हाथों से सहलाती हुई बोली—'मैं जरा नहा धोकर आती हूं। सारे दिन की धूल शरीर पर है क्या ?"

प्रभातसूर्य ने हताश स्वर में कहा—'तुम क्यों अभी भी वह मामूली नौकरी लेकर परेशान हो रही हो। यह तो लक्ष्मी होकर भिक्षा मांगने जैसी बात है।'

पपा इस बात का कोई उत्तर नहीं देती है। यह आक्षेप रोज का है। आमतौर पर इसमें पपा की भूमिका नीरव श्रोता की होती है। मगर आज अचानक उसके चेहरे पर व्यंग्य की मुस्कुराहट खेल गयी और उसके मुंह से निकला— 'लक्ष्मी नहीं, कुलछनी कहिए।'

छि छि ऐसी बात क्या करती हो बेटी।' पूर्णिमा राय ने प्रायः रुआँसे स्वर में कहा—' इसमें तुम्हारा क्या दोष है। तुम तो सर्वगुण सम्पन्न लड़की हो तुम्हारी जन्मपत्री में 'राजरानी भाग' है। यह तो हमारे पूर्वजन्म का पाप है।' पूर्णिमा राय ने अपनी आँख पोंछते हुए कहा।

पपा मन ही मन सोचती है ये लोग इस विषय में क्या इतने उदार हैं। भाग्य, पुनर्जन्म, जन्मपत्री, कुंडली वगैरह तो इनके संस्कारों में जकड़े बैठे हैं। फिर भी विधवा बहू को कुलच्छनी न कहकर अपने भाग्य को ही दोष दे रहे हैं। इससे बड़ी उदारता और क्या हो सकती है। मगर यह उदारता पपा के लिए सुविधा की जगह असुविधाजनक ही है।

ये बातें तो मन में चलती हैं। मगर पपा ऊपर से कहती है— 'मगर मैं तो अपने को वही मानती हूँ।'

"नहीं, नहीं, तुम्हें यह सब सोचने की जरूरत नहीं है, तुम घर की लक्ष्मी हो। तुम तो इस श्मशान जैसी कोठी में प्राण भरती हो। जाओ नहा-धोकर नाश्ता कर लो। सुबह की निकली हो, बहुत थक गयी होगी।' फिर पत्नी से कहा—"सुनती, हो, जाकर देखो बहूरानी के लिए उन लोगों ने नाश्ते में क्या बनाया है।'

खाने-पीने की व्यवस्था अंधे और पंगु पति के लिए पूर्णिमा ही करती है। पहले खिला भी देती थी, पर प्रभातसूर्य राय ने मना कर दिया बोले, 'अपने हाथ से खाने का मजा ही और है। फिर भी पूर्णिमा सामने बैठी रहती है, खाली कटोरियाँ भर देती हैं, किस कटोरी में क्या है बताती है और मछली के कांटे बीनकर निकाल देती है। वैसे आजकल गोश्त ही ज्यादा पकता है। बीच बीच में पपा भी अपने श्वसुर को खिला देती थी। निश्चय ही पूर्णिमा के कहने पर ही वह ऐसा करती थी।

शुरू शुरू में पपा को अच्छा नहीं लगता था एक तरह से बुरा ही लगता था। पर वह मन को डांटती थी। एक असहाय अंध मनुष्य की सेवा करना तो हर मनुष्य का धर्म है।

मगर मन य सब तक नहीं मानता था। जो अरुचिकर था उसे रुचिकर नहीं मान पायी वह कभी। पर तभी एक दिन प्रभातसूर्य ने अपने हाथों खाने की जिद करके इस सिलसिले का ही खत्म कर दिया। क्या व पपा के मन की भावतरंगों को समझ गये थे?

इस घर म डायनिंग टेबुल पर खाने का प्रचलन था, मगर स्त्रियाँ टेबुल पर नहीं खाती थी टेबुल पर गृहस्वामी और उनके पुत्र भोजन करते थे। मगर एक मात्र पुत्र बेहद कम खाते थे। इस बात पर गृहस्वामी रोज ही असतोष व्यक्त करते थे।

महिलाए जमीन पर आसन बिछाकर भोजन करती थीं। रसोईघर के अन्दर ही परिवार मे रहने वाली अन्य अभिताओ के साथ पूर्णिमा भोजन करने बठती थी सप्ताह मे डेढ दिन पपा भी उनका साथ देती थी।

पपा के इस घर म आने के पहले गहस्वामी ने पत्नी से एक दिन कहा था— देखो, एक बात मैं अभी से कह दे रहा हूँ बहूरानी को हम अपने साथ टेबुल पर बैठकर खिलायेंगे। बाद मे तुम खिचखिच मत करना।"

सुनकर पूर्णिमा सचमुच नाराज हुई थी बोली थी— मैं भला खिच-खिच करूगी। यह तो तुम्हार ही घर का चलन है। ससुर जी के समय से ऐसा ही हो रहा है और तुम अपने घर की परपरा बदलना चाहते हो तो मुझे इसमे क्या एतराज हो सकता है।"

सुपुत्र दीप्ति सूम ने कहा था—"पिताजी अगर एक बात कह-कर सी बात सुननी पडे तो वह बात कहने की जरूरत ही क्या है। जो काम भविष्य मे कभी करना हो उसे अभी से कहकर मा को नाराज करने का फायदा क्या ?'

माँ बाप ने आखो ही आखो मे मुस्कुराकर पुत्र के भोलेपन के प्रति प्रशसा व्यक्त की थी।

मगर यह सब करने का वक्त ही नही मिला। गहस्वामी की घोषणा बेकार गयी। कुल की परपरा अटूट रही।

पपा अपनी सास और दूसरी महिलाओ के साथ रसोईघर मे आसन पर बैठकर खाती। उसकी थाली मे तरह-तरह के व्यजनो से भरी कटोरियो की भरमार होती। कितनी ही चीजें उसे थाली म से हटानी पडती। महिलायें अनुरोध पर अनुरोध करती पपा को यह सब कुछ बडा बनावटी और फालतू लगता।

शनिवार की रात यह पवित्र भोज नहीं होता था। पपा के लिए शाम को नाश्ता की जो व्यवस्था होती थी उसके बाद कुछ खाने की उसे इच्छा नहीं होती थी।

पपा भगवान से प्रार्थना करती कि जल्दी से रात हो जाय रात म पपा के लिए दोतल्ले पर का सबसे सजा धजा सबसे सुन्दर कमरा खोला जाता था इस कमरे से जुड़ा हुआ एक सगमरमर का बरामदा था। इस बरामदे से पिछवाड़े के बगीचे म आम कटहल, सुपारी के पेड़ दिखायी पड़ते थे और बचान के कमरे। रात के समय इसी बरामदे मे आकर पपा अक्सर खड़ी होती थी। पीछे की तरफ का दृश्य उस गाँव के दृश्य जैसा लगता था। वैसे ये बरामदा पूरी तरह सुरक्षित था। पूरे बरामदे में ग्रिल और काँच लगा हुआ था। बीच बीच मे खिड़कियाँ थी। जिन म ताले लगे थे। और चाबियाँ गृहस्वामी के पास होती थी।

यह कमरा दीप्तिसूर्य नामक उस अभागे लड़के का है जिसकी बड़ी सी तसवीर दरवाजे के ठीक सामने दीवाल पर टगी हुई है। तसवीर पर ताजा फूलो की माला लटक रही है। ये माला हर सप्ताह पपा के आने के पहले बदल दी जाती है। इसी घर म उस अभागे युवक की उत्तराधिकारी पपा सोनी है।

चाबियो का गुच्छा हाथ से लेकर सुखदा की माँ पपा के साथ आती है। दरवाजा खोल देती है। यह कमरा सुखदा की माँ के ही चार्ज मे हैं और पहले भी था। प्रतिदिन इस घर की अच्छी तरह सफाई करना इसकी ड्यूटी है और हर रात दरवाजा खोलने के बाद वह एक बात जरूर कहती है— 'बहूजी मैं भी इसी कमरे के एक कोने म फर्श पर पड़ी रहू ? आप को कमरे मे अकेले ।

पपा को भी इसका उत्तर याद हो गया। हर बार वह कहती है— नहीं, नहीं मुझे कोई परेशानी नहीं है।

माँजी और बाबू जी दोनो ही परेशान होते हैं। कहते हैं तू भी बहू रानी से पूछकर कमरे के अन्दर ही सोया कर। कमरे मे अकेली सोने से

बहूरानी को डर लगेगा।"

"मैं कोई बच्ची हूँ कि डरूँगी और फिर तुम तो बगल के कमरे मे ही हो।"

'कमरे मे थोड़ा ही सोती हूँ। मैं तो आपके दरवाजे के बाहर ही रातभर लेटी रहती हूँ।

"क्या? ऐसा क्या करती हो! बगल का कमरा तो खाली ही पड़ा हुआ है।'

'बाहर का बरामदा भी तो किसी कमरे से कम नहीं। साफ सुथरा, चारो ओर से बद! पहले कोठी मे कोई काम काज होता था तो इस दालान म ही मेहमानो के बिस्तर लगत थ।"

"कैसा कामकाज मौसी?

"ओ माँ! कैसा कामकाज पूछती हैं। बारह महीन म तेरह पव होते हैं। उस पर कभी गुरूजी आ रहे हैं, कभी उनके गुरुभाई। राजा मुन्ना के जन्म दिन पर भी कम मेला नहीं लगता था। दादीमाँ के परलोक सिधारने के बाद वह सब थोड़ा कम हो गया था। मौसी और बाबूजी के राज म भी लोगो का आना-जाना, खाना पीना कम नहीं था। मगर भगवान को ही जब उनका सुख देखा नहीं गया पपा होंठ काट लेती, सोचती कोई भी बात उठाओ वह प्रसग जरूर आ जाता है।"

पपा के कमरे के बाहर अकेली सुखदा की माँ ही नहीं होती। घर का पुराना चौकीदार भी उनके पीछे पीछे दोतल्ले तक आता। यह आदमी दोतल्ले के रात का पहरेदार है। यह आदमी और नौकरो से थोड़ा अलग है, उम्र भी काफी है। और नौकरो की तरह कच्छा बनियान की जगह धोती और मिरजई पहनता है। वह पूर्णिमा को बहू माँ कहता है और उसके ससुर के वक्त का नौकर है।

इस आदमी का नाम पपा नहीं जानती। उसने उसके गले की आवाज भी कभी नहीं सुनी। लगता है वह पतला दुबला चुप रहने वाला बूढा पुराने जमाने की किसी आख्यायिका म से प्रगट हो गया। पपा ने अपने

मन से उसका नाम रहमान रख छोडा है। हालांकि उस घर म किसी नौकर को रहमान होने की बात नही है फिर भी पपा को यह नाम ही अच्छा लगता है। उसे यह सोचकर हसी आती है कि यह आदमी पहरेदारी क्या करेगा। जरा सी ठोकर खाकर चारो खाने चित्त हो जायेगा शायद इसकी योग्यता यह है कि यह विश्वासी है और इसकी शक्ति इसका आत्म विश्वास है।

तीन तीन आदमियो के उपस्थित होने पर भी पपा को प्रभातसूय की बात याद आती है। उन्होंने कहा था कि यह घर नही श्मशान भूमि है।

बात कोई गलत भी नही है। दालान म एक कतार मे ताला जडे दरवाजे जैसे इसी तथ्य की पुष्टि कर रहे है।

पपा समझ नही पाती कि इतने बडे बडे मकान लोग बनाते क्या हैं। उनके स्वजनो और परिजनो की सख्या कितनी बडी होती थी? प्रभातसूय के दादाजी ने यह कोठी अपनी स्वर्गीया पत्नी की स्मृति म बनायी थी। उनके तो एक ही पुत्र था। प्रभातसूय के पिता उदयसूय, फिर भी इतनी विशाल कोठी बनवायी उन्होने।

भगवान जाने इन कमरो म कौन रहता था। और अब इनम ताला बन्द करके क्या रखा हुआ है? और क्या होगा? पुरानी मजबूत लकडी की बनी आलमारिया और बक्स बडे बडे आईने, चौडे फ्रेमो मे बधी पुरखो की तस्वीरें होगी। हो सकता है विदेशी चित्रकारो द्वारा बनाये चित्र भी हो। सीढी की दीवारों पर तो वैसे ही चित्र लगे हुए हैं।

अचानक उसे याद आया। 'नही, नही य कमरे की शायद इसी कमरे की तरह सजा कर रखे हुए हो। व लोग तो पहले इसी दोतल्ले पर रहते थे। जो अब रुग्ण होकर नीचे पडे और हुए हैं। इस घर के मालिक—मालकिन।

यहा जो कुछ है सब उन्ही की तरह धीरे धीरे जीण और क्षय होता जायेगा। इसी जीण और क्षयिष्णु सभार को वे मुझे सौंपना चाहते हैं, कहते है, तुम्ही तो इस घर की भावी मालकिन हो। यह राज-पाट तो

तुम्हारा ही है।"

माफ करा बाबा, इस आक्टोपस के चगुल से निकल भागने म ही कल्याण है। दिन रात पपा यही सपना देखती रहती है कि कैसे इस परिस्थिति ■ छूटे। पीछे के बागीचे के फूलो के अलावा और किसी चीज की तरफ नजर फेरने की भी उसकी इच्छा नहीं होती। दूसरी चीजो और उस घर के आदमियो को देखकर जाने कसी अश्रद्धा उसके मन म पदा होती है।

"तनी चीजे क्यो इकट्ठा कर लेता है आदमी, पैसा होने का मतलब यह तो नही कि आदमी दुनिया भर की फालतू चीजें घर मे भर लें। य सब बडी-बडी आलमारियाँ, बडे-बडे पलग, बतन-भाँडे और मेज कुर्सियाँ—कमरे तो कमरे, दालानो और सीढ़िया की दीवारा में और शोकेसा मे सजायी गयी हैं। अभाव मे पली पपा के लिए वैभव का यह प्रदशन बर्दाश्त स बाहर था।

सुखदा की माँ पपा के शयनकक्ष का दरवाजा खोलती है बत्ती जलाती है फिर पूछती है—' बहू जी बरामदे की खिडकियाँ खोल दू क्या ?"

'हाँ खोल दो। रात मे उधर देखना मुझे अच्छा लगता है।

मैं तो हवा के लिए खोलने को कह रही थी, उधर देखने को भला क्या है। पड पौधे और अधेरे इसके अलावा है क्या उधर ?"

'जो भी है, मुझे अच्छा लगता है।"

सुखदा की मा मुह से कुछ नही बोलती, पर मन-ही मन कहती है, जैसा तुम्हारा फूटा भाग्य है वसे ही तुम्हारे शौक हैं। अधेरे में देखना अच्छा लगता है ! कमरे म अकली सोना अच्छा लगता है ! शायद लडकी को अभी भी गुमान नहीं है कि उसने क्या खाया है।

पंपा बात बढ़ाना नही चाहती वह जान बूझकर जम्भाई लेती है। सुखदा की माँ सकेत समझ जाती और जल्दी से कहती है—"अच्छा बेटी, तुम जल्दी से सो जाओ, दिनभर की थकी माँदी हो।' और जाते-जाते एक

प्रश्न करना नहीं भूलती। अच्छा, एक बात बताओ, तुम्हारे लिए नौकरी करना क्या जरूरी है हम सभी सोच सोचकर हैरान हैं।"

पपा हँसकर कहती है—"कुछ दिन और सोचो, समझ म आ जायेगा!"

पपा दरवाजे की तरफ बढती है सोचती है इसे सीधे सीधे भागने का इशारा न करें तो यह जायेगी नहीं। अच्छी सँगिनी मिली है मुझे। इसकी बातो से कितनी चिढ लगती हैं अगर उसके पीछे वास्तविक प्रेम का एह-सास न मिलता तो इस बर्दाश्त करना मुश्किल था।

सुखदा की मा के चले जाने पर पपा दरवाजा बद कर लती है और रोशनी बुझा देती है। सब कुछ अधेरे म डूब जाता है। पपा सोचती है अधेरा ही अच्छा है। जब तक रोशनी होती है। तब तक दीवरो पर टगी तस्वीरो जैसे चारो ओर से उसे घूरती रहती है। उन की वह अपलक स्थिर दृष्टि पपा सहन नहीं कर पाती। मगर अधेरे म भी एक परेशानी रह ही जाती है। ताजे फूलो की माला की तेज गध तब भी पीछा नहीं छोडती। खुली खिडकियो से आती हुई तेज हवा उस सुगध म लपेटकर पपा के ऊपर जैसे हमला कर देती है।

कमरे मे सागौन का बेहद सुदर एक डबलबेड है जिस पर डनलप-पिलो के गद्दे और रेशम की चादरें बिछी हुई हैं। सपन्न लोगो के इकलौते बेटो के शयनकक्षो म जसे पलग होते हैं वैसा ही यह भी था। पुत्र ने भले ही इसका उपयाग न किया हो। परन्तु पुत्रवधू के लिए उसे अभी भी सजा कर रखा गया है।

पपा को आदेश है कि वह इसी बिस्तर पर सोयेगी। पहले दिन पपा को साथ लेकर पूर्णिमा दी हाफ्ते हाफ्ते इस कमरे म आयी थी और बोली थी— यह सब कुछ तो तुम दोनो के लिए ही किया था हमने। उस भगवान ने छीन लिया। अब अगर तुम इसका थाडा बहुत उपभाग कर लोगी तो हमारे मन को शाति मिलेगी। अब ता मन कुछ तुम्हारा ही है।"

उस विशाल राजशैय्या पर पपा के लिए अकेली सोना क्या इतना

आसान था। पपा बरामदे की तरफ की खिडकियाँ खोलकर अधेरे मे नजरें गडा लेती और सोचती किस्मत से इस कमरे मे ये खिडकियाँ हैं वरना मैं घुटकर मर जाती।

अँधेरे मे भी हवा मे डोलते सुपारी के वृक्षों का अन्दाजा लग रहा है। बगीचे के पिछले हिस्से मे जो खपरैल का मकान है उसके बंद दरवाजो की फाँक से रोशनी की एक लकीर बाहर झाँक रही है। उसमे ग्वाला दम्पति रहते हैं। एक दिन ग्वालिन पपा से मिलने आयी थी।

उस परिवार के बधु-बाधव नौकर चाकर एक-एक कर पपा से मिलने आते हैं। सभी उस आँखो मे आँसू भर देखते हैं और आह भरते है। पपा के लिए यह सब बहुत ही निरर्थक और यत्रणादायक लगता है।

काफी देर तक अधेरे मे हिलते डुलते परिदृश्य पर आँखें गडाए रखने के बाद पपा धीरे-धीरे कमरे मे आती है। बरामदे की तरफ का दरवाजा बंद करती है। एक तकिया उठाकर बडे सोफे पर लेट जाती है। गहरी सास लेकर खुद से कहती है, एक और रात इसी मुतहे कमरे मे काटनी है।

पपा सोने की कोशिश करती है। मगर क्या सो जाना उसके लिए इतना आसान है। एक दृश्य बार-बार उसकी आँखो के सामने उपस्थित होता है जैसे वह इस कमरे के कोने मे कही दुबका बैठा हो, पपा ऊपर हमला कर देने को तत्पर। निद्रा और जागरण के बीच बार बार वह दृश्य पपा की चेतना पर हमला करता है।

एक सुन्दर सजी धजी बडी सी कार मे एक वयस्क दम्पति के साथ एक सद्य विवाहित जोडी बैठी है। दुल्हन के शरीर पर सुनहले काम की बनारसी साडी और दुल्हे के शरीर पर हल्के पीले रग का रेशम का जोडा। वयस्क महिला के शरीर पर सफेद बनारसी साडी और हाथो मे पूजा-सामग्री की डलिया। माथे पर सिंदूर की बडी सी बिंदी पसीने से भीगी हुई। चेहरे पर आनन्द विह्वल प्रसन्नता की छाप।

वयस्क पुरुष के चेहरे पर वयस्कता की कोई छाप नही हँसकर वह वयस्क महिला से कह रहा है—"बहूरानी को वह सब समझा दिया है

न ?"

वयस्क महिला ने हँसकर कहा—"समझाने का समय भागा ता नही जा रहा है। बहूरानी, हमारी ससुराल का यह नियम है कि पहले नयी बहू को तो जाकर उत्तरवाहिनी मदिर के आँगन म जो सफेद पत्थर है उस पर खडा करके उसे माला पहनाते हैं फिर घर ले जाकर विवाह किया जाता है। हमारा विवाह भी ऐसा ही हुआ था। हमारा विवाह भी इन्ही पुरोहित ।"

वयस्क महिला अपना वाक्य पूरा करे उसके पहले एक भयानक आवाज हुई और उनकी आँखो के सामने की चलमलाती दुनिया अँधेरे म डूब गयी। कितनी भयकर आवाज थी जैसे बिजली गिरी हो या आसमान फट पडा हो।

वही शब्द और वही दृश्य जसे पपा का पीछा करते हुए इस कमरे म दाखिल हो जाता है। पपा हडबडाकर उठ बैठती है फिर धीरे धीरे लेट जाती है मगर सारी रात फिर उसे नीद नही आती है। पपा राय और पूर्णिमा राय— ये दोनो महिलाएँ आजतक यह नही समझ पायी कि दूसरी दिशा से दैत्य की तरह दौडती आती ट्रक ने कैसे इतना परफेक्ट आपरेशन किया कि दोनो महिलाएँ कार मे से उछलकर सडक पर आ गिरी और सिर्फ दो-तीन घटे बेहोश रही। यह और बात है कि मदद पहुचने के पहले उनके शरीर गहनो के बोझ से छुटकारा पा चुके थे। मगर इसके अलावा उनको कोई क्षति नही हुई।

मगर चकना चूर हुई कार म से दोनो पुरुषो के क्षत विक्षत शरीरो को बडी मुश्किल से बाहर निकाला गया। उनम से एक अस्पताल की चाहरदीवारी छूकर सुरधाम सिधार गया और दूसरा बहुत दिनो तक अस्पताल मे वासकर एक दिन स्ट्रेचर पर ही घर वापस लाया गया। उसके दोनो पाँव कट चुके थ और वह अपनी आँखो की रोशनी खो चुका था। वह खुद गाडी चला रहा था। उसने ड्राइवर को पूजा की सामग्री लेकर दूसरी गाडी मे पहले भेज दिया था। वह गाडी मदिर पहुच चुकी थी अनु

ध्यान मे कोई त्रुटि हान की संभावना नही थी मगर ।

पूर्णिमा राय न हाहाकार करते हुए कहा था— देवी माँ, अगर अनजान म तुम्हारी पूजा म काई कमी रह गयी थी तो तुमने मेरी बलि दी होती। तुम इतनी निष्ठुर कैसे हो गयी वाला माँ ? मगर पत्थर की मूरत ने भला कब किसी आदमी क प्रश्नो का उत्तर दिया है।

रात आँखो म काटकर पना ने बरामदे की काँच पर भोर का आभास पाया तो उसने चैन की साँस ली उसन सोचा वह पूर्णिमा से कहेगी— 'रोज रोज कमरे म ताजा फूलो की माला न लगाया करें, मुझे नीद नही आती। मगर दिन म पूर्णिमा के मुह के सामने वह यह बात नही कह सकी। उसक मन म सिर्फ एक आकांक्षा घुमरती रही कि कब वह ताजा फूलो के गधभार से आक्रान्त रातो से निस्तार पायगी। कब इस मुर्दा घर म रात काटन की उस मजबूरी से वह छुटकारा पायेगी ?

पना की यह साप्ताहिक यात्रा उसके सहकर्मिया की नजर म पडती है। हर आदमी अपनी मानसिकता और अपनी कल्पना शक्ति क अनुसार सोचता और बोलता है। काई कहता— 'सुना है मिसस राय के एक मामा बहुत रईस हैं व वीक एड मनान वही जाती है।'

इस पर दूसरा व्यक्ति टिप्पणी कहता— 'आप ठीक कहते हैं ऐसी सुन्दरियो की किस्मत म रईस मामा काका भया मिल ही जाते हैं।''

फिर काई बडे भोलेपन स पूछता— 'तो फिर यह महिला जाती कहाँ है ? अपन घर तो नही हो जाती है।

दूसर सज्जन कहते— 'ही ही ही ही, आप का भी काई सेंस नही है। मामा, काका की कार म बैठकर काइ सुन्दरी अपनी गरीब विधवा माँ स मिलन जायगी ?''

एक तीसरा व्यक्ति बडे आश्वस्तभाव से कहता—''मैं तो समझता हूँ जरूर फिल्मो म काम करने जाती है।'

"आप को भी, लगता है, बुद्धि का अजीर्ण हो गया है जरा बताइये तो कौन स्टूडियो है जो शनिवार और रविवार को ही खुलता है? जरा बताइये तो।"

"आपने एक चीज लक्ष्य किया है कि रत्नाकर मल्लिक को छोड़कर आफिस के किसी आदमी से कोई बात नहीं करती हैं और रत्नाकर मल्लिक तो ऐसा फिदा हो रहा है।

'होगा नहीं। रूपवती सुन्दरी तरुणी से ज्यादा लोभनीय चीज किसी बैचलर के लिए क्या हो सकती है। एक दिन मिस्टर मल्लिक से पूछते हैं।'

"क्या पूछेंगे?"

'यही कि मिसेज राय हर शनिवार को एम्बेसडर गाड़ी में बैठकर कहाँ जाती हैं।'

'जरूर पूछियेगा, अगर आपकी शामत आयी हो तो।' बोली ऐसी है उसकी कि देह की चमड़ी खिल जाती है। लगता है कभी आप रत्नाकर मल्लिक के पाले पड़े नहीं है।"

"अच्छा, एक दिन मिसेजराय जरूर मिसेज मल्लिक बन जायेंगी।'

'इसमें भी कोई शक है।"

'मगर वह एम्बेसडर वाला अपना क्लेम छोड़ेगा तब तो?] मामला बड़ा रहस्यमय है।"

"अच्छा मित्रादादा एक बात बताइये मल्लिक कैसा मर्द है? इसे यह मामला बुरा नहीं लगता?"

"क्या कहते हैं मैंने देखा है मल्लिक एम्बेसडर गाड़ी को ऐसी नजरों से देखता है कि मुझे तो लगता है किसी दिन गाड़ी भस्म हो जायेगी।

इसका मतलब है मिसेज राय बड़ी पहुँची हुई खिलाड़ी है। गाड़ी वाले और दफ्तर वाले दोनों प्रेमियों को एक साथ साध रही है।

कल्पना के घोड़े दौड़ाने के बाद भी जब कोई ठीक ठीक नतीजा नहीं निकलता तो वे इस मामले को रहस्य मान कर छोड़ देते और रत्नाकर पर तरस खाते हुए कहते, ऐसा सुन्दर अविवाहित युवक है रत्नाकर और

उसकी किस्मत म किसी 'मिस' की जगह यह 'मिसेज' लिखी हुई हैं।"

रत्नाकर ने आफिस आते ही बगल की सीट पर निगाह डाली। पपा अभी नही आयी थी। क्या बात है। वह तो बडी पक्चुअल है। वसे अभी दो तीन मिनट की ही देर हुई हैं, पर पहले तो कभी एक मिनट की भी देर नही हुई।

अचानक राधा मोहन न आकर पूछा, "क्या बात है रत्नाकर बाबू मिसेज राय नही आई ?"

रत्नाकर ने उसी समय आये लडके स चाय का कप लेते हुए रखे स्वर मे कहा, 'मैं क्या ज्योतिषी हूँ।"

"नही, यह बात नहीं, मैंने सोचा शायद आपको पता हो।"

रत्नाकर ने भौह टेढो करते हुए पूछा, "क्या, आपने ऐसा क्या सोचा ?

'जी मेरा मतलब है ।'

"हाँ हाँ बोलिए।'

"मतलब यह कि एक जगह बैठते हैं आप दोना इसलिए ।"

"इसलिए क्या ? एक जगह बैठने से ऐसा क्या हो गया कि मुझे उनके बार म सब कुछ मालुम होना चाहिए।"

'अच्छा ! चलता हूँ।"

"नही चलेग क्या। मरी बात का जवाब देते जाइय।'

"इस बात का भला कोई उत्तर होता है।"

'हर सवाल का कोई न कोई उत्तर होता है।"

'मरा मतलब है हम सभी चिंतित हैं कि जो एक दम घडी की नोक पर दफ्तर आता है वह आज क्यो नही आया ? शनिवार को ठीक दफ्तर बद होते ही एक कार आ खडी होती और सोमवार को दफ्तर खुलते ही उन्हे छोड जाती है। सिफ आज ।'

"अच्छा तो आप लोगो की चिंता का एकमात्र प्रसग मिसेज राय है ?

रत्नाकर ने व्यंग्य किया।

'मैं समझा नहीं।" राधामोहन ने भोले पन से कहा?

'नहीं समझे न? तो उधर देखिए वह आ रही हैं। उनसे पूछ लीजिए। आप लोगों की चिन्ता का समाधान हो जायेगा।'

'अच्छा। आ गयी? कमाल है। नमस्कार मिसेज राय, रत्नाकर बाबू ने कह रहा था आज आप बड़ी लेट हैं। ऐसा तो कभी होता नहीं था। अच्छा नमस्कार।'

राधामोहन चला जाता है।

पर एक पल बाद ही अट्टहास सुन पड़ता है। साथ ही एक आवाज 'तहो जमाता है साला। आफिस में बैठकर विधवा औरत से रामलीला रचाने का मजा निकाल देंगे।'

रत्नाकर जोर से हंस पड़ा।

'एस हँस क्यों?' पपा ने पूछा।

'हँसी आ गयी।'

"अकारण?"

"अकारण ही तो। क्या अकारण कुछ नहीं होता?' आफिस आते समय पपा के मन में एक उदासी घुल रही थी। उसने सोचा था आफिस जाकर चुपचाप काम में लग जायगी बिना कुछ बोले और काम खत्म करके चुपचाप घर चली जायगी। पर कमरे में प्रवेश करते ही रत्नाकर का खिलता चेहरा और हंसी सुनकर जैसे उसकी उदासीनता पता नहीं कहाँ गायब हो गयी। चुप रहने की प्रतिज्ञा टूट गयी बोली मगर शास्त्र में तो कहा गया है कि बिना कारण के कोई कार्य नहीं होता?'

रत्नाकर एक पल मुस्कराता हुआ उसे देखता रहा फिर बोला 'कभी कभी शास्त्रों में जो कुछ बताया गया है इसके बाहर भी कुछ होता है। कुछ चीजें अकारण भी हो जाती हैं जैसे प्रेम'। अंतिम वाक्यांश अवश्य ही उसने फुसफुसा कर कहा था।

पपा का अंतर कांप उठा। रत्नाकर की बातें जैसे किसी लुटेरे के हाथों

की तरह आगे बढ़ते आ रहे हैं आग बढ़ते बढ़ते वे हाथ पंपा के एकदम पास आ गए हैं। पंपा क्या करे? उनके आगे आत्मसमर्पण करे अथवा मुंह घुमा कर भाग खड़ी हो?

उसके अतीत में जमा हुए अंधकार का जो पहाड़ खड़ा है उसके जीवनाशा को घेरकर क्या वह उसी की गुफा में जाकर छुप जाय?

यह आदमी क्या कोई जादू मंत्र जानता है? इसकी हँसी, इसकी बातें और इसकी दृष्टि जैसे उस पहाड़ को कुहासे की तरह उड़ा देते हैं।

पंपा ने उस आकर्षण से अपने को बचाने की कोशिश में और कुछ नहीं सूझा तो बोल पड़ी—"आते ही चाय शुरू हो गयी? कितनी बार पीते हैं?

'जितनी बार मिल जाय।' रत्नाकर ने मुस्कुरा कर कहा। यह उस से छुपा न रहा कि पंपा प्रसंग बदलने की कोशिश कर रही है। वह मन ही मन मुस्कराया।

जान बूझकर अपने स्वास्थ्य का क्या नुकसान पहुंचा रहे हैं?"

'यही मनुष्य का स्वभाव है।

'अपने का नुकसान पहुँचाना मनुष्य का स्वभाव है?

'है ही।"

"क्या सभी ऐसा करते हैं?'

'जी हाँ, सभी।" कोई जान बूझकर कोई अनजाने में और कोई अनजान बनने का नाटक करते हुए। मेरी बातों पर जरा गौर कीजिएगा।" इतना कहकर रत्नाकर ने एक भरपूर नजर पंपा पर डाली।

पंपा ने रत्नाकर से नजरें चुराते हुए कहा—"यह दार्शनिक चिंतन-मनन का समय नहीं है। फाइलें बुला रही हैं। पंपा की नीची झुकी आंखों में भी एक बिजली कौंध रही थी।

उधर दूसरे कमरे में राधामोहन एंड कंपनी अनुमान लगा रहे थे कि वे अब मिसेज राय मिसेज मल्लिक होने ही वाली हैं।

बेलेघाटा की श्रीमती कमला चक्रवर्ती सप्ताह के आखिरी तीन दिन भयानक यातना म काटती है। शनिवार की सुबह किसी तरह दो कौर मुह म डालकर जो निकलती है ,लडकी तो फिर सोमवार की शाम को उससे भेंट होती है।

शुरू-शुरु म एकाध बार कमला न पडोसियों के वहाँ स टेलीफोन करके लडकी का हालचाल जानने की कोशिश की मगर पपा । मना कर दिया। बोली—"इतना परेशान होने की जरूरत क्या है ? तीन चार घटे बाद ही तो घर आ रही हूँ।"

बस से उतर कर अपनी गली मे मुडते ही पपा न देखा कि उसकी माँ शक्ति बैट्री वाली दूकान की मोड पर खडी उसका इतजार कर रही है। ताज्जुब की बात है ! माँ का यह रोग नही जायेगा पपा न मन ही मन सोचा।

पपा पर नजर पडते ही कमला घूमकर घर की ओर चल दी। पपा ने रास्ते म खडा होकर इतजार करने के लिए माँ का मना किया।

घर म घुसत ही पपा न मा से पूछा—'मुझे देखते ही ऐस 'एबाउट-टन' कसे हो गयी ?'

कमला चौंक उठी, सोचा था उसने लडकी को देख लिया है पर लडकी न उसे नही देखा है। कोई और बहाना नही सूझा तो बोली—'सोचा, जल्दी से चाय चढा दू। जनता स्टोव पर चाय बनने म भी एक युग लगता है।

'तो फिर रास्ते म जाकर क्या खडी थी ?'

'यू ही। कोई खास बात नही। घर मे इतनी उमस होती है।'

"और इसी गरमी मे मुझे गरम चाय पिलाना चाहती हो।

तू तो पुलिस की तरह जिरह कर रही है।'

कधे से बग उतार कर पपा ने दीवार के रखी पतली बेंच पर बठ गयी जैसे उसके पिता दफ्तर से आकर बैठते थे जब वे जिन्दा थे।

पहले तल्ले पर अढाई कमरो म बनी इस गृहस्थी मे कहीं कोई

उसके चौंकने के दो कारण थे। एक तो चिट्ठी आने की बात और दूसरे 'तुम्हारी ससुराल' शब्द का उच्चारण माँ पहले उन लोगों को 'उत्तर पाड़ा वाले' कहकर संबोधित करती थी। 'ससुराल' में अद्भुत ही आत्मीय शब्द का भी कुछ नया संदर्भ तो था ही।

पपा ने माँ की ओर कौतूहल से ताकते हुए पूछा, "कैसी चिट्ठी?"

'और कैसी होगी, दुख की और अपनी फूटी किस्मत की चिट्ठी लिखी है बेचारी ने।'

पपा को और भी आश्चर्य हुआ। मैली साड़ी और हाथों में पीतल की मैली सी चूड़ियाँ पहने अजित चक्रवर्ती की विधवा कमला चक्रवर्ती पूर्णिमा-राय पर करुणा दिखा रही है, यह तो वाकई आश्चर्य की बात है।

पपा को पूर्णिमा राय की याद हो आई। सब कुछ उनका लुट गया है, पुत्र मारा गया और पति अपंग हो गया है, फिर भी पूर्णिमा राय अभी भी सम्पन्न और ऐश्वर्यमयी है। एक हाथ से कम चौड़े पाड़ की कोई साड़ी नहीं है उनके पास और साड़ी हर पाड़ से मैच खाने वाला ब्लाउज छोड़कर कोई और ब्लाउज नहीं है उनके पास। उनके दोनों हाथों में सोने की वजनदार चूड़ियाँ हैं।

जिस दिन दुर्घटना हुई थी और पूर्णिमा एक कार में से छिटक कर सड़क पर बेहोश पड़ी हुई थी, उस दिन उनकी देह पर जो भी गहने थे—और काफी थे—वे सब चोरी हो गये थे। मगर उससे उनका कुछ नहीं बिगड़ा। बैंक के सेफ वॉल्ट में उनसे कई गुना ज्यादा गहने पड़े हुए थे।

उन पूर्णिमा राय पर दरिद्र कमला चक्रवर्ती करुणा करे। जो पूर्णिमा राय रोते-कलपते भी पाँच तरह की तरकारी और व्यंजनों के बिना कौर नहीं उठाती हैं उन पर रोटी-दाल खाने वाली कमला चक्रवर्ती क्या करुणा दिखायेगी।

पपा जानती है यह उनके लिए विलासिता नहीं एक आदत है। वर्ना अंधे और अपाहिज प्रभातसूर्य राय की धोती और कुर्ते की बाँहों पर चुनट डालने की जरूरत ही क्या है?

उसके चौंकने के दो कारण थे। एक तो चिट्ठी आने की बात और दूसरे 'तुम्हारी ससुराल' शब्द का उच्चारण मा पहले उन लोगों को 'उत्तर पाड़ा वाले' कहकर सबोधित करती थी। 'ससुराल' के अ(म) हो 'आस' शब्द का भी कुछ नया सदम तो था ही।

पपा ने माँ की ओर कौतूहल से ताकते हुए पूछा, 'कैसी चिटठी ?"

'और कैसी होगी, दुख की और अपनी फूटी किस्मत की चिट्ठी लिखी है बेचारी न।"

पपा को और भी आश्चय हुआ। मैली साडी और हाथो मे पीतल की मैली सी चूडियाँ पहने अजित चक्रवर्ती की विधवा कमला चक्रवर्ती पूर्णिमा-राय पर करुणा दिखा रही है, यह तो वाकई आश्चय की बात है।

पपा को पूर्णिमा राय की याद हो आई। सब कुछ उनका लुट गया है, पुत्र मारा गया और पति अपग हो गया है, फिर भी पूर्णिमा राय अभी भी सम्पन्न और एश्वयमयी है। एक हाथ स कम चौडे पाड की कोई साडी नही है उनके पास और साडी हर पाड स मच खाने वाला ब्लाउज छोडकर काइ और ब्लाउज नही है उसके पास। उनके दोना हाथो म सोने की वजनदार चूडिया है।

जिस दिन दुघटना हुई थी और पूर्णिमा एक कार म से छिटक कर सडक पर बेहोश पडी हुई थी, उस दिन उनकी देह पर जो भी गहने थे—और काफी थे—वे सब चोरी हो गये थे। मगर उससे उनका कुछ नही बिगडा। बैंक के सेफ वाल्ट उनसे कई गुना ज्यादा गहने पडे हुए थे।

उन पूर्णिमा राय पर दरिद्र कमला चक्रवर्ती करुणा करे। जो पूर्णिमा राय रोते-कल्पते भी पाँच तरह की तरकारी और व्यजना के बिना कौर नही उठाती हैं उन पर रोटी-दाल खाने वाली कमला चक्रवर्ती क्या करुणा दिखायेगी।

पपा जानती है यह उनके लिए विलासिता नही एक आदत है। वर्ना अंधे और अपाहिज प्रभातसूय राय की धोती और कुर्ते की बाँहो पर चुनट डालने की जरूरत ही क्या है ?

माँ की बात सुनकर पपा की एड़ी से चोटी तक एक बिजली की लहर सेन गयी।

माँ को उनका पक्ष लेते देखकर वह अपने पर काबू न रख सकी और तीखे गले से कहा, "तुम सिर्फ उनकी ही बात सोचनी चाहिए, तुम लोगों की नहीं, क्यों ?"

"हमारी तो जस तसे कट ही जायगी।" कमला ने उदास स्वर में कहा "जसे तैसे का क्या मतलब है ? क्या तुम उनके टुकड़ों पर पलना चाहती हो ?"

कमला काँप उठी। पत्र में भी इसी तरह का एक महीन इशारा है। हालाँकि बहाना साधू की पढ़ाई लिखाई का लिया गया है लेकिन यह बात साफ तौर पर बताया गया है कि पपा को नौकरी छोड़ देने पर उसकी माँ और भाई को माई आर्थिक कष्ट नहीं होने देंगे।

बड़ी ही विनम्र स्वर में लिखा गया है कि किस्मत की मार ने उन्हें इस योग्य न रखा है कि वे कोई दावा कर सकें वरना तो बहूरानी का भाई उनके अपने ही परिवार का सदस्य है। फिर भी वे समीर का सारा भार खुशी से लेना चाहते।

मगर कमला ने तो बेटी से यह सब नहीं बताया है इसीलिए वह चाहती थी कि बेटी चिट्ठी पढ़ ले तो फिर पपा को इस बात का पता कैसे लगा ? अन्दाजा ? और उस बात के संकेत पर ही वह गुस्से से लाल हो रही है।

कमला ने सोचा इस चिट्ठी न दिखाना ही ठीक है। उसे ताज्जुब हुआ कि जिस बात से राय परिवार की महानता प्रकट हो रही है उसी बात पर पपा इतनी नाराज क्यों हो रही है। कमला ने मन ही मन बेटी से कहा तू नहीं जानती वे तुझे कितना प्यार करते हैं ! कितने महान हैं वे। जहाँ लोग ऐसी लड़कियों को कुलछनी मानकर उनका मुँह भी देखना नहीं पसन्द करते वहाँ वे लोग तुझे इतना मान सम्मान देकर अपना बनाना चाहते हैं। पागल लड़की ! तू समझ नहीं रही है।

कमला चक्रवर्ती और पूर्णिमा राय दो अलग अलग दुनियाओं की रहने वाली हैं।

पद्मा ने मन ही मन हँस कर खुद से कहा—मैं यानी थोड़े ही कह रही हूँ कि म न घर की हूँ न घाट की। अगर मैं कमला चक्रवर्ती की इस फर्नी बेंच वाली दुनिया की अपने को एक सदस्या मानना चाहती हूँ तो य नही मानने देते य कमला चक्रवर्ती और उसका बेटा सोमू। सोमू भी दीदी को एक अजूबा मानता है तभी म जब से बाप की मौत के बाद बहिन न घर का भार सभाल लिया था।'

पद्मा ने लक्ष्य किया मा अभी भी कुछ कहना चाहती हैं। इसलिए पद्मा ने पूछा, 'अचानक उ ह तुम्हारे सामने अपना दुखड़ा रोने की क्या जरूरत आ पड़ी ?''

चिट्ठी पढ़ लो।'

'तुम्हार नाम लिखी चिट्ठी पढ़ने की मुझे क्या जरूरत ?'

तो सुनो लड़की की बात। चिट्ठी तो तर ही बारे में है, मैं तो कहाना हूँ। तेरे से कहने की हिम्मत नही पड़ी होगी तो मुझे लिख भेजा। तेरी नौकरी छुड़ाने की बात लिखी है। उ ह अब तेरे बिना अकेला रहना अच्छा नही लग रहा है। कहते हैं कि उनके घर की बहू थोड़े से रुपयों की खातिर नौकरी करे यह बात उ ह बर्दाश्त नही हो रही है। चारों ओर उनकी बदनामी हो रही है। फिर भी मुझ साफ साफ कह भी नही पा रहे हैं कि नौकरी छोड़ दो। इसीलिए दुखी होकर लिखा है कि पहले तय हो चुका था कि आफिस से छुट्टी लेने की क्या जरूरत, रिजाइन करो। शादी के बाद तो नौकरी का प्रश्न ही नही उठता। पर वह बात तो भगवान ने ही बिगाड़ दी। इसीलिए दबाव नही दे पा रहे हैं, सिर्फ प्रार्थना कर रहे हैं। लिखा है 'बहू को आप समझा बुझा कर राजी कर लीजिए। अब हम लोग इस सूने घर मे रह नही पा रहे हैं।'

कमला न पत्र का पूरा भावार्थ बताने के बाद निश्चय रूप म कहा ''तो फिर तो नौकरी छोड़ क्यो नही देती ?''

माँ की बात सुनकर पपा की एड़ी से चोटी तक एक बिजली की लहर खेल गयी।

माँ को उनका पक्ष लेते देखकर वह अपने पर काबू न रख सकी और तीखे गले से कहा, "मुझे सिर्फ उनकी ही बात सोचनी चाहिए, तुम लोगों की नहीं क्यों ?"

'हमारी तो जैसे तैसे कट ही जायेगी।" कमला ने उदास स्वर में कहा, 'जैसे तैसे का क्या मतलब है ? क्या तुम उनके टुकड़ों पर पलना चाहती हो ?'

कमला काँप उठी। पत्र में भी इसी तरह का एक महीन इशारा है। हालांकि बहाना सोमू की पढ़ाई लिखाई का लिया गया है लेकिन यह बात साफ तौर पर बताया गया है कि पपा को नौकरी छोड़ देने पर उसकी माँ और भाई को कोई आर्थिक कष्ट नहीं होने देंगे वे।

बड़ी ही विनम्र स्वर में लिखा गया है कि किस्मत की मार ने उन्हें इस योग्य न रखा है कि वे कोई दावा कर सकें वरना तो बहूरानी का भाई उनके अपने ही परिवार का सदस्य है। फिर भी वे समीर का सारा भार खुशी से लेना चाहते।

मगर कमला ने तो बेटी से यह सब नहीं बताया है इसीलिए वह चाहती थी कि बेटी चिट्ठी पढ़ ले तो फिर पपा को इस बात का पता कैसे लगा ? अंदाजा ? और उस बात के संकेत पर ही वह गुस्से से लाल हो रही है।

कमला ने सोचा इस चिट्ठी न दिखाना ही ठीक है। उसे ताज्जुब हुआ कि जिस बात से राय परिवार की महानता प्रकट हो रही है उसी बात पर पपा इतनी नाराज क्यों हो रही है। कमला ने मन ही मन बेटी से कहा तू नहीं जानती वे तुझे कितना प्यार करते हैं ! कितने महान हैं वे। जहाँ लोग ऐसी लड़कियों को कुलछनी मानकर उनका मुह भी देखना नहीं पसन्द करते, वहाँ वे लोग तुझे इतना मान सम्मान देकर अपना बनाना चाहते हैं। पागल लड़की ! तू समझ नहीं रही है।

यह बात सच है कि जब उस भयंकर दुर्घटना के बाद अस्पताल से खारिज किया गया उस समय भी उसके ससुर भर्ती थे और उनकी हालत अच्छी न थी। कमला ने अपने भाई को उत्तर पाडा वाला के पास भेजा था। पपा के मामा रमापति ने वहाँ जाकर कहा था—"हमारी लडकी यहा नही रहेगी। हमारा और आप का सबध ही क्या है। शादी तो हुई ही नही थी, हमारी लडकी अभी तो कुँआरी है। यह बात रमापति ने बहन की इच्छा से ही कही थी। मगर अब कमला का मन बदल गया है।

पपा ने फिर कहा—"लगता है मेरा ही अनुमान सही है क्यो माँ ?"

कमला चिट्ठी नही दिखाना चाहती थी इसीलिए गुस्सा दिखाकर बोली—"हा, हम तो टुकर खोर हैं ही, जो भी टुकडा डाल देगा खा लेंग।"

"तो फिर अचानक उन लोगो की वकालत क्या शुरू कर दी तुमने ? नौकरी छुडवाकर इस घर से विदा करने की बात फिर तुम्हारे मन म क्यो आयी ?"

कमला ने उदास स्वर म कहा—"लडकी तो घर मे रखने की चीज नही है उसे तो विदा करना ही होता है। भाग्य ने जो कर दिया उसे तो मेटा नही जा सकता। तेरी जन्म कुडली तो कहती है कि तेरा राजरानी बनने का जोग है। मगर हुआ क्या ? अब उन लोगो की हालत सुनकर मैं सोच रही हूँ तू कब तक दो नावो पर पर रखकर चलेगी। हमारा तो भगवान मालिक है।"

"तू ठीक ही कह रही है। माँ, सोचती हूँ कि एक नाव को छोड दू, इनमे से जो मजबूत नाव है उसी पर दोनो पाँव रख लू, क्या मा ?"

कमला के उदास गले से भी उत्साह के स्वर सुनायी पडने लगा, "यही तो मैं भी सोच रही हूँ तब स वे दोना जने यानी तेरे सास ससुर वहाँ पडे पडे सोग म अधमरे हो रहे हैं तुझे पा जायेंगे तो बच जायेंगे।" सच कहती हू तुझे नौकरी करने की क्या जरूरत ?

लडकी की अपलक दृष्टि की तरफ देखकर माँ सोचने लगी यह देव

कहाँ रही है ? इसकी आँखें न तो आकाश मे हैं, न दालान की तरफ और न ही रसोई की दीवार के सहारे ऊपर चढती हुई लौकी की लता की तरफ ही मां के चेहरे की तरफ तो नही ही है।

मा ने फिर कहा, "गरीब घर मे आदमी का रात दिन खटते खटते ही जिन्दगी अकारण हो जाती है और बडे घर मे गोद म दीना हाथ रखकर बैठे रहने पर भी आदमी परेशान रहता है। उनकी तकलीफ भी वही है।

पपा चौंक पडी। मां की तरफ देखकर बोली, "तो तुम क्या चाहती हो कि तुम्हारी लडकी भी बडे घर मे शामिल होकर हाथ पर हाथ धरे बैठी उ ही लोगा की परेशानी झेले, क्यो ?

'लो, अभी अभी तो कह रही थी दो नावा पर पाँव नही रखूगी और अभी कुछ और कह रही हैं। इतने मे ही मन घूम गया ?" मां अवाक् हुई।

अचानक मा की ओर देखकर ही ही करके हँस पडी पपा।

कमला लडकी की इस अकारण हँसी का अथ नही ढूढ पा रही थी।

लडकी की टेढा रुख देखकर कमला बेचारी उसकी ससुराल से जो ढेर सारी चीजें आयी थी उन्हे दिखाने की हिम्मत न जुटा सकी। लडकी उन चीजो की तरफ कभी आख उठाकर भी नही ताकती। चिढ जाती है फिर भी कमला उसे बुलाकर दिखाती है। सोमू बहुत खुश होता है कहता है— बाप रे इतनी चीजें ! य सब केले, अमरूद, पपीते सब सड जायेंगे इन्हे मुहल्ले म बँटवा दो मैं भला कितना खाऊँगा। दीदी तो इन्हे हाथ भी नही लगाती क्या ससुराल है दीदी की। कहा हम, कहा वे।

हमेशा अभाव म पली कमला जब दो तल्ले पर जाकर पडोसिया का लडकी को ससुराल से आयी सब्जिया और फलो का उपहार देने जाती है तब भी उनसे यही सुनने को मिलता है— 'हाय बेचारी कैसे राजा घर म शादी हुई थी।"

ऐसी असभावित शादी हुई कसे ?

बेलेघाटा इस मकान के दो तल्ले पर अढाई कमरो की निवासिनी कमला चक्रवर्ती जिन दिनो अपने पति को खोकर चारो ओर अंधेरा देख रही थी। उन्हीं दिनो अचानक उनकी लडकी उत्तर पाडा के रईस राय परिवार मे कैसे जा पहुँची। किस मन्त्र बल से ऐसा सभव हुआ। यह कौन सा अद्भुत बिचौलिया था जिसने ऐसा सयोग मिलाया

अभागी कमला का दुर्भाग्य यहा भी उसके पीछे पड गया। राजमहल के सिंहासन पर बैठने का बुलावा आकर भी लडकी उसपर बैठ नहा सकी फिसलकर गिर गयी। लोगो ने हाय-हाय किया। कुछ लोगो ने कहा कि बौना चाद छूने चले तो भगवान को भी मजूर नही होता।

मगर क्या बौनी कमला खुद चाँद को छूने चली थी? जी नही इसका उल्टा ही हुआ था। चाद ने खुद नीचे आकर उसकी ओर हाथ बढाया था।

हुआ यह था कि कमला की एक दूर की ननद उत्तरपाडा मे अपने ममेरे ससुर के घर गयी थी। वहाँ स एक खबर लेकर वह कमला क घर आयी, और बोली—"भाभी लडकी की शादी करना चाहती हो? राजा का घर है, एक पैसा भी नही लेंगे, बहू को खुद गहने-कपड स सजाकर ले जायेंगे।'

कमला को विश्वास नहीं हुआ, हँसकर बोली—'फिर भला व मेरी लडकी से शादी क्यो करेंगे?

आहा! किसकी किस्मत म क्या है कुछ कहा जा सकता है? व लोग जन्मकुडली देखेंगे, हो सकता है तेरी लडकी का सयोग बठ जाय। जिस तरह की जन्मकुडली वाली लडकी व ढूँढ रहे हैं अगर वही आ जायेगी, वही ब्याह करेंगे। तू पपा की जन्मकुडली और एक फोटो द द।

"पता नहीं जन्मकुडली बनी भी थी या नहीं। कोई आज की बात है? बनी भी हो तो पता नहीं कहाँ पडी होगी।

"चलो जन्मकुडली न सही जन्म की तिथि और समय का तो पता है? उसी से जन्मकुडली बन जायगी। लडके के साथ गना-गना ठीक होना

चाहिए। उनका कहना है कि लडकी सुन्दर न भी हो तो चलेगी।'

कमला को एकदम उत्साह नही हुआ था फिर भी उसने दोनो चीजें दे दी थी।

इसके बाद घटनाओ ने बडा तेज मोड लिया सचमुच पपा की जन्म कुडली मे राजभोग था और वह सवगुण सपन्न पायी गयी। राजमहल की तरह से विवाह का प्रस्ताव आया जैसे बाढ आयी हो। पपा का प्रतिवाद उस बाढ म तिनके की तरह बह गया। क्या स क्या हो गया! बेलेघाटा ने उस दीनहीन परिवार पर उत्तर पाडा के राज परिवार के लोग छा गये। प्रस्ताव आया, सात दिन के अन्दर शादी हो जानी चाहिए क्योकि बाद के तीन महीनो तक कोई लग्न न था।

इस आकस्मिक घटना से कमला के परिवार ही नही पास पडोस के लोग भी विमूढ हो गये। उन्होने जब देखा कि फूलो से सजी गाडी मे बैठकर राजकुमार जैसा वर कमला चक्रवर्ती के दरवाजे पर आकर खडा हुआ तो उन्हे सहसा अपनी आखो पर विश्वास नही हुआ। सारी व्यवस्था वर पक्ष की ओर से की गयी। कलकत्ता के एक नामी होटल से भोजन-जलपान की व्यवस्था की गयी। पास के स्कूल म बारात ठहरी। दूसरे दिन सवेरे जब पपा अग अँग गहना से सजाये वर की चादर मे गठजोड किये फूलो की सजी गाडी म बठी तो पूरा मुहल्ला सडक के किनारे खडा हो गया। सभी के मुह मे एक ही बात थी— वाह? क्या किस्मत है।' जैसे परीकथाओ म किसी गरीब ब्राह्मण की लडकी को राजकुमार आकर ब्याह ले जाता है।

और दूसरे ही दिन लोगो ने कहना शुरू कर दिया—"वह तो पता ही था। ऐसा भी कही सकता है! बौना चाँद छने की कोशिश करे तो यही होता है।"

"दूसरे पक्ष वालो की भी तो गलती है। वे तो कमला चक्रवर्ती की तरह बेवकूफ नही हैं। कोशिश करने तो क्या उन्हे अपने बराबर का परिवार नही मिलता? क्या यही राजयोग का नमूना है? अजीब रहस्य

है।

पपा भी वेटिंग के अपने छोटे से कमरे में बिस्तर पर सोच साये सोचती रही—"क्या इसे ही नियति कहते हैं? मगर किसकी नियति? मेरी या उस प्रौढ दंपति की?

पपा के घर में कभी ज्योतिष वगैरह की बात नहीं होती थी, इसलिए उसके मन में भाग्य और ज्योतिष की कोई चेतना ही नहीं थी। जब ये बातें उसके सामने अचानक आयी तो पहले तो वह भौचक्की रह गयी। पर जिस तरह से उसका अंत हुआ उससे ज्योतिष की व्यथता उसके सामने स्पष्ट हो गयी।

मगर राय परिवार? वे शायद हमेशा से इन बातों को अटल मानते आये हैं। मगर इतनी बडी घटना के बाद भी क्या उनकी आंख नहीं खुली। अभी भी जब पपा पहुंचती है तो पूर्णिमा राय के मुंह में दुर्गा दुर्गा निकलने लगता है और प्रभातसूर्य कहते हैं देखना कोई अश्लेषा मघा वघा तो नहीं है।'

पपा को हँसी आती है और उनके विश्वास की दृढता देखकर ताज्जुब भी होता है। पपा के सामने वे जैसे अपराधी की भूमिका ग्रहण कर लेते हैं। अपने इस दुर्भाग्य के लिए—सामान्यत जैसा होता है—वे बहू को दोषी न मानते हुए बहू के दुर्भाग्य के लिए खुद को दोषी मानते हैं।

वह उनके यहाँ जाती है तो कृतज्ञता प्रकट करते हैं, वह को देख कर प्रसन्न होते हैं, वह बात करती है तो लगता है देवी का वरदान मिल रहा है उन्हें। ऐसा क्या? क्या उनका मानसिक संतुलन ठीक नहीं है? हाँ यही कारण हो सकता है। अपने एक मात्र संतान को खो देने पर मानसिक संतुलन खो देना ही स्वाभाविक है।

यही पपा असहाय महसूस करती है। इन दो करुण और स्नेह विगलित प्रौढों की तरफ देखकर पपा बहुत कमजोर हो जाती है। वह जोर देकर नहीं कह पाती कि इस तरह हर सप्ताह आना उसके लिए बहुत असुविधा जनक है। या फिर वह क्या रोज रोज उनके लिए, यह तक उसकी जुबान

पर नही आता।

जसे सूय और च द्रमा समय पर उगते और अस्त होते है उसी तरह प्रभात सूय की गाडी आकर पपा के दफ्तर के सामने आ खडी होती है और उसी तरह नियम से मन मारकर पपा उसमे जा बैठती है [illegible]

मगर क्या सिफ सप्ताहात मे उसे यह रुचिकर [illegible] पडता है ? नही, छुट्टी के दिना मे भी कमला चक्रवर्ती के घर के सामने गाडी आ खडी होती है। उसमे से चौडे पाड की साडी पहने उतरती है वही गभीर चेहरे वाली दासी। उसे मना करना मुमकिन नही हो पाता। क्रमश स्नेह का गुजलक पपा को ग्रास करता जा रहा है।

कभी कभी पपा माँ से कहती है, बेकार मे वहा जाकर क्या होगा ? तू नही कह सकती तो मैं ही जाकर कह दती हूँ—कि मुझे काम है।'

मा तब पपा के हाथ पाँव जोडती है और कहती है, "गाडी लौटाने से उनका अपमान होगा। ऐसा धनी मानी आदमी अधा-अपाहिज होकर बठा है। उसके दिल का चोट लगेगी।'

मगर शुरू शुरू मे गाडी आती थी तो माँ ही भुनभुनाती थी, 'मेरी लडकी क्यो जायेगी बेकार मे। वह तो मेरी कुआँरी लडकी है। मैं उसका फिर ब्याह करूँगी।'

जब एसी बात कही थी कमला ने तब निश्चय ही वह विश्वास करती थी कि वह ऐसा ही करेगी, पर तब उसे आटा-दाल का भाव शायद नही मालूम था। पर क्रमश परिस्थिति म परिवतन आया। कमला धीरे धीरे नरम होती गयी। और एक समय आया जब वह मानने लगी कि अगर वे अभी भी पपा को अपनी बहू मानते है तो यह पपा का परम सौभाग्य है।

और पपा ? पपा मन ही मन कहती है, "क्यो जाऊ मैं वहाँ, क्या ? क्यो ?"

मगर फिर साफ कपडे पहनकर गाडी मे बैठ जाती। पहले पपा सफेद साडी पहन कर जाती थी। पूर्णिमा ने ही पपा को सफेद साडी पहनने से मना किया। कहा था, "बेटी, इतनी ढेर सारी साडियाँ मैंने तुम्हारे लिए

खरीदी हैं। तुम नहीं पहनोगी तो उनका क्या होगा ? नहीं, तुम पहनो।" *मगर कपडो के मामले म जितनी उदार वह हो सकी थी, उतनी खाने के* मामले मे नही। खाने म सात्विक भोजन की व्यवस्था होती थी। बचारी पपा को इस बात की भी यत्रणा मिलती थी कि उसकी थाली मे घी, दूध, खीर और मक्खन की इतनी प्रचुरता होती थी कि वह देख कर ही घबडा जाती थी।

कमला घेर घेर कर उससे तमाम तरह की बातें पूछती रहती थी। क्या पका था ? क्या क्या खाया ? अरे हाँ, हमारे यहा खाने पीने मे छूत छात नही है इस बात का उन्ह पता तो नही चला। वगरह वगैरह।

पपा को तुच्छता से जितनी चिढ थी, कमला को उतना ही तुच्छता से प्यार था।

पपा नाराज होकर कहती, 'तुमने पिताजी की कसम धरा रखी है वर्ना पहले दिन यह बात मैं उन्ह बता देती। यह सब दुराव छिपाव मुझे पसद नही है।'

कमला अवाक् होकर बोली '*इसमे मुख छिपाव की क्या बात है ?* वे लोग पुराने किस्म के लोग हैं। उन्हे यह बात जानकर दुख होगा, इसी *लिए कहती हू।*"

'मा, तुम क्या समझती हो किसी को कभी भी कोई दुख पहुँचाए *बिना जिंदगी काटी जा सकती है ?'*

कमला इस प्रश्न का उत्तर नहीं दे पाती, इसीलिए वहाँ से चली गयी। कमला अपनी लडकी स बहुत डरती है आदर भी करती है। उसकी जो भी बातें होती है सोमू के साथ होती हैं।

"जानता है सोमू तेरी दीदी के ससुर का कहना है कि उनकी जो भी धन दौलत, जमीन-जायदात है सब वह तेरी दीदी के नाम कर देंगे। लडका जिंदा होता तो यह सब उसी का होना ! वह नही है तो यह सब लडके की बहू का है। कहते है—आँखें चली गयी तो क्या, *मुह तो सलामत है !* सारा काम बहू को सिखा दूगा।

"सच माँ, तब तो वह बहुत अच्छे आदमी हैं।'

'हाँ रे! मगर हमारी तो किस्मत ही फूटी है।

'शायद यह बात सुनकर दीदी को बहुत चिन्ता हुई होगी'

"अरे रे! तेरी दीदी को तो अभी बताया ही नहीं गया सब। वहाँ की दाई आयी थी चिट्ठी लेकर। लिखा है अगर तेरी दीदी नौकरी छोड़ दे तो वह हमारे लिए सारा इनजाम कर देंगे।"

'बहू रानी के कामों में एक दिन वह रानी का भाई सहायता करेगा। धीरे धीरे वह सारी सपत्ति का मैनेजर बन जायेगा। राय कोठी में अभी भी जितनी सपत्ति है उससे तो वे हमारे सात पुश्त खा पीकर मस्त रहेंगे। विधवा को इतना मान भला कौन देता है?"

अतिम वाक्य अनायास कमला के मुख से निकला था। तो अब कमला अपनी बेटी को सचमुच।

पपा की माँ की हिम्मत नहीं हुई कि वह पपा के भविष्य की स्वर्णिम रूपरेखा उसके सामने रख सके। इसीलिए लड़की के सामने सब कुछ कह वह हलकी हो गयी। कमला को यह बात अजीब लगती है कि वह बेटी के साथ ऐसे शुभ समाचार का आनद उठाने में असमर्थ है।

छुट्टी के दिन दरवाजे के सामने आकर गाड़ी खड़ी होती तो पपा बहुत चिढ़ जाती। कमला को इस बात पर बड़ा आश्चर्य होता। इधर पपा को खुद अपने ऊपर आश्चर्य होता। कि क्यों वह जाकर चुपचाप गाड़ी में बैठ जाती है? जब गाड़ी उत्तर पाड़ा वालों की पोर्टिको में जाकर खड़ी हो जाती है और रहमान कमर झुका कर उसे सलाम करता है तब क्या पपा का विद्रोह ठंडा पड़ जाता है।

पपा रटी रटायी, बातें सुनती, रटी रटायी बातें कहती और जाकर उस अभागे दपति को प्रणाम करती। नम्रता और भक्ति की प्रतिमूर्ति इस पपा को देखकर कौन कह सकता था कि कुछ ही देर पहले इसी लड़की ने

मन में यह सवाल उठा था कि "क्यों वहाँ मैं जाने को बाध्य हूँ ! क्या ?"

कमला चक्रवर्ती को जो बात कहने का साहस नहीं हुआ पूर्णिमाराय ने वह बात पपा से कह डाली। किसी छुट्टी के दिन जब पपा उत्तर पाडा गयी थी तो पूर्णिमा राय ने कहा, "जिसको इस घर की मालकिन बनना है उसने अभी तक ठीक से इस घर को देखा भी नहीं है। लगता है अभी तक बहूरानी ने पूरी कोठी भी नहीं देखी है। सुशीला दीदी, आप बहूरानी को ले जाकर तीनतल्ले के कमरे में रखी चीजें दिखा लाइए।'

तीनतल्ले का कठोर घर यानी बेमतलब की चीजों का एक फालतू अंबारमुतफर्द पपा का दिल धड़क उठा। सूखे गले से बोली। 'यह सब देखकर क्या करूँगी ?'

पूर्णिमा ने कहा, "अब तो तुम्हीं को सब कुछ देखना सुनना और उसका हिसाब रखना होगा, बहू। मैं तो अब थक गयी हूँ। मेरे से तो अब कुछ होगा नहीं। पहले झूले और कृष्ण जन्माष्टमी के दिन कितना कुछ होता था। उसके लिए चाँदी के बर्तन बनवाये गये थे। चाँदनी, पर्दा, कार्पेट कितना कुछ है। जाकर एक बार देख तो आओ।

एकांत अनिच्छा होते हुए भी जाना पड़ा। मगर क्या ? किसी ने उसे बाध्य तो नहीं किया था ? क्या इस घर में इसके ईंट गारे और कड़ी पत्थर में कोई वशीकरण छिपा हुआ है ?

सुशीला दीदी पपा को तीन तल्ले ले गयी। सुशीला दीदी पूर्णिमा की बुआ की तरह लगती हैं। हमेशा से यहीं रहती आई हैं। विधवा हैं।

जो प्रश्न पपा और उसके परिवार के मन में बिना उत्तर के छटपटा रहा था और रहस्य सा बना हुआ था उसका उत्तर दिया इन्हीं सुशीला दीदी ने।

रहस्य तो था ही। उत्तर पाडा के इस रईस घर के एक आदर्श और गुणवान युवक के लिए इस परिवार के लोग बहू ढूंढते ढूंढते बेलेघाटा के एक गरीब ब्राह्मण की किसी बहू पर इतने आसक्त कैसे हो गये थे ? क्यों

हो गए थे ? और आज भी उसके सामने कंगाल की भूमिका क्यों निभा रहे हैं ? रहस्य तो था ही।

पर इस रहस्य का उत्तर सुशीला दीदी को मालूम था यह बात प्रभात-सूर्य और पूर्णिमा शायद नहीं जानते थे। अपनी धारणा थी कि उन्हें छोड़कर इस दुनिया में इस रहस्य का पता किसी और को न था।

सुशीला दीदी की भाषा प्रांजल और अभिव्यक्ति कौशल असाधारण था। सदूक में से निकाल निकाल कर चीजें दिखाते दिखाते वह अचानक बोल पड़ी, सोना और चांदी, धन और ऐश्वर्य एक आदमी के बगैर सब बेकार है। विधवा औरत के लिए भाग क्या चीज है। लड़की का जीवन तो विधवा होते ही नष्ट हो जाता है। मगर यह सब तो जान बूझ कर ही किया गया था, बहूरानी। जानबूझकर आदमी के घर में आग लगाना इसे ही कहते हैं। अभी वे तुम्हारे नाम चाहे जितना गाड़ी घोड़ी, घर मकान धन दौलत करना चाहें, तुम्हारा अनिष्ट तो पहले ही कर चुके हैं। सोना चबाने से भूख मिटती है ?"

इस आश्चर्यजनक भाषा को सुनकर पपा अवाक हो जाती है। वह अपनी परम हितैषिणी इस मौसिया सास के जटिल और कुटिल मुख को अवाक होकर देखती है और पूछती है— किसकी बात कर रही हैं।"

'किसकी बात कर रही हूँ। जिसका ऐसा बच्चा जैसा सरल मन हो उसके साथ ऐसा विश्वासघात ! अरे बाबा, मैं तुम्हारी ही बात कर रही हूँ। तुम्हारी कुंडली में लिखा है कि तुम सर्वगुण संपन्न हो फिर इतनी कम उमर में विधवा कैसे हुई ? कुंडली गलत नहीं कहती। तुम्हें तो जान-बूझकर विधवा बनाया गया है।'

पपा और भी चकित होकर पूछती है—"मगर जो कुछ हुआ उसमें उनका क्या दोष है ?"

सुशीला वाला का स्वर विजय गर्व से भर उठा, वे बोलीं, 'बहूरानी, उनका दोष है स्वार्थीपन अपने स्वार्थ के कारण जान-बूझकर एक निरीह लड़की का उन्होंने बलिदान किया है।"

पपा ने चिढकर कहा—"आप क्या कह रही है मेरी समझ म नही आ रहा और यह सब सामान मुझे नही देखना है, हटाइय नीचे चलते हैं।

"तो चलो। अभी तो ये लोग तुम्ह चारा ओर म वांधने की कोशिश कर रहे हैं। समझते हैं कोई कुछ जानता ही नही। मगर इस सुशीला ब्राह्मणी से दुनिया की कोई चीज छुपी नही है। सुनो, सारी बातें बताती हू—एक दिन हरिद्वार या ऋषिकेश कही स इस कुल क गुरदेव आ धमके। लडके की ओर नजर पडते ही उनके मुह से निकला सवनाश! इस लडके पर तो बहुत बडा ग्रह है लगता है भगवान ने इसीलिए मुझ यहा भेजा है। यह बात सुनकर सभी को काट मार गया। सभी स मेरा मतलब है उस लडके के मा बाप से। वैसे तुम मुझे इसमे शामिल कर सकती हो। मुझस कोई चीज छुपी नही रह सकती, मगर हम तीन के अलावा यह बात कोई नही जानता। इसके बाद से ही पूजा पाठ यग भोज शुरू हुआ। कितन तरह के टोने टोटके किए गए। अ त म गुरु न कहा मुझे कोई आशा नहीं दिखती है माँ-बाप की कुडली मे भी दुर्योग लिखा है। अब एक ही उपाय है। अगर किसी सवगुण सम्प न सावित्री योग वाली लडकी स इसका विवाह हो जाय तो उसके पुण्यबल से इसका जीवन बच जाय। तुम लोग लडकी की खोज करो जिस लडकी में सावित्री योग हो उसका और कुछ मत देखो, न सुन्दरता, न पढाई लिखाई न पसा। चुपचाप इसी सावन के महीने म ब्याह कर दो।"

पपा इस परिकथा जैसी बात से अभिभूत होकर सुशीला बाला के मुह देखती रह गयी। इस दुनिया से उसका कोई परिचय नही था।

सुशीला जी की कहानी आग बढी—उसके बाद स ही खूब जोर शोर से लडकी की खोज शुरू हुई। सैकडा नाइ पडित चारा ओर दौडे। जन्म-पत्रियो और कुडलियो क ढेर लग गये। तुम्हारी जन्मकुडली देखते ही गुरु ने आँखें मूद ली और थोडी देर भीतर ही भीतर कुछ गुनत रह फिर बोले—'इस लडकी की कुडली म सावित्री योग है। इससे ब्याह कर दो।

तो लड़का बच जायेगा।

पपा के मुंह से निकला—"सावित्री योग!!"

'हां बहू जिस लड़की में यह होता है। वह विधवा नहीं होती यही है वह रहस्य जिस कारण इस राज परिवार के लड़के का ब्याह तुम्हारे साथ किया गया।"

मौसी की आंखों का विजय गर्व और गहरा हो आया, मगर जिस पर यम की दृष्टि थी वह तो बच नहीं पाया होनी को भला कौन टाल सकता है मगर तुम्हारे साथ तो जानबूझ कर ऐसा किया गया।

एक पल भौंचक रहने के बाद पपा ने कहा, 'मैं यह सब नहीं मानती।"

"नहीं मानती?"

"नहीं। यह सब तो दुर्घटना है।'

'दुर्घटना तो होनी ही थी, मगर तुम तो इनकी स्वार्थपरता की शिकार हो गयी न?'

पपा ने चिढ़कर कहा, 'नहीं, ये सब बकार की बातें हैं। उनका क्या कम नुकसान हुआ? मरते मरते बचे। यह सब क्या उनकी ही गलती है?"

वे मर नहीं सकते थे। भगवान जिसे मारता है वही मरता है, जिसे जिलाता है वही जीता है।

"तो यह बात तो मेरे ऊपर भी लागू होती है। भगवान मुझे इस आफत में डालना चाहता था। फिर आप उन्हें क्या दोष दे रही हैं?'

'ओ मां, जिनके चलते की थी चोरी, वही कहे चोर।" मौसी एकदम आक्रोश में आ गयी। उनका चेहरा कुत्सित हो उठा।

पपा के मन में उसके चेहरे को देखकर तेज घृणा उपजी। इसी को कहते हैं—'कान भरना। उसे यह कहानी मनगढ़ंत लगी, फिर भी पता नहीं क्यों उसे कालीघाट के मंदिर में देखा गया बलि का दृश्य याद आने लगा।

फिर भी इसके बाद जब काले चश्मे से ढकी आंखों वाले प्रभातसूर्य

के चेहरे पर उसकी नजर पडी तो वह चेहरा उसे उडा रहस्यमय और स्वार्थी लगा। और क्षीण मुख पर सिंदूर की वडी सी बिंदी वाला पूर्णिमा का चेहरा उसे किसी अभिनेत्री का चेहरा लगा।

फिर उसे अपने ऊपर शर्म भी आई, "कि यह मै क्या सोच रही हू ?"

पपा जब नीचे आई तो राय दपति अपनी योजना और अपना प्रस्ताव लेकर प्रस्तुत थे। अगर वे इस दिन अपना प्रस्ताव न रखते तो शायद सब कुछ पहले की तरह चलता रहता। हो सकता है पपा पहले की तरह एक स्थिर चक्र मे फिरती रहती। रत्नाकर मल्लिक नामक उसका सहकर्मी शनिवार को उसको लेने आयी गाडी को घूर कर देखते हुए पहले की तरह प्रतिज्ञा करता नही, ऐसे नही चलेगा। इसका कोई रास्ता निकालना ही होगा।"

मगर प्रस्ताव उसी दिन आया। जिस समय पपा सुशीला बाला नामक उस महिला की बातो को अधविश्वास और मनघडत मानकर भी कालीघाट मदिर के वधस्थल का दृश्य देख रही थी, ऐसे ही समय प्रभातसूय ने उसस कहा, 'वटी, ये कागज जरा देख लेना। फिर जरा रुककर बोले 'तुम्ह तो अपनी सास की तरह अग्रेजी अक्षरा से डर नही लगता। पढ कर पहले देखा, फिर ।"

पूरा पढन का धय नही था पपा के पास। एकाएक उसपर से उस घर और उसके माहौल का जादू खत्म हो गया। पपा ने काले चश्मेवाली उन अँधी आँखो की तरफ विद्रोह भरी आँखों से देखकर कहा, 'यह सब क्या है ? कानूनन राय कोठी की उत्तराधिकारिणी ? क्यो ? किस लिए ? मैं कौन होती हूँ आपकी ?"

"यह क्या कह रही हो बहूरानी ?" पूर्णिमा ने चकित होकर कहा ?

'तुम्हारे अलावा और कौन होगा उत्तराधिकारिणी ? तुम्ही तो सब कुछ हो। तुम्हारे अलावा और कौन है हमारा कानून और धर्म के अनुसार सब कुछ तो तुम्हारा ही है।

षडयत्र ! षड्यत्र ! पपा को बदिनी बनाने का सुनियोजित षडयत्र।

जीवन भर के लिए वे पपा का इस घर की और चीजों की तरह बक्से में डाल कर ताला लगा देंगे।

इसके बाद से पपा को उसी फूल माला मे आच्छादित चित्र वाले घर मे सारा जीवन रात काटनी होगी एक मृत व्यक्ति के सान्निध्य मे। जबकि उनके पास ऐसा करने का कोई अधिकार नही है। न कानूनी, न सामाजिक।

और तभी पपा की आँखो के सामने एक हँसी से उज्ज्वल चेहरा कौंध गया। उस चेहरे की प्रत्येक रेखा मे एक नीरव प्रतीक्षा और प्रत्याशा की छाप है। वह मुह से जितना बोलता है, उससे कई गुना ज्यादा बोलती हैं, मोटे काँच के चश्मे के भीतर स्थिर उसकी बडी-बडी आँखें। उन आँखों एक चिर प्रतीक्षा का स्पष्ट वाक्य लिखा हुआ है 'पपा, मेरे लिए भी कभी तुम्हारे पास वक्त होगा ?'

पपा अपने मन प्राण से तो उसके पास पहुँची हुई है ही केवल यह अर्थहीन सबध, एक दुबलता उसे उसके पास सशरीर नही पहुँचने दे रही है। पपा रात दिन इस दुबलता के जाल से मुक्त होने की बात सोचती है।

पपा को यह लडाई अकेले लडनी होगी। उसकी माँ, भाई, मामा कोई भी उस समय पपा के पक्ष म नही होगा यह सच है। कुछ ही दिन पहले जो राय कोठी म वह आये थे कि 'हमारी लडकी यहाँ क्यो रहेगी, वह तो कुआँरी है' वही अब उस राय कोठी की विधवा बहू मानने लगे हैं। वे एक दम बदल गये है।

मगर सच क्या है ? पपा कुआँरी है या विधवा ? कभी कभी यह सवाल पपा के मन को बडा दुर्बोध्य लगता है। वह बहुत असहाय महसूस करती है ? ऐसे मे उसे उस आदमी पर बहुत गुस्सा आता है जिसको सामने पाकर उसके क्रोध, दु ख, मान अभिमान सब पता नही कहाँ गायब हो जाते हैं। वह मन ही उसे कोसती है, 'तुम बठे बठे इतजार की घडियाँ ही गिनते रहोगे ? तुम मुझे उठा कर ले नही जा सकते ? मुझे लूट कर नही ले जा सकते ? तुम पपा को एक दुवह बंधन से मुक्त नही करा

सकते।'

यही गुस्सा उस समय उनके अप्रत्याशित दर्प में निकला। फिर भी दो मिनट पहले वह इस बात की कल्पना भी नहीं कर सकती थी कि वह उनके मुँह पर यह कहेगी कि मैं धर्म अधर्म नहीं जानती। कानून की बात ही कहूँगी। मुझे बताइए किस तरह मैं इस परिवार की मन पूत हो गयी? जहाँ ब्याह भी नहीं हुआ था वहाँ...।'

'बहूरानी!!!" पूर्णिमा राय का अन्तर्नाद कमरे की निस्तब्धता को टुकड़े-टुकड़े कर गया 'अचानक क्या हो गया तुम्हें? उत्तरवाहिनी के मन्दिर में घंटे हाथ रख देवी को साक्षी करके क्या हमने तुम्हें इस कुल की लक्ष्मी मान कर स्वीकार नहीं किया था? यह बात तुम भूल गयी? इसके बाद हमारे ऊपर वज्रपात हुआ और हम समाप्त हो गये, यह बात अलग है, पर यह वरण तो झूठ नहीं है।

पपा किसी तरह भी यह मानने को राजी नहीं है कि सुगीतावाला ने जो कुछ कहा उसका कोई मूल्य है फिर पपा के भीतर कहीं तूफान उठ रहा था और बिजलियाँ टूट रही थीं। मगर क्या यह तूफान अकारण था? नहीं। वह मन ही मन आरोप कर रहा है 'न नहीं तुम लोग मेरी बात नहीं कर रहे हो पर तुम लोग अपने दुष्कर्म को ही बड़ा समझ रहे हो। तुम लोगों ने मुझे ठगा है मेरे साथ विश्वासघात किया है? तुम लोगों ने एक मूर्खतापूर्ण दुराशा में अपनी इच्छा की बलिवेदी पर मेरी बलि चढ़ायी है। मैं इन बातों पर विश्वास नहीं करती, पर तुम तो करते हो। और अब हमारे सर्वनाश को पूरा करने के लिए मुझे धन सम्पत्ति का लोभ दिखा रहे हो। यह ऐश्वर्य अब तुम्हारे जीवन के लिए एक निरर्थक बोझ मात्र है।

हाँ, भीतर एक भयंकर तूफान चल रहा था। बाहर स्तब्धता है।

प्रभातसूर्य ने अपने अभ्यस्त हाथों से पपा के हाथों को छूने की कोशिश की मगर पपा ने हाथ आगे नहीं बढ़ाया। दोनों हाथ सख्ती से अपनी गोद में रखे रहे।

प्रभातसूय ने हताश होकर अपना हाथ पीछे खींच लिया फिर बोले—"कानून के जानकार लोगो से पूछकर ही यह सब किया जाता। इनका कहना है कि ब्याह को सम्पन्न माना जा सकता है कानून के अनुसार कन्या दान के समय एक गोत्र का नाम दूसरे गोत्र मे जुड जाने से ही विवाह सम्पन्न माना जाता है और कानून की निगाह मे स्त्री उत्तराधिकारिणी हो सकती है। सच मानो यह सब तुम्हारा ही है।

अचानक दोनो हाथो से अपना मुह ढपकर पपा बोल उठी—' मुझे नही चाहिए यह सब आप अपनी धन सम्पत्ति दान दे दीजिए, मुझे मुक्ति दीजिए मुझे मुक्ति दीजिए।'

बहुत देर तक निस्तब्धता छायी रही जमे एक युग बीत गया तब प्रभातसूय की स्थिर आवाज सुनायी पडी— 'ठीक है, यह सब धन सम्पत्ति हम किसी मदिर का दान मे द देंगे। मगर बेटी, क्या तुम हम लोगो को छोड दोगी ?"

पपा ने मुह उठाकर प्रभातसूय की ओर देखा धीरे से बोली— अच्छा होगा आप लोग ही मुझे त्याग दे यही प्राथना है।"

त्याग देने पर भी पपा को राय कोठी की गाडी ही उसकी माँ क घर पहुँचा गयी।

बहूरानी को अचानक बाहर जाते देखकर सुखदा की मा न चकित होकर पूछा—"बिना खामे पीये अभी क्या चलो जा रही हैं आप ?"

पूर्णिमा राय न कहा— उनकी तबियत ठीक नही है।' और हाथ का इशारा किया जिसका अथ था आगे कोई बात नहीं करनी।

गाडी चलने लगी तो बूढे दरबान न गदन झुकाकर अभिवादन किया मगर उसे बहूरानी का हमेशा मुस्कुराता हुआ चेहरा नहीं दिखा क्योंकि पपा ने अपने दोनो हाथो से अपना चेहरा ढक रखा था।

घर पहुचने पर कमला ने अवाक होकर पूछा—' अभी चली आयी ? हाँ।"

"क्यों, क्या हुआ ? तबियत खराब है क्या ?'

"तबियत क्या खराब होगी।"

'फिर ?'

"फिर क्या, चली आयी।"

"उन लोगों ने मान लिया ?"

"मैं हमेशा के लिए उस झूठे बंधन को तोड़कर आ गयी हूं।"

माँ के सिर पर वज्र प्रहार करके अकारण घर के बाहर निकल गयी। निकलते ही सोमू से साक्षात्कार हुआ।

"दीदी तुम।"

"क्या, क्या भूत देख लिया जो इस तरह चौंक रहे हो ?

'नहीं, यह बात नहीं है। बात यह है कि एक साहब तुमसे मिलने आये थे। दीदी घर में नहीं है कहकर उन्हें वापिस करके आ रहा हूँ तो देखता हूँ तुम हाजिर हो।

सोमू ने अभी अभी किस वापिस भेजा है यह बात समझने में पपा को जरा भी देर न लगी, फिर भी पूछा—"कौन था ?"

"तुम्हारे दफ्तर के मल्लिक बाबू थे।'

पपा ने स्वीकार में सिर हिलाया।

सोमू ने बात आगे बढ़ायी— 'उन्होंने कहा— मल्लिक कहने से ही तुम्हारी दीदी समझ जायेगी। बड़ी मजेदार बातें करते हैं मल्लिक बाबू। बोले —'अच्छा आज भी छुट्टी मिलते ही ससुराल भागती हैं। मैंने बहाना बनाया सवेरे सवेरे गाड़ी भेज देते हैं तो क्या करे बेचारी। इस पर उन्होंने कहा—"हाँ क्या करेगी बेचारी जाना ही होगा। किसी को परेशान करना हो तो एक गाड़ी ले लो और जब तब उसके घर भेज दिया करो। बड़े मजेदार आदमी हैं। तुम थोड़ा पहले आ जाती तो मुलाकात हो जाती। उन्हें बस पर चढ़ाकर चला आ रहा हूँ। और तुम जा कहा रही हो, अभी-अभी तो आयी हो ?'

"योंही।"

सोमू घर के अन्दर चला गया।

पपा ने जैसे अपनी माँ के सिर पर एक पत्थर दे मारा था उसी तरह सामू ने भी जैसे पपा के सिर पर एक पत्थर दे मारा हो।

रत्नाकर! यह कैसी निष्ठुरता है तुम्हारी। इसके पहले एक पल के लिए। तुम मेरे पास नहीं आये। कल भी तो तुम मुझसे कह सकते थे—'पपा, मैं कल तुम्हारे घर आऊँगा।' फिर यह भी नहीं बता गये कि तुम आये क्यों थे। एक चिट ही लिख जाते। अगर तुम थोड़ी देर बाद आते या थोड़ी प्रतीक्षा कर लेते तो मैं तुम्हें बताती कि मैंने अपने को एक भ्रम-जाल से मुक्त कर लिया है। तुम नहीं जानते कि यह काम कितना मुश्किल था। तुम्हारा चेहरा सामने न होता तो शायद ‖ वह बंधन काट न पाती। ओह! अब यह खबर तुम्हें देने के लिए मुझे कितने घंटे इन्तजार करना पड़ेगा।

पपा का मन इस तरह हाहाकार कर उठा जैसे। उसकी कोई अनमोल चीज खो गयी हो। पपा को अपने ऊपर आश्चर्य हो रहा था। उसके मन में इतनी भावाकुलता कहाँ छिपी थी। आदमी का मन भी कितना विचित्र होता है।

थोड़ी दूर पर ही एक छोटा सा पार्क है जिसे चिल्ड्रेन्स पार्क नाम दिया गया था। पार्क में जाकर पपा एक टूटी सी बेंच पर बैठ गयी और अनुपस्थित रत्नाकर के साथ बात करने लगी। और उसे अचानक लगा कि अभी कुछ मिनट पहले जो हाहाकार उसके मन में उठा उसमें उसके सारे मनोभाव समा गये हैं। जो मुक्ति उसे धिक्कार दे रही थी लज्जित कर रही थी अनुतप्त कर रही थी और उसकी छाती पर एक सिल की तरह बैठी हुई थी वह एक दूसरी मुक्ति में पर्यवसित हो रही थी। सचमुच की मुक्ति का स्वाद अब उसे मिल रहा था।

यह दूसरी मुक्ति अपराध बोध से मुक्ति थी। वह सोच रही थी मैं भी हाड़ माँस की बनी हुई हूँ।

शायद ऐसा ही होता है। उसके मन में अब एक ही चीज घुमड़ रही

थी। परसों दस बजे से पहले उसके साथ मुलाकात नहीं हो सकती। कल भी तो छुट्टी है।

वह सोच रही थी अगर वह भागकर चली न आती तो कल भी उसे उसी असह्य परिवेश के बीच रहना पड़ता। 'हमारे दुस्साहस ने ही हमारी रक्षा की।'

ममता ने अपने निजी सचिव सोमूजी को एक किनारे ले जाकर फुसफुसाकर कहा—"तेरी दीदी को क्या हो गया है कुछ समझ में नहीं आ रहा है। घंटा भर बाद ही वहाँ से वापस आ गयी। साथ में जो दायी आयी थी उसने कहा—'तबियत खराब है। इससे पूछा तो बोली 'तबियत क्यों खराब होगी। और फिर आते ही बाहर निकल गयी।"

"कहाँ जायेगी वहीं चिल्ड्रेन्स पार्क में बैठी होगी।"

"चिल्ड्रेन्स पार्क में क्या?"

"यों ही थोड़ी देर बैठेगी।"

"कुछ समझ में नहीं आ रहा है। उन लोगों के साथ कुछ मनमुटाव करके तो नहीं आयी?"

सोमू ने अपने बाजुओं के मसल फुलाते हुए रहस्य भरे ढंग से कहा—"हो भी सकता है। लगता है दीदी दोबारा ब्याह करना चाहती है।"

"क्या! क्या कहा तू ने?'

इंटर का छात्र सोमू अपने दोस्तों के साथ जीवन के रहस्य सीख रहा है। माँ से उसकी भी उतनी दोस्ती है। इसीलिए बोल पड़ा दख लेना। क्या जानमारू दोस्त जुटाया है दीदी ने भी।'

"दोस्त? दोस्त कहाँ से मिल गया उसे?'

"और कहाँ मिलेगा? आफिस का होगा। मिलने आया था। दीदी नहीं मिली तो उदास होकर चला गया।"

'मैं जानती थी। एक दिन यह तमाशा होगा। ऐसी पागल लड़की है। खुद अपने पाँव पर कुल्हाड़ी मार रही है।'

कमला का मन कर रहा है वह अपना सिर पीट ले, अपने बाल नोच डाले।

"मेरे लिए बड़ी मुश्किल है। मेरे दोस्त ताना मारेंगे। कहेंगे तेरी बहिन ऐसी है।"

काफी देर बाद पपा घर लौटी। बहुत देर तक मथन करके भी तय नहीं कर पायी कि क्या करती। परसों मुलाकात होते ही सारी बातें बता देगी या रत्नाकर के घर आने की बात को भूल जाने का बहाना करेगी। जैसे कुछ भी न हुआ हो। वह अगर कहे तो कहेगी—हाँ हाँ, भाई कह तो रहा था कि तुम गये थे। क्या बात थी? यही ठीक रहेगा।

मगर पपा कोई बहाना न बना सकी। रत्नाकर ने उस प्रसंग पर कोई बात ही न की। मुलाकात होते ही बोल उठा, "मिसेज राय, नौकरी छोड़ ही दीजिए आप। क्या बेकार में एक कुर्सी छेंका कर किसी बेकार की रोटी मार रही हैं?"

पपा ने आँख उठाकर उसको देखा।

और दो दिन से मन में सजाकर रखी बातें जाने कहाँ हवा हो गयी। वही हुआ, जो होता है। बल्कि उससे भी ज्यादा हुआ। रत्नाकर से निगाहें मिलते ही उसके ऊपर लदा सारा अवसाद, सारी दुविधा जाने कहाँ बिला गयी। पपा का मन जैसे असहाय हो उठा। उसे अपने आपसे डर लगने लगा।

इसके बावजूद पपा ने अपने स्वर और अपनी बातों को भरसक हल्का बनाये रखने की कोशिश करती रही। आत्मरक्षा का यही एक उपाय उसे सूझ रहा था। भारी बातों के ऊपर भारी बातें रखने से किस अतल में जाना पड़ सकता है कौन जाने।

पपा ने कहा—"दुनिया में लाखों बेकार घूम रहे हैं अकेले मेरे नौकरी छोड़ देने से कितनों का दुःख समाप्त होगा।"

रत्नाकर की आँखों में फिर उस समुद्र लहराता दिखायी दिया। रत्नाकर की आँखों के इस समुद्र से उसे डर लगता है। उसका दिल काँपता है।

'लाखों की बात को छोड़िये अगर एक अभागे के प्रति थोड़ा ध्यान दें तो कम से कम उसका दुःख तो मिटेगा।'

क्या पपा को यह समुद्र निगल कर ही मानेगा ? फिर भी जब तक डूब न जाये वह बचे रहने की चेष्टा करेगी। उसने कहा—"मैं क्या आपको 'परदु:खकातर' लगती हूँ ?

'एकदम नहीं। इस मामले में तो आप इसका विलोम ही लगती हैं। मगर हाँ, एक बात है।' एक पल रुककर सिगरेट धराने के बाद रत्नाकर ने कहा— दुःखी व्यक्ति अगर गाड़ी वाला, बाड़ी वाला और दौलत वाला हो तो बात अलग है। तब तो आप सुखी के दुःख से भी कातर हो जाती हैं।"

बातें करने का रत्नाकर का यह तरीका कुछ लोगों को बड़ा चुटीला लगता है पर पपा के लिए यही चरम आकर्षण की वस्तु है। उसका जन्म एक साधारण परिवार में हुआ था। उस परिवार में पिता बहुत कम बोलते थे और माँ का बातें करने का तरीका बेहद भोथरा और तुच्छ था। बातें करना भी एक कला है और साधारण सी बातों के भीतर मधुरता पिरोयी जा सकती है यह बात पपा नहीं जानती थी। पपा के भाग्य ने उसे जिस परिवेश में ठेल दिया था वहाँ बातों की लंबी चौड़ी खेती थी मगर उनमें जंगली घास उग रही थी। वहाँ जो दो सभ्रांत व्यक्ति थे उनसे कुछ आशा की जा सकती थी मगर पपा ने उन्हें कभी स्वस्थ नहीं पाया था। इसीलिए पपा रत्नाकर की बात करने की शैली से बहुत प्रभावित थी।

पपा ने अपने को हल्का करने के लिए हँसकर कहा—'हाय रत्नाकर कब आपका प्रमोशन वाल्मिकि के पद पर होगा ?"

रत्नाकर चकित हुआ। उसे लगा उसे रास्ते में पड़ा हुआ एक हीरा

अचानक मिल गया है। अतएव वह साहसी हो उठा। वह बोला—"देवी के वरदान पाने के पहले उसकी आशा कैसे करूँ? अभागे रत्नाकर को लगता है सारा जीवन डाकू की भूमिका में ही बिताना पड़ेगा।"

रत्नाकर के चेहरे पर उस समय न जाने क्या था कि हमेशा सावधान रहने वाली पपा भी अपनी सावधानता भूल गयी और उसने एक ऐसी रपटिली जमीन पर—पाँव रख दी जो सीधे अतल की ओर तो जा सकती थी हालाँकि एक क्षण पहले भी उसने यह नहीं सोचा था कि वह ऐसी असावधानी कर बठेगी। उसके मुँह से अचानक जो वाक्य जो फिसला वह था—'डाकुओं की भूमिका में भी आप कौन सी बहादुरी दिखा पाये हैं। यहाँ भी तो एकदम फ्ल्योर हैं।"

रत्नाकर एक बार और चौंक पड़ा फिर उठकर पपा के पास चला आया और आवेग भरे स्वर में बोला—'पपा आज कोई काम नहीं होगा। फाइलें गयी भाड़ में, उठो बाहर चलते हैं।

"बाहर कहाँ?'

"चूल्हे में! जहन्नुम में? स्वर्ग में? बहिश्त में जहाँ भी जा सकें।'

पपा ने अपने स्वर के कंपन पर बड़ी मुश्किल से काबू पाते हुए कहा—"डाकू महाशय, आसपास जो लोग बैठे हैं या घूम फिर रहे हैं, वे अंधे बहरे नहीं हैं।

"परवाह नहीं, उठो मैं कहता हूँ, उठो।

"क्या बचपना हो रहा है।"

'कसम है तुम्हें, कम से-कम आज तो मुझे बचपना कर लेने दो! मिसेस राय की अपनी खोल से अब तो बाहर निकल आओ।"

पपा ने स्फुट स्वर में कहा—"निकल तो आयी हूँ।"

'मैं पहले जाता हूँ मिस घोसाल को बता जाऊँगा तुम थोड़ी देर बाद आ जाना।

'मिस घोसाल से क्या कहोगे?"

'जो मुँह में आयेगा कह दूँगा।' और रत्नाकर निकल गया। थोड़ी

देर बाद पपा भी जरूरी काम का बहाना बनाकर निकल पड़ी।

रत्नाकर ने राधा मोहन बाबू के कमरे के सामने खड़ा होकर कहा—राय चौधरी बाबू मैं फूट रहा हूं थोड़ा मनेज कर लीजिएगा। सुना है मेरे न० पर लाटरी का फस्ट प्राइज निकल आया है।"

रत्नाकर तेजी से नीचे उतर आया। उसने देखा पपा ने एक टैक्सी रोक रखी है। पास जाकर बोला, "वाह! क्या तेज दिमाग है तुम्हारा? उस समय ठीक इसी चीज की हमें जरूरत थी। जानती हो तुम्हें लेकर क्या करने की इच्छा हो रही है? जी कर रहा है तुम्हारा हाथ पकड़ कर बच्चा की तरह उछलू कूदू।"

जब वे टैक्सी पर सवार हो गये तो एक समय रत्नाकर ने पपा से कहा, 'सुनो, मैं सोच रहा हूँ हम कितने बेवकूफ हैं, जीवन के इतने दिन यों ही गवा दिये।"

पपा ने कहा, "यह भी तो हो सकता है कि हम बेहद बुद्धिमान हों। दिनों को बेहिसाब खर्च न करके हमने बैंक में जमा कर रखा है।"

"शायद तुम ठीक कहती हो। मगर अब और देर नहीं करनी चाहिए। चलो दोनों मैरिज रेजिस्ट्रेशन आफिस चलें। आज ही नोटिस दे आयें।

सिर पर हाथ मार कर पपा ने कहा, 'हाय भगवान! इतने दिन बाद पड़ी भी तो एक पागल के पल्ले।"

'इसमें पागलपन की क्या बात है? जानती हो? कम से कम एक महीने पहले नोटिस देनी होती है। और फिर बालिग स्त्री के खिलाफ कोई आब्जेक्शन नहीं उठ सकता।"

"मगर गार्जियन तो आपत्ति कर सकते हैं। नहीं, गार्जियन नहीं, गुरुजन यानी घर के बड़े लोगों से तो पूछना ही चाहिए।"

"ठीक। इसीलिए तो कहा—क्या शापत्रेन है। जब जिस चीज की जरूरत है वही सुझाती हो। मैं भी भाई साहब की तरह सारा जीवन तुम्हारे भरोसे रोटी तोड़ता रहूँगा। अच्छा बासो, पहले तुम्हारे घर या

मेरे ?"

"पहले तुम्हारे।"

पपा जो कर रही है, जो कह रही है वह क्या सोच समझकर कर रही है ? पपा क्या अपने आप म है ? या नियति किसी बढियाई नदी की धार की तरह उसे एक अनिवाय दिशा मे ठेल कर लिये जा रही है ?"

कुछ पल पहले भी क्या पपा सोच सकती थी कि इस तरह आफिस का काम छोड कर वह बेहया की तरह टैक्सी म रत्नाकर के कधे पर सिर रखे कह रही होगी कि "डाकू, सचमुच तुम डाक ही हो। रत्नाकर नाम किसने रख दिया तुम्हारा ?

आह अपने को किसी के सहारे छोड देने का भी कितना अपूव सुख होता है। कितनी निश्चिन्तता है। पपा के भाग्य म यह सुख पाना लिखा था। अपने को निषेधो म अटकाय रखते रखते पपा ने उसे ही अपना जीवन मान लिया था। वह हमेशा नदी के किनारे किनारे चलती रही। नदी के बीच धारा मे अवगाहन का सुख तो जस उसके लिए था ही नही।

अचानक एक पल म क्या से क्या हो गया।

पपा को अपने आचरण पर चकित होने का भी समय नही मिला था। एक लहर आकर उसे बहा ले गयी थी।

क्या यह गत दो दिना की ऊब और दमघोटू वातावरण की प्रतिक्रिया है ? इन दो दिना म निरीह कमला चक्रवर्ती न कैसा अजीब वर्ताव किया था अपनी लडकी के साथ। उसके बेटे ने उम्र मे अपने से काफी बडी बहिन के साथ कसा व्यवहार किया था ?

पपा बगल के कमरे मे मा बटे के बीच चलने वाली बातचीत को साफ साफ सुना था। बीच मे सिफ चार इच की एक दीवार थी, बस।

'कौन कहगा ? किसे फुसत है ? सोमू चक्रवर्ती को कुछ बताना नही पडता। मैं तो उस दिन उस आदमी को देखकर ही समझ गया था कि दीदी के साथ उसका कुछ चल रहा है।'

'समझ गयी। तभी उन लोगा की इतनी चिरौरी मिनती के बाद

भी नौकरी छोडने की बात उसके दिमाग मे नही घस रही थी।

कमला के स्वर म हिंसा थी और यह हिंसा भाव आशा भग होने से आता है। बडे जतन से एक पौधे को खाद पानी देकर प्राय फल देन वाली स्थिति म आने पर उस अभागिनी लडकी ने उखाड फेंका था। इतन दिनो उन दो शोक सतप्त लोगो की छाती मे छुरी मार कर तू फिर विवाह मडप म बैठने की तैयारी कर रही है? तुझे जरा भी लाज नही आयी? एक बार भी तेरे मन मे यह बात नही आयी कि इससे दो-दो परिवारो के मुह मे कालिख पुत जायेगी?

मन के अदर यही सब आरोप, मगर मुह पर ताला बद। लडकी क लिए खाना परोस कर महरी से कहला दिया।

पपा न यह सब समझने का कोई भाव न दिखाते हुए सहज भाव स ही खाना खाया। आज छुट्टी का दिन है। आज तो सोमू के साथ बठकर खान का दिन है। देखा सोमू का खाना परोसा रखा है वह बालो मे कघी करने गया है तो कघी करने का काम खतम होन को नही आ रहा है। कघी का काम खतम हुआ तो घोये गये कपडे सूखा को दन म लग गया।

पपा क्या समझ नही रही थी कि देरी जान-बूझ कर की जा रही है? फिर भी पपा विश्वास करना नही चाहती। इसीलिए उसने सहज भाव स ही पुकारा—'अरे सोमू कितनी देर कर रहा है?

सोमू के कानो मे जसे यह पुकार पहुँची ही नही। इसीलिए शायद उसके बाद सोमू देह पर पाउडर मलने मे लगा रहा। पपा खाना खाकर उठ गयी।

इसी तरह बीते ये गत दो दिन।

कमला चक्रवर्ती का साहस नही हुआ था कि वह अपनी लडकी को बुला कर सीधे प्रश्न करे। फिर भी लडकी अब उसे जहर लगन लगी थी। और उत्तर पाडा वालो के लिए दु ख और लज्जा से उसकी छाती फट रही थी। मुहजली पता नही वहाँ क्या कह आयी है? कह रही थी कि सब खतम करके आ रही हू। उसका मतलब क्या है? क्या यह उनसे कह आयी

है कि दुवारा ब्याह कर रही है ?'

हालांकि कमला के पास उस अकालपक्व लडके की भविष्यवाणी के अलावा और कोई प्रमाण है नही, फिर भी उस बात को आसानी से उडा नही दे पा रही है। और कमला की आंखो के सामने उत्तर पाडा की गाडी म लडकी के सग आयी दाई के गभीर चेहरे को देख कर लगा था जरूर कोई गडबड है और उनका दिल कांप उठा था।

सोचा था तबीयत खराब का बहाना बनाकर चली आयी है इसलिए उसकी ससुराल वाले रुष्ट हुए हैं होना भी चाहिए। अगर लडकी खुद कहती है तबीयत क्या खराब होन लगी।

कमला मन ही मन अभागी लडकी के साथ वाक्युद्ध कर रही है। वह साच रही है—ता पपारानी, तुमने क्या यह समम लिया है कि हमारी ही गाद म बठ कर तुम हमारी ही दाढी नोचोगी ? ससुराल के साथ अपने सबध बिगाड कर आवारागर्दी कराग़ी ? इस भुलाव म मत रहना। मैं सख्ती करना भी जानती हूँ। सासू हमारे पक्ष मे ही है।

कमला अपने मन पर यही बोझ लिए घूम रही है। लडकी के साथ बातचीत बन्द है।

पपा इ ही परिस्थितिया म दो दिन से रह रही थी। मा चुप है लेकिन उसके चेहरे की सख्त रेखाए सब कुछ साफ साफ कह रही है।

इसी मानसिक स्थिति म पपा दफ्तर आयी थी।

अचानक क्या स क्या हा गया और वह इतना आगे बढ गयी कि रत्नाकर स कह उठी— पहले तुम्हारे घर चलते हैं।

रत्नाकर की भाभी यह समाचार सुनकर खुशी से उछल पडी। उसने देवर से मजाक किया—'भइया तुम तो बडे रगेसियार निकले। भीतर गुलगुले पकाते रहे और हम हवा तक न लगने दी।

उसने पपा का खूब आदर-सत्कार किया। खिलाया पिलाया और जाते समय याद दिलाया— 'शुभस्य शीघ्रम"।

फिर पपा वे विदा होते ही ब्याह के सामानों की लिस्ट बनाने बैठ गयी। मगर जरा एकांत पाते ही उसने अपने पति सुधाकर से कहा, "देवर जी को और कोई लड़की नहीं मिली। विधवा है वह भी कोई बात नहीं। विद्यासागर की आत्मा हमें आशीर्वाद देगी। मगर विधवा भी कैसी? सुहागरात भी नहीं हो पायी थी। वर कन्या दर्गा के मंदिर जा रहे थे पूजा करने। बीच में ही एक्सीडेंट और मर गया वर।'

"तब तो विधवा कहना ही नहीं चाहिए। उम्रदराज लड़की मान कर लो।' सुधाकर ने कहा।

यह बात तो है फिर भी मन में कुछ चुभ सा रहा है। ब्याह होते ही वर खतम, सात जन्मी ससुर अंधा और अपाहिज फिर भी लड़की एकदम साबुत बच गयी।"

'ये सब बेकार की बात हैं। जो होना था हो गया। एक ही घटना बार-बार थोड़ा ही होती है।'

फिर भी मन नहीं मान रहा। बस प्रेम बड़ा जबरदस्त है दोनों में। इसकी ससुराल बहुत बड़े घर में है। लड़का अकेली संतान था। सारी धन-दौलत तो इसे ही मिलनी थी। वे इसको प्यार भी करते हैं। हमारे रत्नाकर के लिए इतना कुछ छोड़ कर आ रही।'

'इसका मतलब है—दे आर मेड फार ईच अदर—यानी ये एक दूजे के लिए' बने हैं। इसका पहला व्याह तो एक एक्सिडेंट था। उसका असली पति तो रतनू ही है।' कह कर सुधाकर ने उस दिन का अखबार उठा लिया। पत्नी जानती है—अब बात बंद।

उधर कमला चक्रवर्ती का रुख एकदम उल्टा था। उसने कहा, 'भाग में सुख लिखा होता, तो पहले ब्याह में ही मिलता।'

और पपा ने जब कहा 'वह तुम्हें प्रणाम करना चाहते हैं' तो बोली 'रहने दे, मैं यहीं से आर्शीवाद दे रही हूँ।

पपा ने क्षुब्ध होते हुए भी हँस कर कहा, "एक नजर देख तो लो या उस पापी का मुँह भी नहीं देखना चाहती?'

"आहा ? यह कब कहा कि मुह नही देखूगी, मगर यह कोई नाई-पुरोहित वाला ब्याह तो है नही कि सब करमकांड करना होगा। रजिस्टरी के ब्याह मे माँ-बाप, भाई की तो कोई जरूरत होती नही। दोस्त मित्र सब काम करते हैं। हमारे कारण तेरा ब्याह तो न रुकेगा ?"

कमला का दिल टूट गया था। वह सोच रही थी कि नया ब्याह करके लड़की मुह पर कालिख पोतने जा रही है। अब उसके दर्वाजे पर बड़ी सी कार आकर कभी खड़ी नही होगी। उसके घर अब कभी इतना उपहार नही आयेगा कि वह पड़ोसिया तक का उपकृत कर सके। ऊपर से लोग निन्दा करेंगे। औरत जात का भोग सुख की इतनी लालच ठीक नहीं।

रत्नाकर दोनो पक्षा के गुरुजनो के मनाभाव अनभिज्ञ है। वह इतना ही जानता है कि उसके ब्याह से भैया भाभी परम प्रसन्न हैं, और पपा की माँ पुराने जमाने की शर्मीली औरत हैं इसीलिए दामाद के साथ बात चीत करने मे हिचक रही हैं। रत्नाकर प्रतीक्षा के दिना का जल्दी से ठेल कर समाप्त करना चाहता है।

मगर पपा का सब के मना भावो का ज्ञान है। यह औरता का सहज गुण है फिर भी पपा की खुशी मे कोई कमी नही है एक अनिवर्चनीय सुख म वह डूबी हुई है।

पपा ने कभी प्रेम का स्वाद नहीं चखा था। बाल प्रेम, किशोर प्रेम किसी प्रेम का भी उसे ज्ञान न था। माँ बाप, छोटा छोटा भाइ और स्कूल कॉलेज की सहपाठिनियो के लेकर ही उसके दिन बीते थे। युवावस्था की आरम्भिक दिन बीते थ दारुण चिन्ताओ म और परिवार के लिए दाल रोटी जोगाड करने के अप्राण चेष्टा मे। रोटी दाल का जोगाड होन ही एक और भयानक दुघटना उसके साथ घटी थी और निस्सहाय हो गयी थी। उसके पिता उस बहुत चाहते थे। जिस दिन पपा का बी० ए० का परीक्षा फल निकला था उस दिन अजित चक्रवर्ती इतने खुश हुए थे कि जसे उन्हें राज्य मिल गया हो। 'पिता अगर इतनी जल्दी हमे छोड नहीं जाते तो

मैं एम० ए० की पढ़ाई करती यह दुख आज भी पपा के रोम रोम मे बिंधा हुआ है।

पपा ने यह कभी नही जाना कि एक पुरुष की मुग्ध दृष्टि स्त्री के हृदय मे कैसा आलोडन कैसा मोह पैदा करती है। पपा ने यह कभी नही जाना था कि प्रेम के प्रतिदान का स्वाद इतना अदभुत होता है।

बेले घाटा से दफ्तर, दफ्तर से उत्तरपाड़ा और उतरपाड़ा से फिर दफ्तर और बेले घाटा के बीच चक्रघिन्नी बनी पपा के जीवन मे सपन देखने का और अपने जीवन के बारे मे सोचने का समय न था।

मगर अचानक इतने दिनो बाद जीवन अपने आप आकर उसकी मुट्ठी मे बद हो गया था। पपा जैसे एक सम्मोहन की स्थिति म चल रही थी। मां का बफ जसा ठढा व्यवहार और भाई की कोप दृष्टि उसपर काई असर नही डाल पा रही थी हालाकि उसन भाई से कहा था—"तू निश्चित होकर अपनी पढाई कर जब तक नौकरी नही हो जाती। अभी भी तेरे सब खर्चे मैं दूगी।" फिर भी सोमू को दीदी का ब्याह करना भा नही रहा है। उसे लग रहा है कि उसकी लुटिया डूब रही है।

लुटिया तो वाकई डूब रही थी। सोनू जानता है कि दीदी के आर्थिक सहयोग के आधार पर वह अपनी महत्वाकाक्षाओ की पूर्ति नही कर सकता। उसकी पढाई लिखाई इतनी उच्चकोटि की नही थी कि उसके बल पर वह आग बढ जाता। ऐसी परिस्थित म उसके सम्मन मुहल्ले का नामी दादा बन जाने के अलावा उन्नति का इससे कोइ बडा रास्ता नही था। पर अगर दीदी ब्याह न करती और राय कोठी के ऐश्वय की उत्तराधिकारिणी बन जाती तो क्या नही हो सकता था। वह उसे पढ़न लिखने के बहाने विदेश भी भेज सकती थी और फिर उसका भाई होने के नाते वह राय कोठी की धन दौलत और कारोबार का मैनेजर तो बन ही जाता इस तरह उसकी सभी महत्वाकांक्षाएँ पूरी हो जाती।

पपा के आफिस मे सब लोगो को यह खबर मिल गयी है। अनेक लोग

पपा और रत्नाकर का दाँत निपोड़ अभिनन्दन जता गये हैं। अब उन्हें साथ निकलने में कोई संकोच नहीं होता। व कहीं-न कहीं घूमने निकल जाते हैं वैसे रात तो अपने अपने घर में ही काटते हैं इस बीच दो छुट्टियाँ साथ साथ पड़ी। रत्नाकर ने प्रस्ताव रखा—"चलो दीघा घूम आयें।"

पपा से कहा—' नहीं मैं पूरे अधिकार के साथ शादी के बाद तुम्हारे कमरे में प्रवेश करूँगी।"

"ओहो ! मैं यह कहाँ कह रहा हूँ कि हम दोनों एक ही कमरे में रहेंगे ? हम न होगा दो कमरे बुक कर लेंगे। हे देवी ! मैं आप को विश्वास दिलाता हूँ कि आप का कौमार्य अक्षुण्ण रहेगा।"

' असभ्यता मत करो, दूसरे लोग विश्वास करेंगे ?'

"दूसरे लोग तो अविश्वास करने को पूरी तरह प्रतिबद्ध हैं।'

"तो फिर उन्हें मौका देकर हम अपनी हत्या करवाने क्या जायें इससे तो यही अच्छा है कि हम दिन भर और देर रात तक यहीं घूमे-फिरें।"

'ठीक है देवी जी, आपकी आज्ञा शिरोधार्य है।"

"नाराज हो गये क्या ?"

' क्या हनुमान जी की तरह हृदय चीरकर दिखाना पड़ेगा, दीघा नहीं जायेंगे तो न सही यहीं पर घूमने फिरने का प्रोग्राम बना डालो।"

उन दो दिनों में व फिर उन्हीं पुरानी जगहों पर घूमते फिरे। मगर सब कुछ कितना नया नया लग रहा था। मन में से जैसा कोई इस का अजस्र सोत उमड़ रहा था। और वे दोनों उसकी उत्ताल तरंगों पर झूल रहे थे।

मगर दोनों ही भीतर की उस रस तरंग की भीतर ही पीते हुए बाहरी बातों में अपने को फसाये रहे।

"जानती हो, भाभी ने इतनी साड़ियाँ और चीजें खरीद रखी हैं तुम्हारे लिए कि मेरे लिए खरीदने को कुछ बाकी ही नहीं रहेगा।"

पपा काँप उठती है। उसके पास तो पहले ही अनगिनत साड़ियाँ है। उनका क्या करेगी वह। फिर सोचा, वह सब सोमू की बहू पहन लेगी।

फिर बोली "इतनी साड़ियाँ क्या होगी ? एक बार मे तो एक ही पहनी जाती है।"

'बाप रे। यह तो ब्रह्मवादिनी मत्रयी जसी बात है। भगवान ने आदमी को एक साथ दो चीजो का उपभोग करने की क्षमता नही दी है फिर भी आदमी अपनी जेब के अनुसार दो चार गाडियाँ, दस पाँच मकान दो चार सौ पोशाकें और और दम्भतापूर्व मुस्कान के साथ वाक्य पूर्ण किया रत्नाकर ने ' पाँच-सात सौ बेगम रखता रहा है अपने हरम मे।'

"तुम्हारी सब बातो मे शरारत होती है। कहकर आखो म रोशनी भर कर पपा उसकी तरफ देखती है।

दिन जैसे पख लगाकर आसमान मे उड रहे है। टेबल पर रखी फाइलें अब इतनी जरूरी नही लगती। 'चलो, चलते हैं। जो रह गयी हैं कल निबटा लेंगे।

आफिस से निकल कर सडक म आते ही पपा न एक दिन रत्नाकर से कहा, "तुम्हारे साथ मेल जाल बढाने दिन पर दिन मेरा पतन हो रहा है, यह अब मैं अच्छी तरह समझ रहा हूँ। तुम्हरी तरह अब टेबुल पर पडी फाइलो को मेरी भी छूने की इच्छा नही होती।'

' सही कहा है कि कुसगत का फल बुरा होता है।"

"हम लोगो को एक साथ निकलत देखकर आफिस के लोग मुह फेरकर मुस्कराते हैं।"

"अरे ! हँसन दो। आदमी का आनद दन जसा पुण्य का काम कोइ नही होता।"

'अच्छा, इसके बाद भी तो हम दोनो को एक ही आफिस मे एक साथ घुसना होगा। सोचकर बडी शम आ रही है।"

"कमाल है ! तुम क्या चाहती हो हम शादी के बाद भी अलग अलग आफिसो मे जाने लगे।"

"धत ! यह थोडे ही कह रही हूँ। कह रही हू शरम लगेगी।

' मुझे तो ठीक उसका उलटा लग रहा है। सोचकर बडा गौरव मह

सूस हो रहा है। एसा रत्न मेरे जैसे अकिंचन के गले मे पडा होगा।"

"तुम तो डाकू ठहरे। रत्न को लूट लिया जोर जबरदस्ती।"

"ऐ, ज्यादा बात मत करो, वना सडक पर ही डाका डालने लगूगा।" रत्नाकर ने पपा का हाथ पकड लिया।

"आह! तुम भी कसे आदमी हो।" पपा ने अपना हाथ छुडाकर डाँटते हुए कहा।

"बाकी पर्दे पर देखिएगा।"

सडक पर चलते चलते अचानक किसी भी दिशा मे जाने-वाली बस म सवार हो जाना और फिर किसी ओर बस से वापिस रत्नाकर के लिए एक मजेदार खेल था।

पपा परेशानी होती, नाराज होकर कहती, "क्या कर रहे हो? घर से एकदम उल्टी ओर जाने-वाली बस मे क्यो चढ रहे हो?"

"यही तो मजा है।" रत्नाकर कहता। "अच्छा यह बताओ, आदमी जब प्रेम करना शुरू करे तो उसे क्या क्या करना चाहिए?"

"मतलब?"

"मतलब यह कि जसे सिनेमा मे या कहानी की किताबो मे जैसा बताया जाता है—काफी हाऊस, बोटानिकल गार्डेन, डायमड हावर, काकद्वीप, फाइन आटस एक्जिबिशन या शभुमित्र का नाटक देखने चाहिए या फिर ।"

पपा दीप्त मुख से कहती है, "चुप करो तुम? क्या नया प्रेम कर रहे हो मैं तो शुरू से ही समझ रही थी तुम ।

"सच, तुम्हें पता चल गया था?"

"पता नही चलेगा?"

"और तुम?" रत्नाकर आतुर होकर पूछता है।

"मैं तुम्हें क्या लगता था?"

"जो लगा था उसी पर तो भविष्य का महल खडा कर रहा था।"

कभी किसी पार्क में घंटा बैठे व घड़ी की सुइयों का इशारा अनदेखा करते हुए चने, दही भल्ले या मूगफली खाते हुए अगल बगल बातें करते रहते।

वैसे पपा के मन में जरूर घड़ी की सुइयाँ एक सीमा के बाद चुभने लगती थीं और बीच बीच में रत्नाकर से चलने का तगादा करती थी पर रत्नाकर एक न सुनता।

एक दिन 'शादी के बाद हनीमून कहा जायेंगे' का प्रसग आ गया।

'मैं तो कलकत्ता छोड़कर कहीं गयी ही नहीं। मेरे लिए तो सब नया है चाहे पुरी हो चाहे काशी, चाहे मथुरा वृन्दावन?"

"माइ गॉड! हनीमून मनाने तुम काशी वृन्दावन जाओगी?'

क्या, इसमें बुराई क्या है? तीर्थस्थान होने से ही उनमें कोई कमी आ गयी? तो फिर पुरी को क्या छोड़ दिया? देखती हूँ बहुत से लोग शादी के बाद पुरी जाते हैं।'

"वह तो समुद्र के कारण। मुझे पुरी पसंद नहीं है। हर समय भीड़ रहती है।'

"तो वृन्दावन चलो। कृष्ण की चिर प्रेम लीला का स्थल है।"

"हटाओ! कोई हनीमून मनाने वृन्दावन नहीं जाता। दार्जिलिंग चलते हैं क्यों?'

"वहां कौन-सी निर्जनता है? वहाँ भी तो लोग भीड़ किये रहते हैं।"

'फिर भी पहाड़ों का स्वाद ही अलग है।"

'तुमने तो बताया था तुम वहां जा चुके हो।"

'अरे उस जाने और इस जाने में फर्क है। नहीं तुम नहीं सुधरोगी।"

"तुम्हारी किस्मत? क्या कर सकते हो।

"अगर जेब और दफ्तर साथ देते तो पृथ्वी के स्वर्ग कश्मीर चलते, मगर ।"

तो क्या हुआ, हम पास में संथाल परगना के किसी गाँव में चले

जायें। रेलवे रिजर्वेशन का कोई झगडा नही दो महीने पहले से होटल या रेस्ट हाउस बुक कराने का कोई थमेला नही ?"

"और खाना पीना ?

'क्यो, एक कमरे की व्यवस्था हो जाय तो सब हो सकता है। दाना बाजार से सामान लायगे, मिल जुलकर खाना पकायेंगे और मिलकर जो भी जला पका हो खायेंगे। कितना मजा आयगा ?'

"जला-पका क्यो ?"

"इसलिए कि माँ ने कभी मुझे रसोई घर म घुसने ही नही दिया।"

"यह भी कोई प्राब्लम नही है। मैं फाउन्ट क्लास आमलेट बनाना जानता हूँ। सच, तुम्हारी आइडिया बहुत अच्छी है। सोचकर ही रोमाच हो रहा है। एक थैला ले लेंगे और न होगा तुम्हा हैंडबग इस्तेमाल कर लेंगे ।"

पपा हँस पडी। कौन जानता था पपा ऐसे खुले गले से हँस सकती है ? खुद पपा भी नही जानती थी।

इसी तरह की बाते करते थे। इन्ह बाते मानें तो बाते है अनगल प्रलाप कहें तो भी कट सकत हैं।

एक दिन लतिका ने देवर से कहा, "किसी तरह यह कार्तिक का महीना बीत जाय तो बडा अच्छा हो। कम से कम मैदानों, पार्कों और निर्जन स्थानो म भटकने स तो हमारे देवर को छुटटी मिले।'

रत्नाकर शरमा गया, बोला "सच, भाभी, हम लोग तुम्हे बहुत परेशान कर रहे है। दर असल ।'

'रहने दो। मुझे असल बात बताने की जरूरत नही। खुद कभी शराब नही पी तो क्या पीने वाले नही देखे हैं क्या ? चलो, खाना ठडा हो रहा है।"

मगर पपा की समस्या का समाधान इतना आसान न था। वह देर से घर लौटती तो सोमू दर्वाजा खोलता और कहता, 'दीदी लगता है ब्याह के

लिए पसे जमा करने के लिए आजकल सब ओवर टाइम खट रही हो।'

कमला भी बेजार होकर कहती, "घर की रोटी-तरकारी रुचेगी ? या होटल म 'खाना' हो चुका है ?"

मगर पपा पर इन तानों—तिश्ना का कोई असर न था। वह सोच रही थी और कितने दिन हैं ही ।"

इसके बाद ?

शायद पपा के सिरजनहार न उसका भाग्य लिखते समय कोई गलती कर दी थी या वह भयानक गुस्म म था। वर्ना क्या उसके ही जीवन मे ऐसी विचित्र घटनाएँ होनी थी।

ब्याह की तिथि-तय हो चुकी थी। दोना ने पन्द्रह पन्द्रह दिन की छुट्टी ले ली थी। इन्ही पन्द्रह दिना म ब्याह और हनीमून दोना ही निब टाना था। इससे ज्यादा छुट्टी नही मिल सकती थी। चलो, इतन से काम चला लेंग। एक अद्भुत रोमांच लिए पपा घर आयी। कल स दफ्तर म रत्नाकर क साथ मुलाकात नही होनी थी। न हो, परम प्राप्ति की सभावना से मन भरा-भरा था।

मगर घर मे घुसते ही कमला चक्रवर्ती ने लडकी के सिर पर पहाड तोड दिया, "कानूनन तू अभी भी उत्तर पाडा के राय कोठी की बहू है। उन लोगो को शायद तुम्हारी नयी योजना का पता नही है। इसीलिए उन्होन एक सूचना भिजवायी है।"

पपा ने माँ के चेहरे की ओर अवाक होकर देखा। सासू को आन दे।"

पपा ने इस व्याकुल पुकार पर कान नही दिया बाहर आकर जो पहली टक्सी दिखायी दी उस रोक कर बठ गयी और उत्तरपाडा चलने को कहा।

जब वह पहुची तो वहाँ का दृश्य उठी। चारो ओर बडे बडे बल्ब जल रहे थे। कोठी स

जगमगा रहा था। कोठी के बाहर पूर्णिमा का शव अर्थी पर रखा हुआ था। सुहागिन पूर्णिमाराय का शरीर लाल बनारसी साडी म लिपटा था और उनकी देह पर फूल मालाएँ लदी हुई थी। माँग म सिंदूर की मोटी रेखा थी और दोनो पाँव मे आलता लगा हुआ था जसे कोई देवी की प्रतिमा हो। पपा आश्चय से उस मुख को देखती रही। क्या इतनी सुन्दरी थी पूर्णिमाराय इतनी अलौकिक! थोडी देर अपलक दृष्टि से पपा उसे कमनीय माल्य को देखती रही।

कुछ ही दिन बाद ऐसी ही साज-सज्जा म पपा भी अलौकिक होने वाली है। ऐसी ही बनारसी साडी, ऐसी ही सिंदूर से भरी माँग, ऐसे ही आलते से रगे पाँव और सर्वांग म फूलो का सम्भार।

क्या यह महिला पपा की उस आसन्न सजावट को चुराकर भागी जा रही है?

उस अलौकिक सौंदय की ओर और एक जोडी आँखें अपलक ताक रही हैं यद्यपि उन आँखो मे रोशनी नही है। अर्थी के सिरहाने उन्ह एक कुर्सी पर बैठा दिया गया है। अर्थी पर एक हाथ रखे वह काठ की मूर्ति की तरह बठे हैं।

चारो तरफ भीड है। बागीचा अनगिनत लोगो से भरा हुआ है। पपा आकर खडी है फिर भी कोई उसकी ओर ध्यान नही दे रहा है। सब अपने मे व्यस्त हैं। इसी बीच पूर्णिमाराय की अर्थी के चारो ओर ढेर लोग इकट्ठा हो गये। पूर्णिमाराय का मुख पपा की अपलक दृष्टि से ओझल हो गया।

और तभी एक आत कठ का हाहाकार सुनायी पडा— 'पूर्णिमा, पूर्णिमा एक बार बोल दो, तुम्हारे बिना मैं क्या करूँगा।"

कुछ लोग उस अधे और अपाहिज आदमी को कोठी के अन्दर ले गय। दूसरे लोग फूलों के भार से लदी अर्थी उठाकर गेट के बाहर चले गय।

पता नही कौन से लोग पपा के हाथ पकडकर कोठी के अन्दर ले

गये। धूप और अगर की गन्ध कोठी में भीतर तक पपा का पीछा करता रहा। कोठी के गलियारों में, दालानों में, कमरों में हर जगह जैसे एक वाक्य लगातार गूँजता रहा—'अब मैं क्या करूँगा अब मैं क्या करूँगा अब मैं ।

दस रात गये जब लोग श्मशान से लौट आये तो किसी ने प्रभातसूय को बताया कि पपा आ गया है।

प्रभातसूय सारी रात बैठे रहे थे। एक समय उनके पाँव पर पतली उँगलियों का स्पर्श हुआ। कोई पाँव छूकर चरण प्रणाम कर रहा था।

प्रभातसूय चौंक उठे और टूटे स्वर में पूछा—'कौन ?' पीछे से गुप्ता की माँ ने धीमे से कहा—"बहूरानी हैं।'

'बहूरानी !"

प्रभातसूय का गला आते और गम्भीर सुनायी पड़ा।

"कब आयी ? उन्होंने पूछा।"

'शाम को ही आ गयी थी।'

प्रभातसूय ने उसी तरह शान्त गम्भीर स्वर में कहा—"और तुम्हें परेशान करने गया ? मैंने तो तुम्हें नहीं बुलवाया था ?"

पपा ने धीमे गले से कहा, "मैं आपकी मनमानी करने वाली बेटी हूँ। अपने मन से चली गयी थी, बिना बुलाये चली आयी।'

एक कमजोर हाथ ऊपर उठा। पपा ने उन हाथों को अपने दोनों हाथों में थाम लिया।

"यह असम्भव है। यह हो ही नहीं सकता। मत भूलो कि नोटिस दी जा चुकी है।" रत्नाकर ने कहा।

पपा ने अजीब हँसी हँसकर कहा, "कितने ही कारणों से शादियाँ टूट जाती हैं। मान लो लड़की की मौत हो जाय। जाकर अपने भाई-भाभी से यही कह दो।"

"पपा, यह क्या कह रही हो। खुद को पहचानने की कोशिश करो। अचानक उदारता के नशे मे अपना सवस्व दान करने का सामयिक पागलपन खतम होगा तब क्या होगा? तब तुम पछताओगी।"

"कोई बात नही। किसी तरह दिन कट ही जायेंगे।"

"दिन काटना ही तो जीना नही है पपा।"

"मैं वह सब नही जानती।"

"पपा, जरा सोचो तो तुम क्या कर रही हो? तुम एक शोकग्रस्त, अंधे और अपाहिज आदमी की सेवा मे अपना जीवन क्यो बबाद करना चाहती हो इतनी बडी गलती मत करो। उनके पास पसो की कमी नही है। दो चार नर्सें रख सकते हैं।"

"नही रत्नाकर, यह नही हो सकता।"

"क्यो नही हो सकता? मुझे समझाओ, क्या नही हो सकता? पसे देकर कौन सी सुविधा नही जुटाई जा सकती?"

"सुविधा ही सब कुछ नही है।"

"तुम्हारे लिए कौन सी चीज कुछ है और कौन सी चीज 'कुछ नही' मेरे लिए यह समझ पाना असम्भव है। तुम आखीर मे धन सम्पदा के लोभ ही अटक गयी? घर की मालकिन मर गयी तो तुम्हें घर की नयी मालकिन बनने की लालच हो आयी।

"पपा उदास भाव से हँसी और बोली, "लोग तो एसी ही बातें सोचने के आदी है।"

"लोगो की बात छोडो। मेरी बात सोची है एक बार भी?

चश्मे के पीछे से रत्नाकर की गहरी काली आखें आग की तरह जल रही थी।

पपा ने बिना कुछ कहे सिर नीचे कर लिया फिर कापते गल से कहा, "सोचने की हिम्मत नही हुई।"

'तुम्हार इस निणय को क्या कहते है जानती हो? समझती हो कि नही कि इसे विश्वासघात कहते हैं।'

पपा ने मुस्कुराकर कहा, ' यही मेरी नियति है।'

"बुद्धिहीन व्यक्ति का यही अंतिम आश्रय है।" यह कह रत्नाकर तेजी से चला गया।

उस दिन गुस्सा करके चला गया था रत्नाकर। फिर एक दिन आया। अब तो राय कोठी जाकर ही पपा से भेंट की जा सकती थी। आफिस जाना छोड़ दिया है पपा ने।

उस दिन बेलपाड़ा गयी थी पपा, माँ के बुलाने पर। रत्नाकर से वहीं मुलाकात हुई थी। आज वह उत्तरपाड़ा आया है मिलने। आफिस का एक सहकर्मी अचानक किसी के आफिस जाना बन्द कर देने पर हाल चाल लेने आ सकता है। इसमें कुछ भी अस्वाभाविक नहीं है।

रत्नाकर ने कहा ' पपा मैं फिर आया हूँ बेहया बनाकर। अभी भी वक्त है अभी भी सोचकर देखो इस जीर्ण महल में तुम अपना जीवन कैसे काटोगी ?"

पपा ने हँसकर कहा, ' यहाँ जीवन काटने के लिए काम की कमी नहीं है। इनके मकानों के किराये का हिसाब रखना, पूजाघर की देखभाल करना, सोने चाँदी के बर्तनों को संदूक में सम्भालना, बड़ी बड़ी आयल पेंटिंग और पोसलीन की मूर्तियों की झाड़ पोंछ करना, यहाँ के कर्मचारियों के कामों का सुपरविजन करना। और भी कितने ही काम हैं ? जीवन काटने का पूरा इन्तजाम है।"

"यह तो है।" रत्नाकर ने क[illegible] पर

भावना से ग्रस्त होकर खुद को देवी म[illegible]

नजर रखकर देखो, तुम एक हाड़ माँस [illegible]

पपा फिर [illegible] बात है

औरत हूँ यही [illegible]

पपा ने मुस्कुराकर कहा, "यही मेरी नियति है।"

"बुद्धिहीन व्यक्ति का यही अंतिम आश्रय है।" यह कर रत्नाकर तेजी से चला गया।

उस दिन गुस्सा करके चला गया था रत्नाकर। फिर एक दिन आया। अब तो राय कोठी जाकर ही पपा से भेंट की जा सकती थी। आफिस जाना छोड़ दिया है पपा ने।

उस दिन बेलेघाटा गयी थी पपा, मां के बुलाने पर। रत्नाकर से वहीं मुलाकात हुई थी। आज वह उत्तरपाड़ा आया है मिलने। आफिस का एक सहकर्मी अचानक किसी के आफिस जाना बन्द कर देने पर हाल चाल लेने आ सकता है। इसमें कुछ भी अस्वाभाविक नहीं है।

रत्नाकर ने कहा "पपा मैं फिर आया हूँ बेहया बनाकर। अभी भी वक्त है अभी भी सोचकर देखो इस जीर्ण महल में तुम अपना जीवन कैसे काटोगी?"

पपा ने हँसकर कहा, "यहां जीवन काटने के लिए काम की कमी नहीं है। इनके मकानों के किराये का हिसाब रखना, पूजाघर की देखभाल करना, सोने-चांदी के बरतनों को सदूक में सम्भालना, बड़ी बड़ी आयल पेंटिंगों और पोसलीन की मूर्तियों की झाड़ पोछ करना, यहाँ के कर्मचारियों के कामों का सुपरविजन करना। और भी कितने ही काम हैं? जीवन काटने का पूरा इन्तजाम है।"

"यह तो है।" रत्नाकर ने कहा, "पर पपा, तुम एक अयथार्थ भावना से ग्रस्त होकर खुद को देवी मान कर चल रही हो यथार्थ पर नजर रखकर देखो, तुम एक हाड़ माँस की बनी औरत हो।"

पपा फिर हँसी "यही तो बात है रत्नाकर। मैं हाड़ मास की बनी औरत हूँ यही मेरी मुश्किल है।